ISSN 0974-1100

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ - A Social Science Research Journal

Peer Reviewed Bilingual International Research Journal
The Journal indexed in the UGC-CARE list.

वर्ष 28 अंक 111 ❊ अक्टूबर-दिसम्बर, 2022

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी प्रकाशन

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

PŪRVADEVĀ A Research Journal of Social Sciences

Peer Revied Bilingual International Research Journal
This Journal is included in the UGC-Consortium for Academic and Research Ethics

वर्ष 28, अंक 111 अक्टूबर-दिसम्बर, 2022

❒

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन

❒

प्रकाशक

पी.सी. बैरवा

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी

बाण भट्टमार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन (म.प्र) 456010

दूरभाष (0734) 2518737

E-mail : mpdsaujn@gmail.com Website : www.mpdsa.org

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

परामर्श मण्डल

डॉ. प्रकाश बरतुनिया
कुलाधिपति– बाबा साहेब अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ. अनिल दत्त मिश्रा
प्रतिष्ठित गांधीवादी विद्वान व वरिष्ठ उपाध्यक्ष, सुलभ अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक सेवा संगठन, नईदिल्ली

डॉ. रामगोपाल सिंह
पूर्व आचार्य, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, महू (म.प्र.)

डॉ. जयप्रकाश कर्दम
वरिष्ठ साहित्यकार एवं सम्पादक, दलित साहित्य वार्षिकी, नईदिल्ली

डॉ. रमेशचन्द्र जाटवा
पूर्व अतिरिक्त संचालक, उज्जैन संभाग, उच्च शिक्षा विभाग, मध्यप्रदेश

डॉ. डी. डी. बेदिया
आचार्य एवं निदेशक, व्यवसाय प्रबंध संस्थान, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

सम्पादक मण्डल

डॉ. ज्ञानचन्द्र खिमेसरा
पूर्व आचार्य अर्थशास्त्र व प्राचार्य, शास.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर

डॉ. प्रभा श्रीनिवासुलु
पूर्व आचार्य इतिहास व प्राचार्य, शास. माधव महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

डॉ. शैलेन्द्र पाराशर
पूर्व आचार्य समाजशास्त्र व अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर पीठ, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. एच.एम. बरूआ
पूर्व आचार्य, समाजशास्त्र, शास. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन

डॉ. प्रेमलता चुटैल
पूर्व आचार्य, हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन

डॉ. अरूण कुमार
प्राध्यापक,राजनीति विज्ञान, शासकीय तिलक महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)

प्रधान सम्पादक

डॉ. हरिमोहन धवन
आचार्य, राजनीति विज्ञान व पूर्व प्राचार्य, उच्च शिक्षा विभाग, (म.प्र.)

प्रकाशक : पी. सी. बैरवा

© स्वात्वाधिकारी : मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी,
बाणभट्ट मार्ग, सेन्ट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन (म.प्र.)

इस अंक का मूल्य रूपये 150/–

वित्तीय सहयोग

भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद, नईदिल्ली

सम्पादन व प्रकाशन सर्वथा अवैतनिक एवं अव्यवसायिक

वर्ष 28, अंक 111 **अक्टूबर - दिसम्बर, 2022**

पूर्वदेवा

सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

वर्ष 28 अंक 111 अक्टूबर–दिसम्बर, 2022

❐ अनुक्रम ❐

1. 21 वीं सदी में साठोत्तर हिन्दी निबंधों का योगदान
– डॉ. रितेश बडगुर्जर 1

2. नंदकिशोर आचार्य की कविताओं में पर्यावरणीय चिंतन
– श्रीमती संगीता कुमार 10

3. 1857 की क्रान्ति में त्यागियों के पाँच बागी गांवों का योगदान
– डॉ.सय्यदा बेगम 17

4. जंगल जहाँ से शुरू होता है उपन्यास में आदिवासी जीवन
– मयुरी मजूमदार 24

5. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की वृतिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल के प्रभाव का अध्ययन
– गीतिका अग्रवाल, डॉ.ज्योत्सना गढपायले, डॉ. आरती मिश्रा 30

6. वर्तमान परिदृश्य में भारत में विवाहेत्तर सम्बन्ध एवं कानून एक समाजशास्त्रीय अध्ययन – सुबोध कान्त 36

7. परम्परा का मूल्यांकन और तुलसीदासः दलित सौन्दर्यबोध के आईन में
– अंकित कुमार वर्मा 46

8. उत्तराखण्ड में महिला सशक्तिकरण की चुनौतियाँ तथा सम्भावनाऐं
– डॉ. रवि जोशी 52

9. डॉ. भीमराव अम्बेडकर की महिलाओं के प्रति अर्न्तदृष्टि सामाजिक–धार्मिक सुधार के संदर्भ में –माधवी धुर्वे, प्रेमकुमार नाईक 64

10. महिला अधिकारों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन
– डॉ. अमित कुमार जोशी 71

11. प्रतीक के रूप में बौद्ध स्तूपों का दार्शनिक विश्लेषण
– राजकिशोर यादव 78

12. Unearthing New Dimenstion in Dalit Literature A study of Mudnakudu Chinnaswamy's Selected Poems
-Dr. Anshu Gagal, Dr. Barnali Saha 83

13. Education for Social Transformation : A study of Ambedkar's Perspective -Dr. Ujjwala Sadaphal 92

14. A study on personal financial planning of salareid employees at Nashik city -Dr. Nutan Nana Thoke 101

15. The future of Caste System in India: An Introspection
- Dr. Biswanath Sarkar 106

16. Analytical study of factors impacting traditional purchasing in Pune city -
-Dr. Rita Chaudhari, Dr. Jayashree V.Bhalerao, Yateen Nandanwar 116

17. Evolution towards Just money: A tool for inctusive development
-Dr. Devangi Rohan Deore 122

18. Caste Humiliation and Identity in Academic institution : A Qualitative Study of Sheduled Caste Men -Mr. Kailash 128

19. Interface between Gandhi and Ambedkar In Understanding Caste
-Dr. Rajesh Kota, Dr. Ravi Sabavath 138

20. Study of late Harappan Craft Industry and Skill Development in the Saraswati Basin -Dilip Kumar Kushwaha, Prachi Ranga 143

21. Xinjiang Conflict: China's Repressive Policy Against Uyghurs
– Ashutosh Kumar Singh 152

पूर्वदेवा में प्रकाशित लेख एवं उनमें व्यक्त विचार लेखकों के निजी विचार है.
सम्पादक व प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है.

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 1–9

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

21 वीं सदी में साठोत्तर हिन्दी निबंधों का योगदान

डॉ. रीतेश बडगुर्जर
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, एस.पी.एम. शासकीय कालेज, भोपालगढ़, जोधपुर
E-mail : lokeshkirad@gmail.com Mob.9115022668

सारांश

साहित्य रूप की दृष्टि से हिंदी में निबंध का जन्म और विकास आधुनिक युग की देन है। साहित्य के अनेक रूपों के साथ निबंध रूप का आविर्भाव अनेक कारणों से हुआ– राष्ट्रीय जागरण, देश प्रेम, व्यक्ति स्वातंत्र्य, अन्तर्राष्ट्रीयता, वैज्ञानिक मशीनों का प्रयोग (औद्योगिक क्रांति), आवश्यकताओं की वृद्धि, गद्य का प्रचलन, मुद्रण कला का प्रचार पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन और अंग्रेजी साहित्य का संपर्क आदि। इन सब कारणों से निबंध रचना को विशेष प्रोत्साहन मिला क्योंकि इस विधा के माध्यम से लेखक अपनी बात पाठकों तक सीधे पहुंचा सकता था। हिंदी निबंध की शुरुआत उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से मानी जाती है। लेकिन इसका महत्व 21वीं सदी में देखने को मिलता है। निबंध की आरंभिक परंपरा में भारतेंदु युग के लेखकों से भले ही हुआ था, लेकिन उसका अधिक मात्रा में बोल–बाल समकालीन युग में हुआ था, क्योंकि उन्होंने विषय, शैली और भाषा तीनों स्तरों पर निबंधों में नये प्रयोग किए किंतु निबंधों का प्रौढ़ रूप पहले के निबंधकारों से प्राप्त किया। इस दौर में जहां एक ओर भाषा का मानक रूप निर्मित हुआ, वहीं दूसरी ओर चिंतन में प्रौढता और शैली में परिष्कार भी हुआ। हिंदी निबंध के विकास में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेन्द्र इत्यादि मूर्धन्य निबंध लेखकों के मार्गदर्शन में, उनके संरक्षण में हिन्दी निबंध ने विकास के विविध सोपानों को पार किया है। आज वह विषय–विस्तार और प्रतिपादन–शिल्प दोनों ही दृष्टियों से अत्यन्त समृद्ध है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य में वैयक्तिता ने जोर पकड़ा है। निबंध भी इस ओर अग्रसर हुआ है। व्यस्तता और संकुलता के इस युग में विचारों के प्रचार के लिए निबंध की उपयोगिता बढ़ रही है। उसमें नित्य नूतन प्रयोग हो रहे हैं। आज का हिन्दी निबंध उत्कर्ष के सोपान पर है और उसका भविष्य उज्ज्वल है। परन्तु अभी भी अर्थशास्त्र एवं विज्ञान जैसे गूढ़ शास्त्रीय विषयों पर साहित्यिक निबंध लेखन का क्षेत्र उपेक्षित है, इस ओर हिन्दी निबंधकारों को अपनी लेखनी उठानी चाहिए। हिन्दी निबंधकारों ने विचार, शैली और भाषा तीनों स्तरों पर हिंदी निबंध को उच्च स्तरीय स्वरूप प्रदान किया।

मूल शब्द– हिन्दी साहित्य, साठोत्तरी निबंध, निबंधकारों, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेन्द्र, विचार, शैली और भाषा।

प्रस्तावना

21 वीं सदी में साठोत्तरी शब्द का प्रयोग व्यापक एवं विविध अर्थों में होने लगा है। कहीं इस शब्द को साठोत्तरश नाम से भी अभिहित किया गया है। साठोत्तरी हिन्दी निबंधों में एक नई पहचान उभकर सामने आई है। 21वीं सदी में भारत का चिन्तन भारतीय तथा विदेशी संस्कृतियों के टकराव का चिन्तन है। दुर्भाग्य से स्वतंत्र भारत की बागडोर उन हाथों में आई जो कि पश्चिमी संस्कृति को पूजते थे। भारत में जब कभी आधुनिकीकरण की बात चली तो बड़े शहरों का विकास हुआ। शिक्षा का स्तर उठाने के नाम पर अंग्रेजी का प्रचार–प्रसार किया गया। जीवन स्तर ऊँचा उठाने के नाम पर घूँसखोरी, रिश्वत चोरबाजारी, भ्रष्टाचार बढ़ा। धीरे–धीरे आलोक स्तंभ लुप्त होते चले गए और अंधा–युग उतरता चला गया। साठोत्तरी हिन्दी निबंध साहित्य में आस्था और विश्वास के स्थान पर अनास्था और अंधकार का स्वर ही अधिक तीव्र दिखाई पड़ता है।

उपर्युक्त साहित्य जीवन मूल्यों से जोड़कर, राजनीति, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक समस्याओं के प्रति जन–साधारण का ध्यान आकृष्ट करता है।[1] हिंदी की इक्कीसवीं सदी के इस आरंभिक समय को निस्संकोच गद्य का समय कहा जा सकता है। गद्य इसमें अब खुल और खिल रहा है। इसका रचनात्मक उपयोग जैसा अब हो रहा है वैसा पहले कभी नहीं हुआ। हिंदी में गद्य का यह विस्फोट अकारण नहीं है।[2] दरअसल स्वतंत्रता के अनुभव और तर्क को गद्य में सुविधा होती है और स्वतंत्रता का हमारा अनुभव अब सही मायने में अब प्रौढ़ और व्यापक हुआ है। गत सदी के उतरार्द्ध में हमारे यहाँ लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का विस्तार हुआ और इनमें जनसाधारण की भागीदारी बढ़ी, जिससे धीरे–धीरे स्वतंत्रता का हमारा अनुभव भी व्यापक हुआ और यह कुछ हद तक अब हमारी आदत में भी आ गई है। स्वतंत्रता के हमारे इस नए अनुभव को गद्य अपने अनुकूल और सहज लग रहा है। गद्य इस कारण अब कुलाँचे भर रहा है और खुलकर खेल रहा है। हिंदी गद्य में भी अब कथेतर गद्य का बोलबाला है।[3] दरअसल इधर हिंदी समाज के नजरिए में कुछ आधारभूत तब्दीलियाँ हुई हैं। उसके जीवन में युक्ति और तर्क की जगह निरंतर बढ़ रही है और कल्पना और लोकोत्तर पर उसकी निर्भरता अब पहले जैसी एकतरफा नहीं है। यही कारण है कि हिंदी में कल्पना की बुनियाद पर खड़ी कथा रचनाओं की जगह संस्मरण, जीवनी, आत्मकथा, यात्रावृत्तांत आदि कथेतर रचनाओं का आग्रह और स्वीकार्यता निरंतर बढ़ रही है। कभी हिंदी में इन कथेतर अनुशासनों में गिनती के लोग और गिनती की किताबें थीं, साहित्य का इतिहास लिखने वाले इनका नाम गिनाने में बगलें झाँकते थे, लेकिन अब हालात बदल गए हैं।

हिन्दी के स्थापित कवि–कथाकार और आलोचक अब कथेतर गद्य में हाथ आजमा रहे हैं। काशीनाथ सिंह, रवींद्र कालिया, विश्वनाथ त्रिपाठी, राजेंद्र यादव, अखिलेश आदि कई लोगों की कथेतर रचनाओं ने उनकी कथा–कविता की तुलना में पाठकों का ज्यादा ध्यान खींचा है। कभी हिंदी में यात्रावृत्तांतों का अकाल था, लेकिन गत केवल दो–तीन वर्षों के दौरान जिन रचनाओं को हिंदी में शीर्ष स्थानीय माना गया, उनमें तीन यात्रा वृत्तांत –अनिल यादव का वह भी कोई देश है महाराज, पुरुषोत्तम अग्रवाल का हिंदी सराय रू अस्त्राखान वाया येरेवान और

ओम थानवी का मुअनजोदड़ो भी शामिल हैं।[4] विश्वनाथ त्रिपाठी की व्योमकेश दरवेश और नंगातलाई का गाँव और रवींद्र कालिया की गालिब छुटी शराब जैसी कथेतर संस्मरणात्मक गद्यर चनाओं की भी हिंदी में खूब सराहना और चर्चा हुई।

निबंध हिन्दी साहित्य की अद्यतन श्रेष्ठ विधा है। इतना ही नहीं, निबंध को गद्य का श्रृंगार कहा जाता है। निस्संदेह, निबंध में ही गद्य के सौन्दर्य एवं माधुर्य का विकास होता है। पहले तो नि 'उपसर्ग पूर्व बन्ध' धातु में 'ल्युट' प्रत्यय करने पर निबंध यते अस्मिन् इति अधिकरणे निबंधन' अर्थात् जिसमें विचार बांधा जाए या गूंथा जाये ऐसी रचना निबंध कहलाती है। दूसरे 'नि' उपसर्ग पूर्व 'बंध' धातु में 'घञ् प्रत्यय करने से निश्चितार्थेन विषयम् अधिकृत्य बधनम् 'निबंध' अर्थात् निश्चित रूप से किसी विषय पर विचारों की श्रृंखला बांधने, रोकने या संग्रह करने को निबंध कहते हैं। इस दृष्टि से उक्त दो अर्थों के आधार पर निबंध से यह अभिप्राय निकलता है कि वह विचारों या भावों को पूर्णतया बाँधने वाला, एकत्र करने वाला, संगठित करने वाला या रोकने वाला होता है। अंग्रेजी में 'निबंध' के लिए मेंल शब्द मिलता है, जिसका शाब्दिक अर्थ है प्रयास करना या प्रयत्न करना। तात्पर्य यह है कि निबंध साहित्य की ऐसी विधा है जिससे लेखक के व्यक्तित्व की अमिट छाप होती है, जिसमें तर्कपूर्ण ढंग से किसी भी विषय का सांगोपांग विवेचन किया जाता है। निबंध के तत्त्वों के विषय में विद्वानों में बड़ा मतभेद है। कतिपय विद्वान उन्मुक्तता और वैयक्तिकता की छाप को ही निबंध के तत्त्व स्वीकारते हैं। अधिकांश विद्वान निबंध के तत्त्व ही स्वीकारते हैं–बुद्धि–तत्त्व, अनुभूति–तत्त्व, कल्पना–तत्त्व, अहम्–तत्त्व, भाषा–तत्त्व और शैली–तत्त्व। शैली तथा भाषा तत्त्व का संबंध अभिव्यक्ति पक्ष से है।[5]

अध्ययन के उद्देश्य

1. इस शोध पत्र से 21वीं सदी में सठोत्तर हिन्दी निबंधों का योगदान का स्वरूप प्रस्तुत करना।
2. निबंधकारों के निबंधों के मध्याम से 21 वीं सदी के जन सामज को एक नई दिशा दिखाना।
3. इस शोध पत्र में साठोत्तर हिन्दी निबंधों को नवीन रूप में प्रस्तुत करना ।

शोध प्रविधि

प्रस्तावित शोध पत्र में "21 वीं सदी में साठोत्तर निबंधों का योगदान" को केन्द्रीय समस्या के रूप में रखते हुए तुलनात्मक, विश्लेषणात्मक, सर्वेक्षणात्मक, साक्षात्कार शोध प्रविधियों का प्रयोग किया जाएगा। आवश्यकतानुसार अन्य शोध प्रविधियों को भी अपनाया जाएगा।

21वीं सदी के निबंध एवं निबंधकार

''हिन्दी साहित्य में निबंध के समान अनेक विधाएँ यथा– प्रबंध, लेख, आख्यायिका, गद्य–काव्य, रेखा–चित्र, जीवनी आदि विद्यमान है। वास्तव में इनमें मूलभूत अन्तर है। इन विधाओं की निबंध से तुलना करें तो हम पाते हैं कि प्रबंध ऐसी रचना है जिसमें विचारात्मक, विश्लेषणात्मक तथा विवेचनात्मक, समीक्षात्मक हो। निबंध एवं प्रबंध देखने या सुनने में तो एक जैसे लगते हैं, परन्तु निबंध में किसी विषय–वस्तु का वर्णन संक्षेप में रहता है तथा प्रबंध में उसी विषय–वस्तु का व्यापक चित्रण किया जाता है। 21 वी सदी के शुरुवात से ही हिन्दी साहित्य में निबन्ध के स्वरूप में परिवर्तन दिखाई देने लगे। इसमें अधिकतर साठोत्तर के निबंधकारों का

बोल बाल रहा।'' 'सरस्वती', 'मर्यादा', 'प्रभा', 'इन्दु', 'समालोचक' आदि पत्रिकाओं ने इक्कीसवीं शताब्दी के आरम्भ में विचार प्रधान लेखों को विशेष प्रश्रय दिया। भावप्रधान निबन्ध भी लिखे जाते रहे, किन्तु लेख लिखने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, मिश्रबन्धु, लोचन प्रसाद पाण्डेय, सम्पूर्णनिन्द, रामचन्द्र शुक्ल आदि लेखकों के विचार प्रधान, समीक्षात्मक, मनोवैज्ञानिक लेख प्रकाशित होने लगे जिसमें उचित संयोग विद्यमान रहता था। भारतीय संस्कृति, जीवन चरित्र, यात्रा विवरण स्मरण आदि अनेक नवीन विषयों का नवीन रूप इन लेखों में प्रस्तुत हुआ।

विषयों की विविधता के साथ–साथ शैली की विविधता भी दृष्टिगोचर होने लगी। गम्भीर और विश्लेषण प्रवृत्ति को लेकर चलने वाले लेखों में कथात्मकता, नाटकीयता, भावुकता तथा कलात्मकता के दर्शन भी साथ ही साथ होते हैं। ये निबन्ध अब निरूद्देश्य अथवा आत्म–तुष्टि मात्र के लिए न होकर, सोद्देश्य अथवा किसी विषय विशेष का निरूपण करने के लिए लिखे जाने लगे। वर्तमान में निबन्ध प्रकाशन का माध्यम पत्र–पत्रिकाएँ ही है। ग्रन्थों की भूमिका के रूप में भी कुछ श्रेष्ठ निबन्ध प्रस्तुत किए जाते है। इनकी भाषा में सरलता और सर्वग्राह्यता की और विशेष ध्यान दिया जाने लगा। उपयोगिता इनका प्रमुख तत्व है। इक्कीसवीं सदी में भी साठोत्तर हिंदी वैचारिक निबंधों की परंपरा बराबर बनी रही। इस दौर के वैचारिक निबंधों में विचार की स्पष्टता और तर्कपूर्ण चिंतन के साथ विचारधारात्मक आग्रह भी व्यक्त हुए। जैनेन्द्र कुमार, डॉ. संपूर्णानंद, रामविलास शर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, नगेंद्र आदि के निबंधों से उनकी वैचारिक दृष्टि का परिचय मिलता है। इन निबंधकारों ने अपने निबंधों के लिये समसामयिक विषय चुने।[6] जैनेंद्र कुमारः प्रसिद्ध कथाकार तो हैं ही, निबंध के क्षेत्र में भी उन्होंने ख्याति अर्जित की। उन्होंने सांस्कृतिक, नैतिक और राजनीतिक चिंतन को अपनी विशिष्ट शैली में विवेचनात्मक निबंधों के रूप में प्रस्तुत किया। कहीं–कहीं प्रश्नोत्तर अथवा साक्षात्कार (इंटरव्यू) की पद्धति भी अपनायी है। उनके निबंधों की खास विशेषता यह है भले ही उनके निबंध साठ के हो लेकिन उनके निबंध इक्कीसवीं सदी के समस्या के दार्शनिक पहलू को लेकर चलते हैं और जीवन के किसी बड़े सत्य से जोड़ देते है। क्रांतिकारिता तथा आतंकवादिता के तत्व भी जैनेंद्र के निबंधो के महत्वपूर्ण आधार है। उनके सभी रचनाओं में प्रमुख पुरुष पात्र सशक्त क्रांति में आस्था रखते हैं। बाह्य स्वभाव, रुचि और व्यवहार में एक प्रकार की कोमलता और भीरुता की भावना लिए होकर भी ये अपने अंतर में महान विध्वंसक होते हैं। उनका यह विध्वंसकारी व्यक्तित्व नारी की प्रेम विषयक अस्वीकृतियों की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप निर्मित होता है। इसी कारण जब वे किसी नारी का थोड़ा भी आश्रय, सहानुभूति या प्रेम पाते हैं, तब टूटकर गिर पड़ते हैं और तभी उनका बाह्य स्वभाव कोमल बन जाता है। जैनेंद्र के नारी पात्र प्रायः रचनाओं में प्रधानता लिए हुए होते हैं। रचनाकार ने अपने नारी पात्रों के चरित्र–चित्रण में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि का परिचय दिया है। स्त्री के विविध रूपों, उसकी क्षमताओं और प्रतिक्रियाओं का विश्वसनीय अंकन जैनेंद्र कर सके हैं। 'नारी और पुरुष की अपूर्णता तथा अंतर्निर्भरता की भावना इस संघर्ष का मूल आधार है। वह अपने प्रति पुरुष के आकर्षण को समझती है, समर्पण के लिए प्रस्तुत रहती है और पूरक भावना की इस क्षमता से आल्हादित होती है, परंतु कभी–कभी जब वह पुरुष में इस आकर्षण मोह का अभाव देखती है, तब क्षुब्ध होती है, व्यथित होती है। इसी प्रकार से जब पुरुष से

कठोरता की अपेक्षा के समय विनम्रता पाती है, तब यह भी उसे असह्य हो जाता है। समय और हम, 'इटस्तत', 'साहित्य का श्रेय और प्रेम', 'जड़ की बात', 'पूर्वोक्त', 'सोच–विचार', 'मंथन', 'काम, 'प्रेम और परिवार', 'प्रस्तुत प्रश्न'। जैनेन्द्र के कथात्मक गद्य का निखरा हुआ रूप निबन्धों में देखा जा सकता है। जैनेन्द्र मूलतरू साहित्य, कला, आदि अनेक विचारक हैं। इन्होंने दर्शन, धर्म, समाज, राष्ट्र, मनोविज्ञान विषयों पर निबन्ध विचारात्मक एवं चिन्तन–प्रधान है। एक सहृदय मनोवैज्ञानिक कहानीकार के रूप में उनका चित्रण कर इक्कीसवीं सदी के निबंध को नूतन दिशा एवं दृष्टि प्रदान की हैं। जैनेन्द्र की निबंधों का कथानक अल्प ही रहा है, पर उसमें मानवमन के रहस्यों का उद्घाटन एवं आंतरिक विश्लेषण का आग्रह ही प्रमुख रहा हैं।[7]

डॉ. रामविलास शर्मा के निबंधों में प्रेमचंद और शुक्ल जी दोनों की विशेषताएं मौजूद हैं। उनमें दो टूक बात कहने की प्रवृत्ति है इसीलिए उन्हें निष्कर्ष तथा निर्णय पर पहुंचने की जल्दी रहती है और बेचौनी भी। उनकी निबंध शैली तीक्ष्ण व्यंग्य से बनी है। भाषा विश्लेषणात्मक किंतु सरल और सहज है। उन्होंने ज्यादातर साहित्यिक विषयों पर आलोचनात्मक निबंध लिखे हैं लेकिन कुछ निबंध उन्होंने राजनीतिक और सामाजिक विषयों पर भी लिखे हैं। ऐसे निबंध 'विराम चिह्न' में संकलित हैं। 'रामविलास शर्मा मार्क्सवादी मूल्यों के आधार पर साहित्य की आलोचना करते थे। लेकिन जहां भी उचित लगा उन्होंने मार्क्सवाद की लीक छोड़ने में कभी कोई गुरेज नहीं किया। उनके निबंधों में भुखमरी, अशिक्षा, अंधविश्वास और नए–नए रोग फैलाने वाली वर्तमान समाज व्यवस्था को बदलना है। इसके लिए भारत और उसके पड़ोसियों का सम्मिलित प्रयास आवश्यक है। यह प्रयास जब भी हो, यह अनिवार्य है कि तब पड़ोसियों से हमारे वर्तमान संबंध बदलेंगे और उनके बदलने के साथ वे और हम अपने पुराने संबंधों को नए सिरे से पहचानेंगे। अतीत का वैज्ञानिक, वस्तुपरक विवेचन वर्तमान समाज के पुनर्गठन के प्रश्न से जुड़ा हुआ है। उन्होंने पहले ही भारत के संदर्भ में मजदूरों के अलावा किसानों को भी क्रांति का सिपाही बताया था। उनके जितने भी निबंध है व जनसमाज के लिए है, 'वे यह भी नहीं मानते थे कि साहित्य केवल क्रांति के लिए होता है, आनंद के लिए नहीं'।[8]

'डॉ. नगेंद्र ने अपने निबंधों में मुख्यतः काव्यशास्त्र और साहित्य के गंभीर विषयों को निरूपण के लिए चुना है। किंतु साहित्यिक प्रवृत्तियों, शैलियों, कवियों तथा लेखकों पर भी उन्होंने अलग–अलग निबंध लिखे हैं। नगेंद्र जी ने निबंधों के क्षेत्र में अनेक प्रयोग किये हैं। उनके निबंध भी मनोविश्लेषणवाद से जुड़ी हुई है। समाज में हो रहे कुंठा, सामाजिक विरोध, परिवारों का टूटन, देश– विरोध एवं विभाजन, राजनैतिक, आर्थिक समस्या को उन्होंने अपने रचनाओं में दर्शाया है। वर्तमान समय में होने वाले इन समस्या का चित्रण उन्होने पहेले ही अपने निबंध में अनुमान सहित पेश कर दिया था। न केवल उनके कलेवर को निखारा संवारा है, वरन् उनकी प्रेरणा चेतना को भी अधिक शक्तिशाली बनाया है। कहीं विवेचना, संवाद, कहीं गोष्ठी, कहीं स्वप्नजन्य चित्र विधान, कहीं पत्र लेखन और कहीं आत्मविश्लेषण का आश्रय लेकर उन्होंने अपने निबंध साहित्य को विविध कलात्मक प्रयोगों संवारा है। उनकी निबंध रचना में तर्क और भावना का सुंदर संतुलन दिखायी पड़ता है। नगेंद्र जी की भाषा प्रौढ़, प्रांजल, संस्कृतनिष्ठ मानक हिंदी है। उनका वाक्य–विन्यास हिंदी की अपनी प्रकृति के अनुरूप है। वे शब्दों के पारखी और अच्छे प्रयोक्ता हैं। उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं– 'विचार और विवेचन' (1944), 'विचार और अनुभूति' (1949), 'आस्था के चरण' (1969) आदि।[9]

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का ललित निबंधकारों में प्रमुख स्थान है। उनके निबंधों में मानवतावादी जीवनदर्शन और भावुक हृदय के दर्शन होते हैं। वे अध्ययनशील प्रवृत्ति के थे। उन्होंने संस्कृत के प्राचीन साहित्य के साथ–साथ पालि, अपभ्रंश और बंगला भाषाओं के साहित्य तथा मध्यकालीन हिंदी साहित्य का व्यापक अध्ययन किया था, लेकिन उनकी दृष्टि आधुनिक थी। इसीलिए उनके निबंधों में पांडित्य के साथ–साथ नवीन चिंतन–दृष्टि भी मिलती है। द्विवेदी जी के सभी निबंधों में समाज के जात–पाँत और मज़हबों में विभाजन और आधी आबादी (स्त्री) के दलन की पीड़ा को सबसे बड़े सांस्कृतिक संकट के रूप पहचानने, रचने और सामंजस्य में समाधान खोजने का साहित्य है। वे स्त्री को सामाजिक अन्याय का सबसे बड़ा शिकार मानते हैं तथा सांस्कृतिक ऐतिहासिक संदर्भ में उसकी पीड़ा का गहरा विश्लेषण करते हुए सरस श्रद्धा के साथ उसकी महिमा प्रतिष्ठित करते हैं– विशेषकर बाणभट्ट की आत्मकथा में। मानवता और लोक से विमुख कोई भी विज्ञान, तंत्र–मंत्र, विश्वास या सिद्धांत उन्हें ग्राह्य नहीं है और मानव की जिजीविषा और विजययात्रा में उनकी अखंड आस्था है। इसी से वे मानवतावादी साहित्यकार व समीक्षक के रूप में प्रतिष्ठित हैं। द्विवेदीजी ने अपनी रचना को विचारों से बोझिल होने नहीं दिया बल्कि भावानुकूलता के आवेग में विचारों को प्रस्तुत कर उसे नया रूप प्रदान किया है। खूबी यह है कि विचार, तर्क और भाव के गठाव में कहीं भी बिखराव और शैथिल्य नहीं आ पाता। जिस प्रकार शुक्ल जी ने विवेचनात्मक निबंधों का स्वरूप संगठित किया था, उसी प्रकार द्विवेदी जी ने अपनी विशिष्ट रचना प्रणाली द्वारा व्यक्तिपरक निबंधों का स्वरूप संगठित किया। उनके निबंधों की भाषा लचीली है। वे देशज शब्दों के साथ संस्कृत के प्रचलित और अप्रचलित शब्दों का सामंजस्य भी बैठा लेते हैं। उनका वाक्य–विन्यास भी ललित एवं भावपूर्ण गद्य के अनुरूप है। उनके प्रमुख निबंध–संग्रह अशोक के फूल, विचार और वितर्क, कल्पलता आदि हैं।

'प्रभाकर माचवे के निबंधों में आदर्शों का ढोल पीटने वाले लोगों की स्वार्थपरता, अश्लीलता की पोल खोली गयी है। उनकी रचनाओं में आज के आधुनिक युग में, औद्योगिक विकास की प्रक्रिया में, गांव टूट रहे हैं और नए–नए शहर विकसित हो रहे हैं। यह प्रक्रिया कमोवेश पूरे विश्व में ही चल रही है। कहीं इसकी गति धीमी है तो कहीं तेज, लेकिन यह प्रक्रिया निरन्तर चल रही है। इसके साथ ही साथ भारत की जनसंख्या भी बढ़ रही है, एक छोटे स्थान पर रहते हुए रोजी–रोटी के लिए, पढ़ाई–लिखाई के लिए, अधिक सुविधाएं पाने के लिए, व्यक्ति या समूह अपने–अपने मूल स्थानों से विस्थापित होने के लिए विवश हो जाते हैं, विकास के नाम पर नए–नए प्रकल्प सामने आते जाते हैं और अचानक एक ही स्थान विशेष का बहुत बड़ा–जनसमुदाय विस्थापित कर दिया जाता है, उदाहरण के लिए नर्मदा या टिहरी पर बनने वाले बांधों के कारण अनेक लोग विस्थापित कर दिए गए। इस विस्थापन के कारण जल–जंगल और जमीन के वर्चस्व और अधिकार की लड़ाई भी तेज़ होती जाती है। फलतः साहित्यिक रचनाओं में विस्थापन से जुड़े दर्द और संघर्ष के तत्व स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्ति पाने लगते हैं। प्रभाकर जी रचनाओं में अनेक स्थलों पर भाषा के लाक्षणिक प्रयोग अनूठे बन पड़े हैं जो हास्य के साथ चिंतन भी प्रस्तुत करते हैं– 'अभाव में भाव तो बढ़ता ही है' कुछ भी हो लंगड़ा पलायनवादी नहीं हो सकता आप चाहे सुर या असर कहें, ससुर नहीं कह सकते इत्यादि। 'खरगोश के सींग' 'बेरंग' और 'तेल की पकौड़ियाँ' इनके निबंध संग्रह हैं। माचवेजी का व्यंग्य पैना और व्यंजक है।[10]

हरिशंकर परसाई के निबंध सोद्देश्य हैं जिनके पीछे स्पष्ट वैज्ञानिक दृष्टि है जो आज के समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, दम्भ, अवसरवादिता, अंधविश्वास, साम्प्रदायिकता, नौकरशाही, शासन के ढीलेपन आदि पर तीव्र प्रहार करती है और व्यक्ति को सचेत रहने की प्रेरणा देती है। परसाईजी के निबंधों में प्रशासनिक, राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक, कलात्मक आदि विषयों पर आकर्षक व्यंग्यों की सृष्टि हुई है। उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं शोषण पर करारा व्यंग किया है जो हिन्दी व्यंग –साहित्य में अनूठा है। परसाई जी अपने लेखन को एक सामाजिक कर्म के रूप में परिभाषित करते है। उनकी मान्यता है कि सामाजिक अनुभव के बिना सच्चा और वास्तविक साहित्य लिखा ही नही जा सकता। परसाई जी मूलतः एक व्यंगकार है। सामाजिक विसंगतियो के प्रति गहरा सरोकार रखने वाला ही लेखक सच्चा व्यंगकार हो सकता है। परसाई जी सामायिक समय का रचनात्मक उपयोग करते है। उनका समूचा साहित्य वर्तमान से मुठभेड़ करता हुआ दिखाई देता है। परसाई जी हिन्दी साहित्य में व्यंग विधा को एक नई पहचान दी और उसे एक अलग रूप प्रदान किया, इसके लिए हिन्दी साहित्य उनका ऋणी रहेगा। 'आंगन के बैंगन' निबंध का एक अंश प्रस्तुत है। मैंने सोचा, हो गया सत्यानाश सौंदर्य, कोमलता और भावना का दिवाला पिट गया। हरिशंकर परसाई के निबंध संग्रह हैं–'तब की बात और थी' 'भूत के पाँव पीछे' 'बेईमानी की परत' 'पगडंडियों का ज़माना', 'सदाचार का तावीज़', 'शिकायत मुझे भी है', 'ठिठुरता हुआ गणतंत्र', 'सुनो भाई साधो', 'निठल्ले की डायरी" आदि। बरसाने लाल चतुर्वेदी कृत 'मिस्टर चोखेलाल' संग्रह में 39 निबंध हैं जिनमें हास्य और व्यंग्य का पुट है। इन निबंधों में जीवन के सामान्य क्रियाकलापों की उन घटनाओं के द्वारा हास्य की सृष्टि की गयी है जो नित्य प्रति हमें प्रभावित करती रहती हैं। भाषण झाड़ने की बीमारी, अभिनेता अथवा नेता बनने की चाह, झूठी हमदर्दी, जोरू की गुलामी, चाटुकारिता जैसे विषयों को अपने निबंधों में प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया है।

साठोत्तर निबंधकारों में साहित्यिक, भावप्रवण, चिंतनप्रधान उच्चकोटि के निबंध लिखने वाले लेखकों में 'अज्ञेय', कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', शिवप्रसाद सिंह, गजानन माधव मुक्तिबोध, धर्मवीर भारती, रघुवीर सहाय आदि प्रमुख हैं।[11]

हिंदी निबंध लेखन की परंपरा अत्यंत समृद्ध है। लेकिन इधर के वर्षों में इस क्षेत्र में नये लेखकों का आगमन बहुत कम हुआ है। ललित, भावात्मक विचारात्मक निबंध लेखन की प्रव त्ति में कमी आयी है और जो लिख भी रहे हैं, वे पुरानी पीढ़ी के ही लेखक हैं। नये लेखकों की निबंध लेखन के प्रति यह उदासीनता चिंताजनक है।

'इक्कीसवीं सदी में देश के राजनीतिक क्षेत्र में किसी राजनीतिक दल के व्यक्ति से लेकर मंत्रियों की प्रवृत्तियों, सरकारी नीतियों तथा सरकारी कर्मचारियों की अव्यवस्था तथा अकर्मण्यता से संबंध रहा हो या सामाजिक क्षेत्र व्यक्ति की स्वार्थपरायण प्रवृत्ति से लेकर समाज हित के नाम पर चन्दा एकत्र कर उसे व्यक्तिगत हित में व्यय करने वाले भ्रष्ट व्यक्तियों और सामाजिक अंधविश्वासों तथा कुत्सित एवं भ्रष्ट आचरणों से और धार्मिक क्षेत्र में धर्म के नाम पर फैले जातिवाद, रूढ़ियों और अंधविश्वासों से अथवा आर्थिक क्षेत्र में देश और व्यक्ति की दीन–हीन दशा से लेकर भारत में बढ़ती बेरोजगारी अथवा सरकार की आर्थिक नीतियों से तथा साहित्यिक क्षेत्र में कवि, लेखकों और आलोचकों की हीन– प्रवृत्तियों और मनोवृत्तियों से लेकर हिन्दी

साहित्य में 'आधुनिकता के नाम पर दिखाई देने वाली अश्लीलता, खुले यौनवाद आदि से और सांस्कृतिक क्षेत्र में पश्चिम के अस्वस्थ प्रभाव से संबंध रहा हो, देश में शिक्षा की बिगड़ती हुई स्थिति पर, साठोत्तरी हिन्दी निबंधकारों ने तीखे प्रहार किए हैं। वस्तुतः आज के युग के व्यंग्य–निबंध ही वह सशक्त साहित्यिक विधा है, जो निरन्तर युगीन परिस्थितियों से जूझता हुआ विकसित हो रहा है।

पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव से भारतीय परिवारों में बिखराव, समाज में नारी की हीन–दशा, पति–पत्नी में तनाव की स्थिति तथा सम्बन्ध विच्छेद तथा जीवन मूल्ययों में आ रही निरन्तर गिरावट भी साठोत्तरी हिन्दी निबंधकारों के व्यंग्य का लक्ष्य बनी हैं। शैली और शिल्प के क्षेत्र में भी इन निबंधकारों ने अनेक नवीन प्रयोग किये हैं। आधुनिकता के अनुरूप ही भाषा को सजाया–संवारा गया है। संस्कृत के तत्सम, तद्भव और लोक शब्दों के प्रयोग के साथ उर्दू और अंग्रेजी शब्दों का खुलकर प्रयोग निबंधों में दिखाई देता है। बिम्ब व प्रतीक के प्रयोग से इनके निबंधों का शिल्प पक्ष निखर उठा है। इनके साथ ही अनेक प्राचीन और नवींन लोकोक्तियों, मुहावरों तथा सूक्तियों के प्रयोग से भाषा में लाक्षणिक चमत्कार की सृष्टि है। भाषा मानव की रहस्यमय तथा मौलिक उपलब्धि है। मानव को परिवेश विशेष में जीवन–अभिव्यक्ति के लिए जो ध्वनियाँ दाय भाग में प्राप्त हुई थीं, उन्हें उसने अपनी सृजनात्मक प्रतिभा से सर्वथा नवीन रूपों में अवतरित किया। साठोत्तरी हिन्दी निबंध साहित्य में भावात्मक विचारात्मक विवरणात्मक, वर्णनात्मक तथा हास्य–व्यंग्य शैली का प्रभावकारी वर्णन हुआ है। साठोत्तरी हिन्दी निबंध साहित्य में कथ्य और शिल्प की दृष्टि से तत्कालीन परिस्थितियों तथा वर्तमान जीवन की विसंगतियों की यथार्थपरक विवेचना की गई है।[12]

सुझाव–

राग–रंजित दृष्टि से उपलब्ध सत्य के प्रति तथ्यान्वेषी चाहे आशंकित रहें परन्तु रचना से सरोकार रखने वाला स्वत्व–सजगता एवं स्वातंत्र्य – स्पृहा से युक्त रचनात्मक व्यक्तित्व इसी दृष्टि से संसार में अपनी स्थिति को आँकता है। साठोत्तर हिन्दी निबन्धकार की अपने परिवेश एवं समय के साथ एक तीखी प्रतिक्रिया होती है। परिवेश की चुनौती और टकराहट के प्रतिरोध में अपने जातीय 'स्वत्व' को उपलब्ध करना एवं निरन्तर टूटना आज के रचनाकार की नियति है। गाँव टूट रहे हैं, शहर कसमसा रहे हैं, आत्मीय सम्बन्ध टूट रहे हैं, इंसान बाहर से अधिक अंदर से टूट रहा है। इस टूटन के दौर में रचनाकार कहीं जोड़ना चाहता है। समाज में इस संकल्प के बीज छींटना चाहता है कि सब टूटने लायक नहीं था। जो टूटने लायक था उसी को टूटना चाहिए सब को नहीं। स्वयं को टूटने से बचाने की प्रक्रिया शुरू करो यही स्वर साठोत्तर हिन्दी निबन्ध–साहित्य का मूल स्वर है। आज भी प्रकृति हमें निरंतर सजग एवं सुचेष्ट कर रही है, हमारी लोक–संस्कृति का सहकार भाव हमें निमन्त्रण दे रहा है। हमारी सांस्कृतिक विरासत को थहाने वाले मनीषियों के चिंतन का मधु हमारे विकृति वारूणि से मत्त मन को आज भी स्वस्थ कर सकता है। हमें इस अमृत की तलाश कर मानव एवं मानवता को बचाना है। यही हमारी पीढ़ी का दायित्व इसी कथ्य के इर्द–गिर्द साठोत्तर हिन्दी–निबन्ध का निर्वन्ध मुक्त शिल्प रूप ग्रहण करता है। जो पहले से किसी फार्मूले एवं चौखटे में जड़ा हुआ नहीं है। बहुरूपी हिन्दी–निबन्ध का बहुरूपी शिल्प निरन्तर स्वत्व की अभिव्यक्ति की तलाश है। इस शोध प्रबन्ध की यही अभीप्सा है।

निष्कर्ष–

निष्कर्ष रूप में साठोत्तर निबन्ध अपने वैविध्य में न केवल जीवन का प्रतिनिधित्व करता है वरन् परम्परा और युगीन आकांक्षाओं के विवेक पूर्ण सामजस्य से एक नयी जागृति का स्वर मुखरित करता है। उपर्युक्त शिल्प एवं शैलीगत अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हिन्दी साठोत्तर निबंधों का 21 वीं में जो योगदान रहा है वह सभी शैली–रूप में क्रमशः शक्ति एवं चर्मोत्कर्ष दिखाई पड़ता है। साठोत्तर निबन्धों में शिल्प, शैली के सभी गुणों का उत्तरोत्तर विकास हुआ है। युग चेतना का प्रभाव निबन्ध पर अधिक होता है। लेकिन आवश्यकता पड़ने पर अपनी परम्परा को भी वह ग्रहण करता है। युग की आकांक्षायें परम्परागत आदर्शो के द्वारा वह नियन्त्रित करने का प्रयास करता है। इसी अर्थ में निबन्धकार केवल अपने साठोत्तर युग के प्रति ही उत्तरदायी नहीं हुए, आगे आने वाले इक्कीसवीं सदी के संस्कृति और परम्परा के प्रति भी उत्तरदायी हुए है इसीलिए साठोत्तर निबन्धकारों में युग की आकांक्षा के साथ सामायिक प्रेरणा का स्वर भी मुखारित होता है। वह अपने पाठकों के कर्तव्यबोध को भी जागृत करता है।

❒

सन्दर्भ –

1. आचार्यराम चन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, इक्तीसवां संस्करण
2. डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं० 1993
3. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास, खण्ड–13
4. डॉ. हरवंश लाल शर्मा, हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास खण्ड, 14, संवत 2027
5. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका, प्र. सं. 1948 ई.
6. डॉ० शिवदान सिंह चौहान, हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष
7. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश, भाग एक (सम्पादक) डॉ.धीरेन्द्र वर्मा, सं.1958
8. डॉ० गोपाल राय, हिन्दी साहित्याब्द कोश सं. 1973 ई.
9. अद्यतन, अज्ञेय,1977
10. विद्यानिवास मिश्र, अस्मिता के लिए,1680
11. डॉ० त्रिभुवन सिंह, हिन्दी साहित्य रू एक परिचय प्र. सं०. 1968 ई.
12. अज्ञेय, हिन्दी साहित्य एक आधुनिक परिदृश्य प्र. सं. 1976 ई.

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 10–16

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

नन्दकिशोर आचार्य की कविताओं में पर्यावरणीय चिंतन

श्रीमती संगीता कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
सहायक आचार्य, हिन्दी, राजयकीय महाविद्यालय, कंवर नगर, ब्रह्मपुरी, जयपुर
E-mail : sumitrasarpanch20@gmail.com

सारांश

प्रकृति एवं मानव का संबंध प्राचीनकाल से ही महत्वपूर्ण रहा है। प्रकृति अथवा पर्यावरण के विविध उपादानों से मानव जीवन इंद्रधनुषी बना है। मनुष्य नित्य प्रकृति सौंदर्य से अभिभूत होता रहा है तथा प्रकृति व पर्यावरण का साधक तथा पूजक भी रहा है। पर्यावरण चिंतन की परम्परा हमारी भारतीय सभ्यता में आदिमकाल से लेकर अद्यतन तक अनवरत रूप से चलती आई है। प्राचीनकाल से ही भारत में वेदों, पुराणों, धार्मिक ग्रंथों, साहित्य आदि में पर्यावरणीय चिंतन भारतीय सभ्यता का अभिन्न अंग रहा है। साहित्य अथवा काव्य में पर्यावरण अथवा प्रकृति को विशिष्ट स्थान मिला है। पर्यावरणीय चिंतन हमारे काव्य का केन्द्र बिन्दु रहा है। कवि संवेदनशील होने के कारण स्वयं का प्रकृति से अविच्छिन्न संबंध स्थापित कर लेता है। इसी कारण वह अपने काव्य के माध्यम से प्रकृति से गहन रूप से जुड़ता हुआ चला जाता है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी नंद किशोर आचार्य की कविताएँ भी प्रकृति से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है। उनके सौन्दर्य बोध सत्यान्वेषण, आत्मबोध, आत्मालाप का मुख्य आधार अथवा केन्द्र बिन्दु प्रकृति ही है। प्रकृति के प्रति अनुरक्ति अथवा प्रेम इनकी कविताओं में प्रमुखतया से उभरा है। कवि नंदकिशोर आचार्य के प्रकृति चिंतन का संबंध सौन्दर्य चिंतन के साथ–साथ रहस्य चिंतन से भी है। आचार्य जी का पर्यावरणीय चिंतन जीवन अनुभवों की कलात्मक अभिव्यक्ति है। वह मनुष्य के भाव जगत का विस्तार करती है, उसकी कल्पना शक्ति को जगाती है और सौंदर्य बोध का विकास करती है तथा पर्यावरण के प्रति मानव जाति के कर्त्तव्य का बोध कराता है।

मुख्य शब्द– पर्यावरणीय चिंतन, मानवीय द्वन्द्व, दोहन, सहृदय, रागात्मक संबंध, मरुस्थली आंतरिक परिदृश्य।

प्रस्तावना

वे सभी तत्व जो हमारे जीवन को संभव बनाते हैं, पर्यावरण के अंतर्गत आते हैं। हमारे चारों तरफ का वह प्राकृतिक आवरण जो हमें सरलतापूर्वक जीवन यापन करने में सहायता प्रदान

करता है, पर्यावरण कहलाता है। भारतीय मनीषी सृष्टि के आरम्भ से ही प्राणी मात्र के प्रति कल्याण का भाव रखते हुए कामना करते हैं :–

''सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामयाः।
सर्वे भद्राणी पश्यन्तु, मा कश्चिदुखभाग भवेतः।।''

अर्थात् यहाँ सभी सुखी एवं स्वस्थ हो, यही कामना की गई है। पर्यावरण के अंतर्गत प्रकृतिजन्य अभी तत्त्व–आकाश, जल, वायु, अग्नि, ऋतुएँ, पर्वत, नदियाँ, सरोवर, वृक्ष वनस्पति, जीव–जंतु आदि सभी समाहित है। पृथ्वी के इन तत्त्वों से मिलकर ही मानव शरीर की उत्पत्ति हुई है। महाकवि तुलसी ने भी रामचरितमानस के किष्किंधाकांड में लिखा है किः–

''क्षिति, जल पावक, गगन, समीरा।
पंच रचित अति अधम सरीरा।।''[1]

पर्यावरण मानव का साहचर्य है इसीलिए मानव पर्यावरण के विभिन्न रूपों को देखता हुआ उसके साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखता है। प्रकृति में हमारी सम्पूर्ण सृष्टि समाहित है। मनुष्य इसी प्रकृति की गोद में अपना सम्पूर्ण जीवन यापन करता है। इसलिए प्रकृति से मनुष्य का रागात्मक संबंध स्थापित होना स्वाभाविक है। इन रागात्मक संबंधों को कवि, कविता के माध्यम से व्यक्त करता है। कवि की चिंतन दृष्टि सामान्य मनुष्य से पृथक होती है। अपनी चेतना के द्वारा वह संसार के प्रत्येक पक्ष को जानता व समझता है तभी वह अपनी कविताओं के माध्यम से जगत् का स्वरूप और भी जीवन्त रूप में प्रकट करता है। कविता के माध्यम से कवि प्रकृति की सर्वांगीणता के प्रति अगाध प्रेम एवं अनन्य आस्था प्रकट करते हुए उसके विविध स्वरूपों का विविधवर्णी चित्र प्रस्तुत करता है। कवि को प्रकृति में चेतना का आभास मिलता है। उसी चेतना के द्वारा वह काव्यमयी संसार को प्रकृति के रंगों में रंगकर नए संसार की रचना करता है। कवि अपनी लेखनी के द्वारा प्रकृति वर्णन के बहुआयामी विहंगम दृश्य–चित्र प्रस्तुत करता है जो सीधे पाठकों की अंतश्चेतना को उद्वेलित करते हैं।

नंदकिशोर आचार्य की कविताओं में पर्यावरणीय चिंतन

बीकानेर (राजस्थान) में जन्में नंदकिशोर आचार्य को पानी और रेत का, स्मृति और खण्डहर का, मरूगंधा का कवि कहा जाता है। उदात्त जीवन मूल्यों के प्रति एकनिष्ठ लालसा चाहे कविता हो, नाटक हो, आलोचना हो, शिक्षा, सभ्यता–संस्कृति के प्रश्न हो, अनुवाद का व्यापक फलक हो अथवा संपादन आदि से संबंधित उपलब्धियाँ, सब दिशाओं में नंदकिशोर आचार्य की सजग, सक्रिय प्रतिभा और चेतना का प्रसार उल्लेखनीय और प्रशंसनीय है। इनके काव्य कर्म का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। कवि के रूप में इनकी कविताएँ विषय विविधताओं को समेटे हुए है। इन विषय विविधताओं में पर्यावरणीय चिंतन प्रमुखतया से परिलक्षित होता है। आचार्य जी की प्रकृतिपरक कविताएँ पूरे संग्रह के आकार में सामने आती है। प्रकृति के प्रति आकर्षण आरम्भ से ही इनके मन में रहा है। वे स्वयं स्वीकार करते है– ''प्रकृति के प्रति बहुत आरम्भ से एक आकर्षण मेरे मन में रहा है और शायद इस कारण से प्रकृति के माध्यम से कुछ और चीजों की तलाश या पहचान की प्रक्रिया इन कविताओं में हैं।''[2] इनकी कविताएँ पर्यावरण के मरुस्थल के प्यास की, उसकी आत्मा की कविता है। इन कविताओं में मिट्टी या रेत की गंध भी है और स्मृति की सुवास भी। इनमें कोई स्मृतिजीवी उछाल नजर नहीं आता बल्कि एक

संवेदनशील यात्रा दिखाई देती है जिसमें रेत पर पड़े पाँवों के निशान ढूँढने का धीरज भी है और जो मिट चुके है उनको पहचानने का सब्र भी।

नंदकिशोर आचार्य की कविताओं का आंतरिक शरीर मूलतः प्रकृति से बना है। प्राकृतिक परिदृश्य को वे आंतरिक परिदृश्य मानते हैं–''प्राकृतिक परिदृश्य आप का भीतरी परिदृश्य बन जाता है। मैं समझता हूँ कि यदि परिदृश्य से आपका रचनात्मक संबंध है और रचनात्मक संबंध आवश्यक है–जीवन का मर्म वही है तब रचनात्मक संबंध प्रकृति और परिदृश्य से भी होगा।''[3] इनकी कविताओं के भीतर मानवीय द्वन्द्व ऋतुओं की तरह जलते–बुझते है और सतह को फोड़कर आस्था की हरी पत्ती उभर आती है।

नंदकिशोर आचार्य की कविताओं में पर्यावरणीय चिंतन का स्वरूप

आचार्य जी ने अपनी कविताओं में जो पर्यावरणीय चिंतनपरक दृष्टिकोण अपनाया है वह कविताओं में 'था' और 'है' के माध्यम से व्यक्त हुआ है। यहाँ पर था से आशय है– वह एक समुद्र था। अर्थात् अतीत के गौरव का वर्णन। जो कभी समृद्ध हुआ करता था जहाँ कभी समुद्र था। 'जल है जहाँ में वर्तमान में रेत का सागर है, मरुथल है, होने का भाव व्यक्त होता है।'

आचार्य जी की कविताएँ अभिधा शब्द शक्ति की तरह सीधे–सीधे नारे लगवाने, पर्यावरणीय रैलियाँ निकलवाने, वृक्षारोपण का महत्व बताने, नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से पर्यावरण को बचाने का संदेश नहीं देती। वे अपनी बात काव्यमयी स्वरूप में ढालकर लक्षणा व व्यंजना शब्द शक्तियों के साथ करते है। आगे चलकर वे रचना प्रक्रिया में होने, न होने, खिलने मुरझाने, कविता में नहीं है जो को भी अनुपस्थिति में उपस्थिति के रूप में व्यक्त करने तथा केवल एक पत्ती ने के माध्यम से 'ठूँठ' को हरे जंगल का रूप देने की कल्पना की बातों के माध्यम से पर्यावरणीय चिंतन का प्रयास भी करते हैं। अतीत की असावधानियों, भूलों पर पश्चाताप करते हुए उनके दुष्प्रभावों को प्रस्तुत करते हैं क्योंकि यदि जल को प्रदूषित होने से रोका जाता, कल के लिए जल को बचाया जाता, पेड काटने पर नियंत्रण रखा जाता तथा अधिक मात्रा में वृक्षारोपण किया जाता तो थार नहीं पनपता।

नंदकिशोर आचार्य अपनी कविताओं के माध्यम से 'आत्मा के ताप सी सब ओर पसरी रेत' के द्वारा धरती के बढ़ते तापमान की चिंता करते है। भूजल का स्तर लगातार गिर रहा है। अत्यधिक मात्रा में जल का दोहन होना, वृक्षों का कटना, पहाड़ों का पत्थर निकालने में जरूरत से ज्यादा उपयोग होना आदि सभी कारण है जिससे रेगिस्तान व धरती के तापमान में निरंतर वृद्धि हो रही है –

''आत्मा के ताप सी
सब ओर पसरी जा रही है रेत
जितना ताप य उतना आप।''

नवीन नंदवाना नंदकिशोर आचार्य के पर्यावरणीय चिंतन को अंतः स्फूरित एवं अंत संचरित बताते हुए लिखते है कि– ''वैश्वीकरण के इस दौर में जहाँ समकालीन कविता में अन्य कवियों के यहाँ बाजारीकरण, भूमण्डलीकरण और पनपती नवीन संस्कृति छवि छटा दिखाई पड़ती है, वहीं हम नंदकिशोर आचार्य की कविता में मानव मन के अंतस की अनुगूंज के साथ–साथ प्रकृति के विविध दृश्यों की छवि पाते हैं। ऋतुओं के बदलने की पदचाप हमें कवि की कविता में स्पष्ट सुनाई देती है।[4]

आचार्य जी ने अपने पर्यावरणीय चिंतनपरक दृष्टिकोण में भारतीय इतिहास के उस पक्ष को लिया है जिसमें सांस्कृतिक परिस्थितियों के दुष्परिणाम देखने को मिलते हैं। जब भगवान राम की विनय भरी प्रार्थना को समुद्र ने नहीं सुना, तब भगवान राम द्वारा समुद्र में बाण चलने पर समुद्र का त्राहिमाम कहकर प्रकट होना एक मिथक है। परन्तु समुद्र के सूखने का दुष्परिणाम यह हुआ कि जहाँ पर अथाह जल था, वहाँ रेत का अथाह सागर बन गया। आचार्य जी समुद्र बनकर न सही पर कवि बनकर मर्यादा पुरूषोत्तम राम से सवाल करते हैं –

मैंने क्या बिगाड़ा था तुम्हारा राम, दोष किसका था? जिसने पथ छुपाया, वह शरण में आया

तो मुझ पर ही क्यों चला, वह बाण अभिमंत्रित/मेरा प्राण जल जिसने जलाया।'[5]

मर्यादा पुरूषोत्तम का बाण साधारण बाण नहीं था। अभिमंत्रित बाण था। अर्थात् प्रक्रिया द्वारा तैयार किया गया बाण। आज प्रेक्षापास्त्र क्या हैं? क्या वे नहीं है अभिमंजित बाण का स्वरूप? बाण चला समुद्र में और जल सूखा राजस्थान की सरस्वती नदी के उस क्षेत्र का जहाँ पर एक समुद्र था। अब वहाँ मरुस्थल है, रेत का असीम विस्तार है। आचार्य जी ने कविताओं में टीबों का जो रूप व्यक्त किया है, उसका स्वरूप हर रोज बदल जाता है क्योंकि वहाँ की मिट्टी बलुई है, उसमें उसके कणों को जोड़ने वाली जड़ों का अभाव है। यदि वहाँ पेड़–पौधे, वनस्पतियाँ होती तो ऐसा नहीं होता –

एक रेगिस्तान ही/पसरा हुआ सब ओर/और टीबे बदलते हर रोज /अपनी जगह।[6]

आचार्य जी रेगिस्तान के पर्यावरण के भयावह स्वरूप पर अंधड़ चलाने को दर्शाते हुए अकाल का संदर्भ देते है। वे अकाल के भयावह स्वरूप का वर्णन करते हुए कहते हैं –

''सब कुछ थमा है जहाँ/अन्धड़ चलते हैं सिर्फ

यह सोनाली रेत कितनी भयावह है/सूखे अकालों के चक्रवातों में।'[7]

कवि के सामने रेगिस्तान में जीवन का रचाव निराशाजनक है। रेत के इस विशाल मैदान में जहाँ पर उनका हर रचनात्मक कार्य नष्ट हो जाता है। कवि ने वह एक समुद्र था– शीर्षक से अतीत के उस समय को संजोया है, जब जल का अभाव नहीं था। जल था, जीवन था।

''वह एक समुद्र था/फैलता हुआ गहराता हुआ/
मैं जिसमें निश्चित सोता था/क्योंकि तुम थे/नाव को खेते हुए/
किन्तु अब स्थिति यह है कि नाव अब भी है/
रेत में धंसी/यह विस्तार जल का/यही जलता हुआ मरुथल है।''

इन्हीं पंक्तियों के माध्यम से प्रकट हुआ है 'था' और 'है' के मध्य पर्यावरणीय चिंतन। कवि पूछता है कहा गया वह जल? किसने नहीं बचाया कल के लिए जल? क्यों नहीं रोका गया जल का दोहन और दुरूपयोग? आदि कई सवाल वे अपनी कविताओं के माध्यम से करते है। क्यों मृगतृष्णा जैसे पानी आगे और आगे चला जाता है? वे कहते है आगे है पानी की सींव तनिक आगे। हम सारे मरुस्थल में बस यूँ ही भागे। मृग जब पानी के लिए रेगिस्तान में भटकता है तो –

''मृग भटकता फिरता है इस लाय में / यह रहा, यह रहा जल, यह रहा
और आखिर हाँफता बेदम/उगलता झाग/आँखें उलट देता है।'[8]

जब मृग आँखे उलट देता है और मर जाता है तब भी क्या हम आगे के लिए जल की व्यवस्था करके मृग को बचाने का पर्यावरण के प्रति चिंतनपरक दृष्टिकोण नहीं अपनाएंगे। कवि ने वर्तमान स्थिति की उपस्थिति पर हमारी उदासीनता को उजागर किया है –

''थार का विस्तार सूना/दूर तक नहीं कोई पद–चिह्न
कभी होंगे तो भी उन पर/छा गई है रेत /उनको कौन अब जाने?''[9]

बस अब एक रेतीला सपाट है। जिसमें न ऊँचाईयाँ है, न गहराईयाँ है। वहाँ पर दूर तक पसरा हुआ एक रेतीला सपाट है। सब ओर रेगिस्तान पसरा हुआ है। इस रेगिस्तान में कवि ने पक्षियों से प्रेम करने का, उनके लिए परिण्डे बांधने का अप्रत्यक्ष रूप से संदेश दिया है। कुरजाँ पक्षियों की पंक्तियों को देखकर कवि मन की टीस पानी की व्यवस्था के लिए उभरती है तो चिड़ी का गीत सुनकर रोमांचित होना भी गोडावण को बचाने की कामना है।

किन्तु यह चिड़ी कौन है?/मरे रूंख की डाली पर/
फुदक–फुदककर इतराती गाती गीत।[10]

कवि नंद किशोर आचार्य 'खेजड़ी' कविता के माध्यम से रेगिस्तान में वृक्षारोपण कर पर्यावरणीय चिंतन का बोध प्रकट करते हैं। ये चिंतन भविष्य की आशा की सांकेतिक अभिव्यक्ति है –

''खेजड़ी सी उगी हो मुझमें/हरियल खेजड़ी सी तुम
सूने रेतीले विस्तार में/तुम्हीं में से फूटकर आया हूँ/ताजी घनी पतियों सा।''

आचार्य जी ने पर्यावरण के प्रति चिंतनपरक दृष्टिकोण के अंतर्गत प्रकृति के साथ रागात्मक संबंधों को बनाए रखते हुए भविष्य के संकटों की ओर इशारा किया है। विगत दो–तीन दशक की कविताओं में हमें पर्यावरण चिंतन के प्रति कवियों की लेखनी उदासीन नज़र आती है। आज हमारे समाज में वस्तुओं के अंधाधुंध उपभोग से पर्यावरण नष्ट हो रहा है। बहुत सारे जीव–जन्तु लुप्त होते जा रहे है। प्रकृति ही मनुष्य जाति के लिए जीने के साधन जुटाती रही है, लेकिन वही प्रकृति आज मनुष्य के असीमित विलासिताओं के कारण खतरे में है। जिसके प्रति कवि भी उदासीन है। परन्तु नंदकिशोर आचार्य की बहुतायत कविताओं में पर्यावरणीय चिंतनपरक दृष्टि को देखा जा सकता है। उनकी कविताएँ प्रकृति के प्रति चिंता प्रकट करती प्रतीत होती है। **प्रभात त्रिपाठी** के शब्दों में–''प्रकृति के साथ आंतरिक तादातम्य से वे (नंदकिशोर आचार्य) कुछ इस तरह रचते हैं कि केवल तकनीकी अर्थ में ही उसका साधारणीकरण और सहज संप्रेषणभर संभव नहीं होता। अधिक गहरे अर्थ में वह व्यक्ति की स्वतंत्र और सार्थक भाषा का रूप ले लेती है। पाठक को अपनी नहीं उनकी शर्त पर शामिल होने की छूट देती है। इस व्यक्ति में उनका ही अपना नहीं, पाठक का सहृदय का, सामाजिक का अपना भी व्यक्त होता है।[11] नंद किशोर आचार्य की प्रकृतिपरक कविताओं में जल का वर्णन भी जीवन–राग की तरह व्यक्त हुआ है। 'बचो पानी' कविता में जल का जीवन–राग पर्यावरणीय चिंतन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

''वह चाहे तरल हो और वह ठोस
पानी और पत्थर दोनों में
नहीं कोई थोथ।''

इसीलिए आचार्य जी जल को संघर्ष करने की प्रेरणा देने वाली शक्ति के रूप में प्रकट करते

है। जीवन में आशा का संचार करने वाली शक्ति के रूप में मानते है।

''वह चाहे तरल हो और वह ठोस, पानी और पत्थर दोनों में, नहीं कोई थोथ।''

इसीलिए आचार्य जी जल को संघर्ष करने की प्रेरणा देने वाली शक्ति के रूप में प्रकट करते है। जीवन में आशा का संचार करने वाली शक्ति के रूप में मानते है।

''पत्थर पानी को मारता नहीं/धार देता है/पानी बदले में उसे संवार देता है/
वे लिखते है/बचो पानी/मरो नहीं झरो/कि पहाड़ भी मरे नहीं संवरे झरे/
मुझमें उतरे।''[12]

जिस तरह **प्रयाग शुक्ल** थोड़े से आदमी को बचाने की कोशिश कविता में लिखते है –

''जल को बचाता हूँ तो जीवन बचाता हूँ/हवा को संवारता, निर्मलमय रखता/
तो जीवन बचाता हूँ।''[13]

उसी प्रकार आचार्य जी भी थोड़ी सी बरसात में भी जीवन बचाना चाहते है। वे लिखते है – *''एक बूँद भी भिगो सकती है/इस तपते मरूथल को।''*[14] कवि ने जल की महता को सर्वत्र अपनी कविताओं में स्वीकार किया है। जिसे सृष्टि का आधार माना है जिसके बिना जीवन की कल्पना सभव नहीं है।

''धूप हो/हवा हो/माटी हो या आकाश/प्यास सबकी बुझाता है जल/
घुलाकर प्यास अपनी/प्यास में सबकी हो पाता है वह रस।''[15]

नंदकिशोर आचार्य ने अपनी कविताओं में जल को अत्यधिक महत्व दिया है। जल को लेकर वे **''शिल्पी ही नहीं प्रतिभा भी/नर ही नहीं नारायण भी''** जैसी कल्पनाएँ रचते हैं। जल जो सागर से शिखर तक महत्वपूर्ण है, पर्यावरण का आधार है। रहीम ने जिसे 'रहीमन पानी राखिए, बिन पानी सब सून' कहकर महत्व दिया है तो प्रसाद जी ने 'एक ही तत्व की प्रधानता, कहो उसे जड़ या चेतन' कहकर महत्व उजागर किया है। वहीं आचार्य जी रेत में 'माँ' जैसा वात्सल्य भाव व्यक्त कर 'रोहिड़ा ही सही तेरा पूत हूँ', कहकर महत्व प्रकट किया है। ऊपर जल की नीली गहराई में से फूट–फूट कर आते थे पीत कमल कहकर जल का गुणगान करते हुए कवि की कामना है कि जिस प्रकार फूटती है पहाड़ों से उफनती, टकराती, शिलाएँ बहा ले जाती है, नदी अपने आवेगमयी जल के साथ गूँजती हुई, उसी प्रकार राजस्थान भी पानी से सरोबार हो। यहाँ भी जल की कल–कल सुनाई दे। वे कहते हैं यहाँ की घाटी रेत का कण–कण हरा हो सके क्योंकि थार की आकांक्षा और मरू का सपना ही तो है नदी।

निष्कर्ष

कवि आचार्य जी ने अतीत के गौरव को पर्यावरणीय समृद्धता के प्रतीक के रूप में जिन किलों, झरोखों, महलों के प्रतिमान के रूप में दर्शाये, वे आज पर्यावरणीय चेतना के अभाव में खण्डहर उजाड़ हो गए। कवि का स्वर सभी का स्वर बने। इसलिए वे समवेत स्वर में कहते हैं :–

''कवि हूँ मैं/इसीलिए अपना स्वर मिलाता हूँ
उसी समवेत स्वर में/जो तुम्हारी आत्मा में गूँजता है।''

कवि स्पष्ट रूप से कहना चाहते है कि पर्यावरणीय परिवर्तन मानवीय कार्यों का ही दुष्परिणाम है। ये परिवर्तन एकाएक नहीं हुए। वे कहते है कि एकाएक नहीं उठा था बवण्डर, धीरे–धीरे

रेत चढ़ती रही थी, छा गई थी समूचे आकाश पर। यह हमारी उदासीनता रही कि हमने पर्यावरण के प्रति सुरक्षात्मक दृष्टिकोण नहीं अपनाया। जिसके दुष्परिणाम सबके सामने है। यदि हम पर्यावरण के प्रति अपने दायित्व का निर्वहन करेंगे, पर्यावरण के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को समझेंगे तो फिर से पूरा मरूस्थल हरा हो सकता है। जब पानी अपना रंग दिखाएगा तो पूरा मरूस्थल पेड़ों, जंगलों के साथ रंग–बिरंगे फूलों सा जीवन महकाएगा। वे सोचते हैं –

''रिस–रिस कर कहीं अन्तस से
बह रहा होगा जल/वह सभी तक पहुँचे
यह थार की आकांक्षा ही तो नदी है/यही बहती रहे।''

रेगिस्तान का विस्तार असीमित और अनन्त है। उस रेगिस्तान का क्षेत्र लगातार बढ़ता ही जा रहा है। परन्तु अपने प्रयासों के द्वारा हम उस बढ़ते हुए रेगिस्तान पर अंकुश लगाकर अपने पर्यावरण को बचा सकते हैं। इसके लिए हम सभी को मिलकर प्रयास करने होंगे। समवेत स्वर में पर्यावरण के प्रति चिंतन करेंगे एवं उसी के अनुरूप कार्य भी करेंगे तो रेगिस्तान में आशाओं का संचार हो सकेगा। हम केवल यह नहीं सोचें रेगिस्तान में कुछ नहीं उग सकता। यहाँ रेत में संभावनाओं को तलाशने वाले व्यक्ति के रूप में कवि है, कविताएँ हैं, जो रेत में अपना घर बनाने को प्रयासरत है। निस्संदेह यदि हम पर्यावरणीय चेतना पर ध्यान देंगे तो –

''रेत पर मंडी है जो लहर/एक दिन गुंजार होगी/आत्मा की राग सी।''

❐

सन्दर्भ –

1. *तुलसीदास, रामचरितमानस, गीता प्रेस, गोरखपुर, 1938, पृ. 105*
2. *रूबरू, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर 2009 नंदकिशोर आचार्य से गिरिराज किराडू की बातचीत, पृ.160*
3. *रूबरू, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर 2009, नंदकिशोर आचार्य से अंजू ढड्ढा की बातचीत, पृ. 22*
4. *नंदकिशोर आचार्य, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर, 2018 पृ. 84*
5. *नवीन नंदवाना, हिन्दी कविता : समय का शाब्दिक दस्तावेज, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 82*
6. *नंदकिशोर आचार्य, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2018, पृ. 129*
7. *नंदकिशोर आचार्य वह क्या हैं? अपराहन, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर 2018, पृ. 28*
8. *नंदकिशोर आचार्य, मरूस्थली का सपना, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2018, पृ. 79*
9. *नंदकिशोर आचार्य, थार का विस्तार सूना, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2018, पृ. 9*
10. *नंदकिशोर आचार्य, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर, 2018, पृ. 57*
11. *प्रभात त्रिपाठी, एक पाठक की डायरी, सेतु प्रकाशन, दिल्ली, 19991, पृ. 129*
12. *नंदकिशोर आचार्य, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मंदिर, बीकानेर, 2018, पृ. 59*
13. *नंदकिशोर आचार्य, तुमुल कोलाहल कलह में, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2018, पृ. 213*
14. *नंदकिशोर आचार्य, अपराहन, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, 2018, पृ. 263*
15. *वही, पृ. 338*
16. *नंदकिशोर आचार्य, वह एक समुद्र था, सूर्य प्रकाशन मन्दिर बीकानेर, 1982, पृ. 48*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 17–23

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

1857 की क्रांति में त्यागियों के पाँच 'बागी' गांवों का योगदान

(कुम्हेड़ा, खिदौड़ा, भनेड़ा, सुहाना और गयासपुर के विशेष संदर्भ में)

डॉ.सय्यदा बेगम
असिस्टेंट प्रोफेसर, अंग्रेजी, एस.डी.डी.के.के. (पी.जी.) कॉलेज, चिंगरावटी, बुलन्दशहर (उ.प्र.)
Mob. +91 7817958055

सारांश

उत्तर प्रदेश के जिला गाजियाबाद में त्यागियों के पाँच गाँव 'बागी' गाँव के नाम से जाने जाते हैं। प्रो. विघ्नेश कुमार त्यागी जी ने इन गाँवों के बारे में विवरण तैयार किया है। 10 मई, 1857 के दिन मेरठ की धरा से क्रांति का आगाज हुआ और अगले दिन क्रांतिकारियों ने दिल्ली पहुँचकर उसी कार्य की पुर्नावृत्ति की उन्होंने 11 मई की रात को क्रांति का नेतृत्व करने के लिए सम्राट की स्वीकृति करा ली थी। इस प्रकार कुम्हैड़ा, खिदौड़ा, भनेड़ा, सुहाना, गयासपुर गाँवों के ग्रामीणों का अंग्रेजी शासन में हर प्रकार से दमन किया गया। उनकी आर्थिक स्थिति अत्यधिक दयनीय हो गयी। 1857 की घटना से पूर्व के स्वयं जमींदार थे परन्तु अंग्रेजी सरकार ने उन्हें बागी घोषित करके काश्तकार बना दिया। इससे समाज में उनकी प्रतिष्ठा गिर गयी। अनेक वर्षों तक इन गाँवों के लड़को एवं लड़कियों की शादियों में अत्यधिक बाधा आयी। एक किंवदन्ती के अनुसार, दीवान जब कैप्टन ओसबर्न को बन्द पालकी में बैठाकर नेकपुर ले जा रहा था, तब रास्ते में खिंदौड़ा–गयासपुर मार्ग पड़ा। इस मार्ग पर एक विशाल बरगद का वृक्ष था जिसके नीचे कुछ ग्रामीण बैठे बातचीत कर रहे थे, जो आपस में उक्त घटना की चर्चा कर रहे थे। जब बंद पालकी वहाँ से गुजरी तो ग्रामीणों ने दीवान को आवाज लगा कर कहा कि 'इस बंद पालकी में कौन बैठा है?' तब उसने कहा कि ''मेरी घरवाली की तबीयत खराब है और मैं उसे नेकपुर में हकीम के पास इलाज के लिए ले जा रहा हूँ।'' वहीं बंद पालकी में बैठे ओसबर्न ने उन ग्रामीणों की बातों को सुना। जहाँ उसे मालूम हुआ कि उसके अंग्रेज साथियों को मारने में कुम्हैड़ा, खिंदौड़ा, गयासपुर, भनेड़ा व सुहाना के क्रान्तिकारी ग्रामीणों का हाथ था। नेकपुर गांव के हुसैनी दर्जी ने कैप्टन ओसबर्न को रात्रि के अंधेरे में ही धौलड़ी के सैयदों के पास पहुँचा दिया। यहाँ से कैप्टन ओसबर्न सकुशल लालकुर्ती मेरठ बूचड़ वालों के पास पहुँच गया। ये अंग्रेजी सेना को मांस की आपूर्ति करते थे। इन्होंने ओसबर्न को सकुशल अंग्रेज कलेक्टर के पास पहुँचा दिया।

मुख्य शब्द : क्रांति, ग्राम, पालकी, समाज, जमींदार

आधुनिक उत्तर प्रदेश के मेरठ मण्डल के डिस्ट्रिक्ट जिला गाजियाबाद में त्यागी, जो खानदानी जमीदारों की सर्वप्रमुख ब्राह्मण उपजाति है, के पाँच गांव आस–पास के क्षेत्र में 'बागी' गांव के नाम से जाने जाते हैं। वास्तव में इस नामकरण के पीछे 1857 की क्रांति में इनकी भूमिका के कारण ऐसा हुआ। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रशासन में इन जमीदारों की न केवल जमींदारियाँ और सम्पत्ति ही जब्त कर ली थी, वरण इन्हें अत्यधिक कष्टपूर्ण और असम्मानजनक जीवन जीने के लिए भी बाध्य कर दिया था। प्रो. विघ्नेश कुमार त्यागी ने इनकी इस अवस्था का विशद्ध शोधपूर्ण विवरण तैयार किया है। वस्तुतः हुआ यह था कि विभिन्न कारणों की विद्यमानता ने अन्नतः 10 मई 1857 के दिन मेरठ की धरा से क्रांति का प्रस्टुफन हुआ और अगले दिन क्रांतिकारियों ने दिल्ली पहुँचकर उसी कार्य की पुर्नावृत्ति की, उन्होंने 11 मई की रात को भले ही अनेच्छापूर्वक किंतु दबाव देकर क्रांति का नेतृत्व करने के लिए सम्राट की स्वीकृति करा ली थी।

लाल किला दिल्ली पर क्रांतिकारियों का कब्जा हो जाने और वहाँ स्थित अंग्रेजो का वध कर दिये जाने के पश्चात् मेरठ की घटनाएँ दिल्ली की सड़को पर भी दौहराई जाने लगी। ऐसे में लेफ्टिनेन्ट विलोग्बी ने त्वरित रूप से यह निर्णय लेना उचित समझा की अंग्रेजो की दिल्ली स्थित मैगजीन को विस्फोट करके उड़ा दिया जाए। उसमें इग्लैण्ड के प्रति अपनी प्रखर देशभक्ति का परिचय देते हुए इस कार्य को अंजाम दिया। जिसमें कपित्य अंग्रेज भी जल मरे लेकिन विलोग्बी बच गया। तत्पश्चात् लेफ्टिनेन्ट विलोबी दिल्ली मैगजीन का यह अवसर अपने चार साथियों क्रमशः लेफ्टिनेन्ट बटलर, लेफ्टिनेन्ट ओग्लो, लेफ्टिनेन्ट हाईस्लोक और दिल्ली कॉलिज में सेवारत स्टीवार्ट। कैप्टन ओसबर्न के साथ मेरठ की ओर चल पड़े, क्रांतिकारियों और क्रांतिकारी भीड़ से छिपते–छिपाते इस दल से हिण्डन पार की ओर दुहाई ग्राम से होकर जाने वाले बम्बे (छोटी नहर) पर चल दिये। बम्बे की पटरी आते हुए वे कुम्हैड़ा ग्राम पर आ पहुँचे थे, जहाँ कुम्हैड़ा ग्रामवासियों ने उन्हें ललकारा, वह खिदौड़ा की ओर दौड़ पड़े, नहर की पटरी का यह इलाका पाँच गांव के जंगलों का क्षेत्र माना जाता है। इन पाँचों गांव के ग्रामवासियों ने पाँच अंग्रेज मार डाले, जिनमें से चार लेफ्टिनेन्ट पद पर तैनात थे, केवल कैप्टन ओसबर्न ही जीवित बच सका। यह कैप्टन ओसबर्न था कि जान बचाने के लिए भागता–भागता छतता नामक स्थान पर पहुँच गया था, जहाँ नागल गांव का दिवान धीवर घास काट रहा था, इस संदर्भ में अपनी पुस्तक 1857 का विप्लव में प्रो. विघ्नेश कुमार लिखते हैं–

इन पाँचों गाँवों की क्रान्तिकारी भीड़ द्वारा उन अंग्रेजों में से 5 अंग्रेजों को नहर की पटरी पर कुछ–कुछ अन्तराल से मार दिया गया।[1] कहा जाता है कि ये अंग्रेज अत्यधिक बलशाली तथा हष्ट–पुष्ट थे। जब ग्रामीण उन्हें पकड़ने के लिए उनके पास आते थे तो वे नहर के कभी इस तरफ तो कभी दूसरी तरफ कूद जाया करते थे। एक अंग्रेज इन गाँवों की क्रान्तिकारी भीड़ से बचने के लिये भागता हुआ 'छत्ता' नामक स्थान पर पहुँचा। इस स्थान पर निकटवर्ती नांगल ग्राम का दीवान नामक व्यक्ति जो जाति से धीवर था, घास काट रहा था। जब उसे भागते हुए जीवित अंग्रेज ने घास काटते हुए उसे देखा तो उसने रूककर उससे कहा–'बाबा मुझे बचा। मेरे पीछे भीड़ आ रही है।' तब दीवान ने उसे सिंचाई के लिए बनी नाली की तरफ इशारा करके कहा कि–'भरे में लेट जा।' वह अंग्रेज उसमें लेट गया। उसके लेटने के पश्चात् दीवान ने उसके ऊपर पहले से काटी गई घास डाल दी।

जब कुछ समय पश्चात् क्रान्तिकारी ग्रामीण वहाँ से चले गये तब दीवान ने उस अंग्रेज को बाहर निकाला।[2] यह जीवित बचने वाला 54वीं सैनिक टुकड़ी का अंग्रेज कैप्टन ओसबर्न था। इस प्रकार ग्रामीणों के साथ हुए संघर्ष में दिल्ली गैगजीन का लेफ्टिनेंट विलोग्बी अपने चार साथियों बटलर (लेफ्टिनेंट, 54वीं सैनिक टुकड़ी), ओंगलो (लेफ्टिनेंट, 54वीं सैनिक टुकड़ी), हाईस्लोप (लेफ्टिनेंट, 74वीं सैनिक टुकड़ी) और स्वीवार्ट (दिल्ली कॉलेज) के साथ मारा गया। सायंकाल में जब अन्धेरा हो गया तब दीवान ने कैप्टन ओसबर्न को निकटवर्ती नेकपुर गांव में हुसैनी मुस्लिम दर्जी के पास पहुँचा दिया।

जब यह घटना घटित हुई थी उस समय इन पाँचों गांवों के त्यागी स्वयं जमींदार थे। कैप्टेन ओसबर्न की सूचना पर कुम्हैड़ा, खिंदौड़ा, गयासपुर, सुहाना व भनेड़ा गांवों की सम्पत्ति जब्त कर ली गई। इन गांवों की रिपोर्ट तैयार की गई जिसके आधार पर पाँचों गांवों में कुम्हैड़ा का कसूर अधिक पाया गया।[3] पाँचों गांवों को बागी घोषित कर दिया गया तथा कुम्हैड़ा को तोप से उड़ाने का आदेश दिया गया। कहा गया कि गांव को सबेरा होने से पूर्व ही जला दिया जाये।[4]

कुम्हैड़ा गांव में आग लगाने तथा उसे तोपों से उड़ाने के लिए अंग्रेजी सैनिक टुकड़ी ने रात्रि में ही मेरठ से प्रस्थान किया। लेकिन अंधेरा होने के कारण वह रास्ता भटक गयी और निकटवर्ती गांव खिमावती में पहुँच गई। अंग्रेजों ने जब यहाँ के ग्रामीणों से रास्ता पूछा तो उन्होंने कहा कि कुम्हैड़ा गांव पीछे ही रह गया है और उन्होंने उन्हें सरना गांव का रास्ता बता दिया। इस सैनिक टुकड़ी में एक भारतीय सैनिक था, जो इस क्षेत्र से सम्बन्धित था। वह पूरी रात सरना के डहर (तालाब) में अंग्रेज सैनिकों को घूमाता रहा। भोर होने पर ही सैनिक टुकड़ी कुम्हैड़ा पहुँच सकी।[5] परन्तु तब तक कुम्हैड़ा के ग्रामीणों को अंग्रेज सैनिकों के आने की खबर मिल गई थी। सूचना मिलने पर वे निकटवर्ती गांवों में भागकर छिप गये। साक्षात्कार के दौरान यह तथ्य भी सामने आया कि उस समय पैदा हुए कुम्हैड़ा गांव के अनेक व्यक्तियों का जन्म अन्यत्र स्थानों पर हुआ था।[6]

कुम्हैड़ा में अंग्रेजी सेना भोर के समय ही पहुँच चुकी थी इसलिए अभी गांव के कुछ हिस्से में आग लगायी ही थी कि सूर्योदय हो गया। चूंकि गांव को रात्रि में ही जलाने के आदेश हुए थे, परिणामतः दिन निकलने पर अंग्रेजी सैनिकों की टुकड़ी वापिस चली गयी। कुम्हैड़ा में उस समय आग से जली एक चौखट महावीर चारज पुत्र स्व. श्री मुन्शी पौत्र स्व. श्री हरवंश के दरवाजे पर कुछ वर्ष पहले तक थी लेकिन उपेक्षा के कारण वर्तमान में यह चौखट नष्ट हो चुकी है।

यद्यपि अंग्रेजी सेना के कुम्हैड़ा गांव में प्रवेश करने से पूर्व ही अधिकांश ग्रामीण अन्य गांवों में भाग गये थे परन्तु कुछ व्यक्ति गांव में ही छिपे रह गये। इनमें से छः ग्रामीणों को अंग्रेजों ने पकड़ लिया और उन्हें फाँसी दे दी गयी। इन फाँसी लगने वाले ग्रामीणों में तीन त्यागी जमींदार, सुन्दर चूढ़ा (हरिजन), बंसी चारज व निहाल चारज थे। निहाल की पत्नी अपने पति के मृत शरीर के साथ सती हो गयी।[7] उसका थान गांव के निकट स्वराज त्यागी के खेत में ईंटों से बना है। यह खेत कुम्हैड़ा–गयासपुर मार्ग पर पड़ता है।

सरकार के आदेशानुसार इन गांवों की सम्पत्ति जब्त कर ली गयी। 1857 की उक्त घटना से पहले नांगल व झलावा ग्राम खिंदौड़ा गांव की जमींदारी में थे। कैप्टन ओसबर्न को बचाने के कारण खिंदौड़ा गांव की 3600 बीघा जमीन जो अत्यधिक उपजाऊ थी, ईनाम में नांगल गांव के दीवान धीवर को दे दी गयी।[8] परिणामस्वरूप दीवान धीवर जमींदार बन गया। यद्यपि दीवान को जिस समय जमींदारी मिली थी, तब उसकी आयु अधिक हो चुकी तथा वह उसका अधिक दिन तक भोग नहीं कर सका। उसकी मृत्यु कुछ समय पश्चात् हो गयी लेकिन उसके वंशज जमींदार बने रहे। दीवान के पुत्र हेतराम (हेतू) ने नांगल गांव में एक हवेली का निर्माण कराया जो वर्ममान में भी अच्छी अवस्था में है। यह हवेली लखौरी ईंटों द्वारा निर्मित है तथा इसमें चूने की चिनाई की गयी है। हवेली का मुखद्वार काफी विशाल है। इसमें व्यक्ति हाथी पर बैठ कर आराम से बाहर या अन्दर आ जा सकता है। कहा जाता है कि दीवान का पुत्र हेतराम गांव में लगान वूसली के लिए हाथी पर बैठकर जाया करता था।[9] लेकिन अधिक दिनों तक वे ईनाम में मिली जायदाद को सम्भाल कर नहीं रख सके। 1947 ई. तक आते–आते इनकी जमीन–जायदाद को सम्भाल कर नहीं रख सकें 1947 ई. तक आते–आते इनकी जमीन–जायदाद समाप्त हो गयी। स्वतंत्रता के पश्चात् जमींदारी निषेध अधिनियम लागू होने के कारण रही सही जायदाद भी समाप्त हो गयी। वर्तमान में भी दीवान के वंशज इस हवेली में रह रहे हैं।

खिंदौड़ा गांव की 1800 बीघा जमींन नेकपुर के हुसैनी दर्जी को दे दी गयी। जो खिंदौड़ा के समीप ही झलावा ग्राम में आ बसा।[10] यह त्यागी मुस्लिम बाहूल्य गांव है। खिंदौड़ा गांव से इसकी दूरी 1 किलोमीटर है।

खिदौड़ा गांव की बाकी बची हुई भूमि धौलड़ी के सैयदों को ईनाम में दे दी गयी। यहाँ के ग्रामीणों की भूमि को जब्त करके इस प्रकार से बांट दिया गया–

1. 3600 बीघा भूमि नांगल के 'दीवान' धीवर को,
2. 1800 बीघा भूमि नेकपरु के 'हुसैनी' दर्जी को, और
3. बाकी बची हुई भूमि धौलड़ी के सैयदों को।

जमीन–जायदाद जब्त हो जाने पर खिंदौड़ा के ग्रामीणों को अत्यधिक विपत्ति उठानी पड़ी। धौलड़ी के सैयदों के कारिन्दे खिंदौड़ा में शाम को गल्ला (गेहूँ) पीसने के लिये दे जाते थे। उसे पूरी रात्रि में गांव की महिलाएँ पीसती थीं। सुबह को पीसा हुआ आटा धौलड़ी भेजा जाता था। अगले दिन फिर यही क्रम। आज भी खिंदौड़ा के ग्रामीण कहते हैं कि ''कई वर्षों तक खिंदौड़ा ने धौलड़ी के सैयदों की पिसनी पीसी है।'' जमींदार सैयदों के जानवर खिंदौड़ा के किसानों की खड़ी फसलों को खा जाते थे जिससे ग्रामीणों को नुकसान उठाना पड़ता था। नुकसान की पूर्ति भी नहीं की जाती थी। धौलड़ी के जमींदार ने खिदौंड़ा गांव में नया 'पूँछी कर'[11] लगाया। गांव के व्यक्ति किसी भी वृक्ष से ईधन में इस्तेमाल करने के लिए सूखी लकड़ी नहीं काट सकते थे। कोई भी व्यक्ति अपने महल में पक्की ईटें तक नहीं लगा सकता था। यहाँ तक कि चूल्हे में भी पक्की ईंट नहीं लग सकती थी। अगर किसी ने पक्की ईंट लगवा भी दी तो उसे अनेक प्रकार की यातनाएँ दी जाती थी। उसके हाथ चारपाई के पाये के नीचे दबवा दिये जाते थे।[12] अगर समय पर किसान लगान देने में असमर्थ रहता था तो उसे जमीन से बेदखल कर दिया जाता था।

कुछ समय पश्चात् गांव कुम्हैड़ा व गयासपुर जमींदार कम्भो की जमींदारी में आ गये। कहा जाता है कि कम्भो जमींदार कुम्हैड़ा व गयासपुर से वसूल किया गया लगान खैरात में दे देता था। इस बारे में किंवदन्ती चली आ रही है कि कुछ ग्रामीणों ने एक बार कम्भो जमींदारों से कहा कि 'जो भूराजस्व कुम्हैड़ा व गयासपुर गांव से प्राप्त किया जाता है उसे आप खैरात में क्यों दे देते हैं? तब जमींदार कम्भो ने कहा कि–

'जब इन गांवों के ग्रामीण इतने कटखने हैं तो इनका पैसा भी इतना ही कटखना होगा। उस पैसे को अगर हम अपने लिए खर्च करेंगे तो हमें डर है कि उन अंग्रेजों के समान ही कभी हम भी न मारे जाऐं।' आज भी बोलचाल में कुम्हैड़ा व गयासपुर गांवों को ''खैराती गांव'' कहा जाता है।[13]

इस प्रकार पांचों गांवों के ग्रामीणों का प्रत्येक प्रकार से दमन किया गया ताकि ये पुनः अंग्रेजी सरकार का विरोध करने की स्थिति में न रह सकें। इन ग्रामीणों को जब्त की गई भूमि को पुनः खरीदने का अधिकार नहीं था। आदेश जारी किया गया कि यदि कोई ग्रामीण पुनः अपनी जमीन को खरीदें तो उसे दोबारा जब्त कर लिया जाये।[14] खिंदौड़ा ग्राम इसका प्रत्यक्ष गवाह रहा है। घटना के कुछ समय पश्चात् यहाँ के त्यागी जमींदारों ने जब्त की गयी भूमि को पुनः खरीदने का प्रयास किया लेकिन भय के कारण स्वयं वे जमीन खरीदना नहीं चाहते थे। अतः ग्राम के व्यक्तियों ने सामूहिक रूप से किसी मध्यस्थ को लेकर भूमि को खरीदना चाहा कि जब अमन शान्ति हो जायेगी तब मध्यस्थ व्यक्ति से खरीदी जमीन वापिस ले लेंगे। आरम्भ में ग्रामीण असौड़ा रियासत के मालिक चौधरी हरदयाल त्यागी के नाम पर भूमि खरीदना चाहते थे परन्तु सभी ग्रामीण इस राय पर एकमत न हो सके। इसका कारण यह था कि खिंदौड़ा गांव में चौधरी कँवरसैन (गढ़ी वाले) के परिवार का सम्बन्ध चौधरी हरदयाल त्यागी से थे। अतः कुछ ग्रामीणों को शक हो गया कि कहीं वे खरीदी गयी सम्पूर्ण जमीन गढ़ी वालों को न दे दें।

यहाँ इस घटना से सम्बन्धित एक किंवदन्ती और चली आ रही है कि जब अंग्रेजों ने कान्हा को मार डाला तथा पांचों गांवों के क्रान्तिकारी ग्रामीण 'मारो फिरंगी को' कहते हुए अंग्रेजों के पीछे दोड़ पड़ें। तब उन्हें शीघ्र नहीं मारा गया वरन् उनको पकड़ लिया गया। पांचों गांवों के त्यागी ग्रामीणों में उनके सम्बन्ध में बहस चल रही थी कि पकड़े गये अंग्रेजों का क्या किया जाए? तभी खिंदौड़ा ग्राम के चौधरी कंवरसैन के पुत्र चौधरी जालिम ने कहा कि 'पकड़े हुए बन्दी मनुष्य को मारना नहीं चाहिये चाहे वह हमारा शत्रु ही क्यों न हो।' तब वहाँ उपस्थित कुछ ग्रामीणों ने जालिम सिंह का उपहास उड़ाते हुए कहा कि–**''कँवरसैन की चौंडिया का कहरी है?''** जालिम सिंह तभी उस स्थान से वापिस लौट जाये। उनके वापिस लौटने के पश्चात् उन बन्दी अंग्रेजों को क्रान्तिकारी ग्रामीणों द्वारा मारा गया।

क्योंकि कुछ ग्रामीणों ने जालिम सिंह का 'कँवरसैन की लौंडिया' कहकर उपहास उड़ाया था, इसीलिए उन्हें यह शक हुआ कि अगर उन्होंने जब्त की गयी भूमि असौड़ा जमींदार के नाम से खरीदी तो कहीं वे उसे गढ़ी वाले परिवार को न दे दें।[15]

अन्त में यह फैसला किया गया कि किसी ऐसे व्यक्ति के नाम भूमि खरीदी जानी चाहिये जो त्यागी जाति से सम्बन्धित ही न हो, साथ ही साथ वह ईमानदार भी होना चाहिये। तब

निकटवर्ती ग्राम पतला के निवासी 'हीरा' का चयन किया गया, जो जाति से बनिया था। खिंदौड़ा के ग्रामीणों ने 8–10 हजार रूपया सामूहिक रूप से इकट्ठा करके अपनी जब्त की गयी भूमि में से कुछ भूमि पुनः खरीद ली। लेकिन यहाँ यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि वे अभी भी धौलड़ी के सैयदों, नांगल के धीवर व झलावा (नेकपुर) के दर्जी के काश्तकार बने रहे। कुछ समय बीत जाने के पश्चात् जब शान्ति स्थापित हो गयी तब खिंदोड़ा वालों ने हीरा बनिये से जमीन अपने नाम वापिस करानी चाही परन्तु वह बेईमानी पर आ गया। उसने कहा कि–''उसे भी बदले में कुछ चाहिये।'' तब खिंदौड़ा के त्यागियों ने 25 बीघा जमीन बाग लगवाकर हीरा बनिये को दी, जिसमें उसके पुत्र विशम्बर ने एक मन्दिर का भी निर्माण कराया। वर्तमान में बाग कट चुका है लेकिन यह मन्दिर आज भी इस स्थान पर स्थित है। 25 बीघा जमीन मिलने के बाद भी हीरा बनिये ने भूमि खिंदौड़ा के ग्रामीणों को वापिस नहीं की बल्कि पुनः उसका मूल्य लिया। तब ग्रामीणों ने अलग–अलग रूपया देकर उस भूमि को खरीदा।[16]

इस प्रकार कुम्हैड़ा, खिंदौड़ा, भनेड़ा, सुहाना, गयासपुर गांवों के ग्रामीणों का अंग्रेजी शासन में हर प्रकार से दमन किया गया। उनकी आर्थिक स्थिति अत्यधिक दयनीय हो गयी। 1857 की घटना से पूर्व वे स्वयं जमींदार थे परन्तु अंग्रेजी सरकार ने उन्हें बागी घोषित करके काश्तकार बना दिया। इससे समाज में उनकी प्रतिष्ठा गिर गयी। अनेक वर्षों तक इन गांवों के लड़कों एवं लड़कियों की शादियों में अत्यधिक बाधा आयी।[17] स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् काश्तकारी विधेयक पास होने पर ही इनकी जब्त की गयी भूमि वापिस मिल सकी। परन्तु वे फिर भी उपेक्षित ही रहे। आज भी यदा–कदा सार्वजनिक समारोहों में इन गाँवों के ग्रामीणों को ''बागी'' कहकर देश के प्रति उनके पूर्वजों के त्याग व प्रेम की भावना का उपहास उड़ाया जा रहा है जिससे वे स्वयं को अपमानित महसूस करते हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र में त्यागी समाज के पाँच गाँवों का अध्ययन करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इन पाँचों गाँवों में कुम्हैड़ा गाँव के त्यागी समाज के लोगों ने अंग्रेजों से लौहा लिया व अपने प्राणों की आहुति दी। अतः इनके योगदान को कभी भी भुलाया नहीं जा सकता है।

खिंदौड़ा गांव के साथ–साथ अन्य चारों गांवों की सम्पत्ति भी जब्त कर ली गयी थी। कुम्हैड़ा, सुहाना, भनेड़ा और गयासपुर, लालकुर्ती मेरठ बूचड़ वालों की जमींदारी में दे दिये गये। इन गांवों पर भी जमींदार लालकुर्ती ने अत्यधिक ज्यादतियाँ की। कोई भी ग्रामीण ईंधन के लिए सूखी लकड़ी नहीं काट सकता था। पक्के मकान बनाने की भी ग्रामीणों को इजाजत नहीं थी। उन्हें जमींदार कभी भी भूमि से बेदखल कर सकता था। लगान न दे पाने पर समस्त उपज जब्त कर ली जाती थी। जमींदार लालकुर्ती मेरठ के कारिन्दे सुहाना गांव में रहते थे। वे ग्रामीणों को परेशान करते थे। सुहाना में नील पकाया जाता था। नील पकाने में ग्रामीणों को बेगार करनी पड़ती थी। यहाँ नील पकाने के चौबच्चे कुछ समय पहले तक मौजूद थे।

❐

सन्दर्भ –

1. *एस.एन. सेन : पूर्वाक्त, पृ.9*
   साक्षात्कार के दौरान पाँचों गाँवों के ग्रामीणों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है। छत्ता स्थान खिंदौड़ा ग्राम से नांगल, सुहाना ग्रामों को जाने वाले मार्ग पर स्थित है। इस स्थान को छत्ता इसलिए कहा जाता है क्योंकि यहाँ कई नहरें एक–दूसरे के ऊपर व नीचे से होकर जाती हैं।
2. *साक्षात्कार, दिनांक 27.07.2003, श्री रघुवर पुत्र स्व. श्री भगवान सहाय, आयु 88 वर्ष, जाति त्यागी, ब्राह्मण, ग्राम गयासपुर।*
   साक्षात्कार, दिनांक 10.06.2004, श्री जसवीर पुत्र श्री बन्सी, आयु 50 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम भनेडा।
3. *साक्षात्कार, दिनांक 10.06.2004, श्री नामानन्द त्यागी, पूर्वोक्त।*
   साक्षात्कार, दिनांक 12.06.2004, श्री रघुनाथ त्यागी पुत्र स्व. श्री सीताराम पौत्र स्व.श्री टीकाराम, आयु 65 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा।
4. *साक्षात्कार, दिनांक 18.06.2004, श्री शिवचरण चारज, पूर्वोक्त व श्री ओंकार त्यागी, पूर्वोक्त।*
5. *साक्षात्कार, दिनांक 02.06.2004, श्री जितेन्द्रवीर पुत्र स्व. श्री देवदत्त त्यागी, आयु 56 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम गयासपुर व श्री ओमदत्त पुत्र स्व. श्री राजबल पौत्र स्व. ताराचन्द, आयु 72 वर्ष, साक्षात्कार, दिनांक 12.06.2004, श्री ताराचन्द त्यागी, पूर्वोक्त। साक्षात्कार, दिनांक 30.03.2004, श्री गजराज सिंह पुत्र स्व. श्री बशीराम, आयु 71 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खुर्रमपुर।*
6. *साक्षात्कार, दिनांक 12.06.2004, श्री ताराचन्द त्यागी, पूर्वोक्त। साक्षात्कार, दिनांक 10.06.2004, श्री रामनिवास त्यागी, पूर्वोक्त व श्री रामानन्द त्यागी, पूर्वोक्त।*
7. *वही।*
8. *साक्षात्कार, दिनांक 08.06.2004, श्री गंगाशरण पुत्र स्व. श्री माले सिंह पौत्र स्व. श्री दिलीप सिंह, आयु 60 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा व श्री ब्रह्मादत्त त्यागी पुत्र श्री सुखदेव पौत्र स्व. श्री हरवेद प्रपौत्र स्व. श्री गंगासहाय, आयु 59 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा व श्री भीम सिंह पुत्र स्व. श्री हजारी लाल, आयु 87 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा।*
9. *साक्षात्कार के समय ग्राम खिंदौड़ा के अधिकांश बुजुर्गों ने इसकी जानकारी दी।*
10. *साक्षात्कार, दिनांक 02.06.2004, श्री मुनीश्वर त्यागी, पूर्वोक्त। साक्षात्कार, दिनांक 02.06.2004, मुहम्मद अशरफ पुत्र हाफिज अली, आयु 43 वर्ष, जाति त्यागी मुसलमान, ग्राम इलावा व फैज्जा त्यागी (उर्फ मन्त्री जी), आयु 92 वर्ष, जाति त्यागी मुसलमान, ग्राम झलावा।*
11. *यह कर दूध देने वाले तथा कृषि में प्रयुक्त होने वाले प्रत्येक जानवर पर लगाया गया।*
12. *साक्षात्कार के समय अनेक ग्रामीणों ने इसकी जानकारी दी।*
13. *साक्षात्कार, दिनांक 12.06.2004, श्री ताराचन्द त्यागी, पूर्वोक्त। साक्षात्कार, दिनांक 10.06.2004, श्री रामानन्द त्यागी, पूर्वोक्त व श्री रामनिवास त्यागी, पूर्वोक्त।*
14. *साक्षात्कार, दिनांक 12.06.2004, श्री रघुनाथ त्यागी (रिटायर्ड प्रवक्ता, सौंदा इण्टर, कॉलिज) पुत्र स्व. श्री सीताराम पौत्र स्व. श्री टीकाराम, आयु 65 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा।*
15. *साक्षात्कार, दिनांक 11.06.2004, श्री रामकिशन पुत्र स्व. श्री रूपचन्द पौत्र स्व. श्री उमराव सिंह प्रपौत्र स्व. श्री रामदयाल प्रप्रोत्र स्व. श्री कुबेर दत्त, आयु 63 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा व श्री अनिल कुमार पुत्र श्री फकीर चन्द, आयु 35 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम गयासपुर, वर्तमान निवास शिवपुरी, मोदीनगर।*
16. *साक्षात्कार, दिनांक 08.06.2004, श्री मुनीराज त्यागी पुत्र श्री सुरेन्द्रपाल पौत्र स्व. श्री वासुदेव प्रपौत्र स्व. श्री हरिसिंह प्रपौत्र स्व. श्री तुल्ला सिंह, आयु 45 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा।*
17. *साक्षात्कार, दिनांक 08.06.2004, श्री भीम सिंह पुत्र स्व. श्री हजारीलाल, आयु 87 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा व श्री सुखदेव त्यागी पुत्र स्व. श्री हरदेव त्यागी, आयु 82 वर्ष, जाति त्यागी, ग्राम खिंदौड़ा व श्री सौराज सिंह, पूर्वोक्त।*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 24–29

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

'जंगल जहाँ से शुरू होता है' उपन्यास में आदिवासी जीवन

मयुरी मजुमदार
शोधार्थी, कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी, असम
E-mail : mayurimajumdar2@gmail.com Mob. +91 6001266914

सारांश

आदिवासी शब्द का प्रयोग उन भौगलिक क्षेत्र के निवासियों के लिए किया जाता है जिनका उस भौगलिक क्षेत्र से सम्बन्ध ऐतिहासिक रूप से सबसे पुराना हो। आदिवासी समुदाय के लोग प्रारम्भ से जंगलों और दुर्गम स्थानों में निवास करते आए हैं। आदिवासी आधुनिकता से पुर्णतः बेखबर है। उनके अपने समाज की लय, भाषा, रहन–सहन, पर्व–त्यौहार और देवी देवताओं का सम्बन्ध आज भी प्रकृति के आधार पर ही चलते रहने के कारण भारत के मूल निवासी कहने में कोई संशय नहीं है। "जंगल जहाँ शुरू होता है" उपन्यास संजीव द्वारा रचित है। उपन्यास में थारू आदिवासी, सामान्य जन, डाकू, पुलिस–प्रशासन, राजनीति, धर्म, समाज और व्यक्ति का चित्रण किया है। डाकुओं द्वारा थारू आदिवासियों का शोषण, जमींदारों द्वारा शोषण, बेगार, औरतों का शारीरिक शोषण आदि विषयों को केंद्र में रखकर उपन्यास प्रस्तुत किया गया है।

मूल शब्द– आदिवासी, थारु, डाकू ।

भूमिका

आदिवासी देश के मूल एवं प्राचीनतम निवासी हैं। आदि का अर्थ है 'मूल' एवं निवासी का अर्थ है 'निवास करनेवाला'। "आदिवासी शब्द दो शब्दों 'आदि' और 'वासी' से मिलकर बना है। इसका अर्थ मूल निवासी होता है। संस्कृत ग्रंथ और पुरातन लेखों में आदिवासियों को आत्विका और वनवासी भी कहा गया है।"[1] वन आदिवासी समाज के ओतप्रोत अंग हैं। आदिवासी समाज की अर्थव्यवस्था को गति और उनके संस्कृति वनों से जुड़े होते हैं जंगल एवं वनों से आदिवासी प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों रूपों से लाभान्वित होता है।

जंगल जहाँ शुरू होता है उपन्यास हिदी साहित्य के प्रसिद्ध लेखक संजीव द्वारा रचित है। उपन्यास का प्रकाशन 2000 ई. में हुआ था । उपन्यास का केंद्रस्थल पश्चिमी चम्पारण है जो मिनी चंबल नाम से जाना जाता है। उपन्यास में बेटिया क्षेत्र के थारू आदिवासियों का वर्णन किया गया है। संजीव ने उपन्यास में थारू आदिवासी, सामान्य जन, डाकू पुलिस और प्रशासन, राजनीति, धर्म, समाज और व्यक्ति का चित्रण किया है। डाकुओं द्वारा थारू आदिवासियों का शोषण, आदिवासियों का प्रकृति संघर्ष साथ ही जमींदारों द्वारा शोषण, बेगार, औरतों का शारीरिक शोषण आदि विषयों को केंद्र में रखकर उपन्यास प्रस्तुत किया गया है।

उपन्यास में वर्णित इस क्षेत्र के थारू लोग बैल चुराकर, लड़कियाँ बेचकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं साथ ही डाकुओं और पुलिस के अत्याचारों से हमेशा त्रस्त ग्रस्त रहते हैं। उपन्यास का प्रमुख पात्र काली और कुमार साहब है। काली थोड़ा बहुत पढ़ा–लिखा है, लेकिन इस शोषित समाज के कारण उसे शिक्षा से बहुत दूर रहना पड़ता है। बाद में वह डाकू बनकर एक गिरोह का सरदार बन जाता है। कुमार साहब एक पुलिस ऑफिसर है जो डाकू उन्मूलन के लिए एक अभियान चलाते है, जिस अभियान का नाम 'ब्लैक पाइथन' रखा जाता है। जंगल में महामारी की तरह फैले डाकू समस्या को खत्म करने की जिम्मेदारी कुमार को सौंप दिया गया। उपन्यास में अन्य पात्र बिसराम, मलारी, परशुराम, पारबती, दुबेजी, सुदर्शन सिंह, जायसवाल, परेमा, रामदास, इन्नरदेव, रामलाल, मुरली पांडे, रजुआ, श्यामदेव, नरैना आदि हैं।

विश्लेषण

पुरे उपन्यास ऑपरेशन ब्लैक पाइथन से जुड़े हुए है। यह अभियान पश्चिम चंपारण में डाकू उन्मूलन के लिए पुलिस द्वारा किया गया एक अभियान है। उपन्यास की कथावस्तु अभियान और डाकुओं के इर्द–गिर्द चलता है। इस अभियान के लिए कुमार को पटना से बेटिया भेज दिया जाता है। उप महानिरीक्षक सिन्हा साहब इस सीमांत अंचल के नागरिकों को डाकुओं से मुक्त करने के लिए चार टीम बनाते हैं। उप–अध्यक्ष कुमार को रहने की व्यवस्था एक पुराने गवर्नमेंट गेस्ट हाउस रानी महल में कर दिया जाता है। महल का चौकीदार पारबती है। दुसरे ही दिन कुमार दफ्तर का मुआयना करता है। कुमार निराश हो जाता है क्योंकि एक भी डाकुओं का फोटो उसके पास नहीं थे। इस दुर्गम पहाड़ों, दूर–दूर तक फैले गन्ने के खेतों, जंगलों में डाकुओं को ढूंढ पाना मुश्किल है। यहाँ के परिवेश डाकुओं के लिए अनुकूल थी, डाकू इस पुरे क्षेत्र के चप्पे–चप्पे को भली–भाँति जानते थे। दफ्तर में रहते समय पारबती कुमार के लिए चाय की ट्रे लेकर आता है और रामनवमी के दिन सहोदरा माई के पूजा के बारे में बताते है। पारबती के कहने पर कुमार मेले में जाता है, कुमार मन ही मन सोचता है कि शायद वहाँ कोई डाकू मिल जाए।

थारु आदिवासी लोग जमींदार, अधिकारी, डाकू से शोषित है। डाकू अपने हथियार के लिए आम आदमियों की सहायता लेते हैं, लेकिन उनलोगों को ही पुलिस डाकुओं से सम्बन्ध रखने की खातिर पिटाई करते हैं। सुचना के अनुसार एकदिन कुमार अपने साथियों के साथ डाकुओं के पीछा करते हुए जंगल में जाते है। लेकिन जाकर उसे पता चलता है कि कुछ लोग ओझा के पास आए हुए हैं एक लड़की को साँप ने काट लिया है। बिसराम की लड़की दुलारी को साँप ने काटा था और वह मर गयी। अपनी बेटी की क्रिया कर्म, पूजा–पाठ के लिए बिसराम

की पत्नी अपना आखिरी गहना गले की हँसुली बेच देती है । बिसराम के खेतों को जमींदार हड़प लेते है, जिसके कारण मुकद्दमा चल रहा होता है। बिसराम का छोटा भाई काली है जो खुदाई का काम करता है, लेकिन समय पर ठेकेदार उसका पैसा नहीं देता है। बिसराम के हाथ में हुनर है झुड़ी खाँची तो वो आराम से बना सकता है। लेकिन वह जंगल से बेंतला सकता है क्योंकि ठेकेदार और वन विभागवाले उसे लाने नहीं देंगे। बिसराम चारों और से निराशा से भरा हुआ था।

एकदिन बिसराम के झोपड़ी से देसी घी, बासमती चावल और गरम मसालों खुशबु आती है। बिसराम का दिल घबरा जाता है उसके पूछने पर पत्नी कहती है परसुराम सरदार का खाना है। मन ही मन बिसराम को डर लगा रहता है यदि इसके बारे में पुलिस को एकबार भनक भी पड़ जाए तो दुलारी की माइ को उठा ले जाएंगे। जेठ बीत गया, मलिकार उनलोगों के भैंस को ले जाना दस दिन हो गए। उसी दिन खाकी वर्दीवाले आकर दुलारी की माइ को पकड़कर ले गए। सूरज निकलने के बाद बिसराम की नजर पड़ती है उसकी पत्नी आ रही है, "कनमनाकर खड़ा हो जाता है बिसराम डरे हुए कुत्ते की तरह। छिन–भर की तसल्ली और ढेरों दुश्चिंताएँ। हे माता भवानी, उसे सिर्फ मारा–पीटा ही गया हो, इज्जत न गयी हो।"[2] बिसराम दुखी होकर अपने भाई काली के साथ यहाँ की सब मोह त्याग कर नेपाल जाने की बात करते है। लेकिन काली कहता है कि नेपाल जाने के लिए वहाँ की नागरिकता मिलना बहुत जरुरी होती है, नागरिकता मिले बिना हम नहीं जा सकते। दोनों भाई इन सबसे परेशान हो गए थे, मास्टर जी के समझाने के बाद दोनों भाई कुमार से मिलने के लिए नदी किनारे खड़े हो जाते हैं । लेकिन कई बार कोशिश करने पर भी नहीं मिल पाते।

मंत्री जी की बेटी की शादी में चारों जोन के पुलिस वाले और अनेक गण्य मान्य अतिथि आए हुए थे। लेकिन दुबेजी की पत्नी जशोदा देवी असंतुष्ट है। यशोदा देवी कहते है, "बिन्दा अउर गोकुल अउर का तो हाँ परशुराम भी आया है। पुलिस भी, डाकू भी ?"[3] मंत्री जी को धीरे धीरे सबकुछ याद आ रहे है कि पिछले चुनाव में इन डाकुओं ने लाख–लाख रुपये पार्टी फंड में वसूल कर दिए थे। लेकिन हम भी जितने हो सके इन तीनों को मदद करते आ रहे है। दुबेजी की घर से बेटी की बारात जाने के बाद अगले दिन गोकुल और बिंदा को मार दिया जाता है। कुमार को डाकू परशुराम से पत्र मिलता है। डाकू रिटायर्ड मास्टर भरत ार्मा को फिरौती के लिए किडनैप करते है। कुमार मास्टर के नौकर छोटन से पूछ–ताछ करते है। मुखबिर से सुचना मिलने पर कुमार अपनी टीम के साथ डाकुओं का पीछा करते हैं। गोलियाँ चलते हैं परन्तु डाकू नेपाल भाग जाने में सफल हो जाते हैं।

परशुराम के विषय में जानने के लिए कुमार चन्द्रदीप के पास जाता है। चन्द्रदीप ने कुमार को परशुराम के बारे में कहा, "मझरिया गाँव है सर, गोरखपुर के करीब उस रीजन में। नदी के कटाव से बेसहारा होकर आया था। बाबूजी को दया आ गई, रख लिया।"[4] चन्द्रदीप से मिलने के बाद कुमार भैरापुर के लल्लन बाबु के पास पूछताछ के लिए जाता है, "सुनिए, परेमा नाम का एक नौजवान कभी हमारे यहाँ काम करता था। हाँ, ठीक–ए कहे, जात का अहीर था, बाकी ऊ डाकू निकला की शौतान, हम नहीं जानते।"[5] (संजीव 2000: 55) कुमार बिसराम के घर गए लेकिन बिसराम और काली को नहीं मिल पाया, बिसराम के पत्नी से बात करके चला आया।

बीमारी के कारण बिसराम की पत्नी खाट में लेती रही। परशुराम को खाना बना देने की क्षेत्र में बिसराम की पत्नी कुमार को कहती है, "हम का करें साहेब, हमरा तो दुनों तरफ मौवत है – न बना के देते तो ऊ लोग मारता, बना के दिए तो आप लोग!"[6] कुमार के इन कार्यों से डाकू नाराज हो गए और गाँव वालों को पहले से ज्यादा कष्ट देने लगे । इन सारे घटनाओं को देख गाँव में रहने वाले मास्टर मुरली पांडे बहुत परेशान थे। इसी कारण उन्होंने गाँव के जवान लड़कों को लेकर एक ग्राम सुरक्षा दल बनाते है।

बिसराम और काली दोनों परेशान थे, उनलोगों की हालत पहले से भी ज्यादा बिगड़ने लगे थे। जगरनाथ जो नेपाल से लेकर गोरखपुर तक भटकता फिरता है, बैल चुराकर बेचने से लेकर लड़कियाँ बेचने तक का कार्य जगरनाथ करते है। काली को भी उसके साथ बिजनेश करने के लिए कहता है। खाँ की कहने से काली पंडीजी के साथ चल देते है। पंडीजी के यहाँ फेंकन और उसकी पत्नी भी काम करते हैं, जो दुसाध है। इन दोनों के साथ धागड़ भी है जो एक दुसरे बड़े काश्तकार चरित्तर पांड़े का हल जोतने के लिए लाया गया था। काली, फेंकन और धागड़ की आपस में दोस्ती हो जाती हैं। पड़ाइन फेंकन की पत्नी को बहुत अत्याचार करती है। एकदिन पड़ाइन ने तो स्त्री जाति की शर्मनाश कर दिया, "किवाड़ की झिरी से काली ने अन्दर का जो नजारा देखा तो रोंगटे खड़े हो गए। पांड़े और पड़ाइन ने उस औरत के हाथों से पकड़ रखा था और पांड़े का साला उसे दबोचे हुए था। बाप रे ! क्या एक औरत खुद अपने सामने एक दूसरी औरत का बलात्कार करवा सकती है ?"[7] पंचायत ने भी राय दिया कि पांड़े और उनके साले ऊँची जात का है, ऊँची जात वाले ऐसा काम नहीं कर सकते हैं। बेचारा फेंकन लाचार होकर थाने चला गया लेकिन कुछ नहीं हुआ। फिर परशुराम के यादव के पास गया, उन्होंने यह कह दिया कि वह चमारों, दुसाधों, धोबियों, कुम्हारों, लोहारों और नोनियाओं का केस नहीं लेता है। फेंकन की पत्नी को पड़ाइन हाथ–पाँव टीप देने के लिए कहा था, इस पर फेंकन बहु ने इन्कार करते हुए कहा कि, "हमसे आपका देह छुवा जाएगा।"[8] इतनी सी बात पर ही पड़ाइन ने उसका स्त्रीत्व ही नाश कर दिया।

इन सब घटनाओं से काली बहुत परेशान हो जाते है। काली की प्रतिक्रिया स्वरुप उपन्यासकार लिखते है, "हक की कमाई माँगने पर ठेकेदार के पास पैसे नहीं हैं और हराम की कमाई डकारने वाले दुराचारी लुटेरे परशुराम के लिए पंद्रह हजार ! आग घुल रही है काली के मन में। क्या वह इन हरामखोरों की बेगार करने और उनकी गांड़ धोने के लिए ही पैदा हुआ है ? हतक, हतक और हतक! हतक के सिवा कुछ नहीं। इसे अन्याय पर उसे क्या करना चाहिए यह बतानेवाला कोई नहीं दृ न कोई देवी–देवता, न कोई साधु–फकीर, न कोई लीडर–अफसर ! हर तरफ अँधेरा है, हर तरफ घुटन !"[9] काली अपने पुराने साथी नरैना के संग मिलकर सुलेमान खाँ के बेटे अल्ताफ को किडनैप करते हैं और फिरौती के लिए पैसा मांगते है। पुलिस काली और नरैना को पकड़ने के लिए भाग–दौड़ करती है। काली डाकू बन गए, यह समाचार सुनकर बिसराम को बहुत गुस्सा आता है। जोगी ने आकर बिसराम को गाँव छोड़ने के लिए कहते है क्योंकि पुलिस उनलोगों को छोड़ेंगे नहीं। महीने भर भटकने के बाद गंगौती–बाल्मीकिपुर के रास्ते में खड़े उतरे, वहाँ से बिसराम को सुदर्शन सिंह उठा लेते है। काली का पता पूछकर पुलिस बिसराम के ऊपर बहुत अत्याचार करने लगते है।

काली चन्द्रदीप सिंह का पुत्र अमरेन्द्र को भी कैद कर लेते है। इस पर काली पाँच लाख रुपए की मांग करता है। चन्द्रदीप सिंह पुरे पैसे लेकर मदनपुर माई के थान पहुँच जाते है । चन्द्रदीप से अपने परिवार और बेटे के लिए काली के सामने भिक्षा माँगते है । इस बात पर काली चन्द्रदीप सिंह से एक चर्त मांगते है, भैया–भाभी की सलामती। काली की तरफ से कुमार के लिए एक पत्र मिला, भैया–भाभी के कारण काली ने यह पत्र भेजा। काली ने पत्र के माध्यम से कुमार को मिलने की इच्छा प्रकट किया। कुमार ने काली से मिलने के लिए गया, काली को समर्पण के लिया कहा लेकिन काली नहीं माना।

रामजतन नोनिया और श्यामदेव को पुलिस पकड़ते है और मार देते हैं। पुलिस ने मलारी के गाँव को गुपचुप घेर लिया। उस दिन पुलिस को मलारी के घर से कुछ हासिल नहीं हुआ। एकदिन कुमार रात को मलारी के पास गया मलारी को बलात्कार करने के लिए। यह योजना उन्होंने पांडेय के साथ मिलकर किया। लेकिन जब उसे मालूम पड़ा कि लंगड़ा बाबा जग रहा है तब कुमार के होश ठिकाने आ गए, घबराकर वे वहाँ से चल दिए।

कुमार साहब बीमार पड़ता है। इसी कारण बनकटा पाण्डेयजी के कंट्रोल में आ गया, साथ ही बिसराम और काली का मामला भी। इसी दौरान बिसराम की मृत्यु हो गयी, "दर्जी की दुकान पर इब्राहिम चाचा ने भर्राए कंठ से बताया, "आज जेल में ही एनकाउंटर कर डाला। मार डाला बिसराम भाई को। रात दू बजे के टैम। बोले, जेल का चहारदीवारी फाँद के भाग रहा था। वो बेचारा तो चल भी पा नहीं रहा था, उठाके ले आते थे पूछताछ के लिए, लेकिन पुलिस और गौरमेंट के लोग जो बोले, वही सच है । लाश रखी हुई है कि काली इसी बहाने आ जाए तो...।"[10] इन घटनाओं से काली कुमार से बहुत नाराज होता है। इसी बीच चुनाव का समय भी आ जाता है। इस बार परशुराम भी चुनाव में खड़ा हुआ है। काली के दल के सभी लोग डाकू की जिन्दगी से थक जाते है। काली की आज्ञा से उसे सब छोड़कर चले जाते हैं, लेकिन फेंकन और जगन काली के साथ ही रह जाते हैं। बिना कोई आंधी या भूकंप से काली का दल टूट जाता है। कुमार भी इन सभी सराकरी नियमों से परेशान होकर थक जाते है। बुखार में कुमार बिस्तर पर पड़े है कुमार, जायसवाल उसके लिए एक पात्र लेकर आते है... राष्ट्रपति ने पांडेयजी को पुलिस सेवा का प्रदक प्रदान करने की घोषणा की है। इधर परशुराम चुनाव जीत जाते हैं, वो एम. एल. ए बन जाते है। अब डाकू और मंत्री मिलकर एक साथ अपराधों की यह अट्टालिका ओर ज्यादा मजबूत और पक्का बना पायेंगे। कुमार नौकरी छोड़ देता है, "जीप चली जा रही है और मन में हाहाकार मचा है, विदा परशुराम! जनतंत्र के नाम पर पैसे और जाति और कमीनगी के प्रपंचतंत्र विदा! विदा बेतिया के घने जंगलो, मीलों फैले केन और सुगरकेन के लिए विख्यात सीमांत की उर्वरा धरती! विदा, भर्तहरि, गोरखनाथ और चन्द्रगुप्त की धरती विदा! सोमेश्वर की श्रृंखलाएँ, विदा भिखना ठोरी, डॉन के क्षेत्र, रेता की रेतीली भूल–भुलैया! विदा मदनपुर माई का थान, रासोगुरुकृविदा जगत नारायण, श्यामदेव यादव, नोनिया और काली, विदा! रानी महल, विदा बाल्मीकिपुर, विदा स्खलन के साक्षी मकरंदा.।"[11] इसी तरह धरती को प्रणाम कर कुमार चल पड़े।

घनघोर जंगल में सड़क के बीचोबीच काली खड़ा था और उसके हाथ में एक बच्चा। काली कुमार से किताबें वापस करते है और बच्चे की ओर इशारा करते हुए कहते है यह मलारी का बच्चा है इसे आप अपने साथ ले जाइए हमारे साथ रहेगा तो डाकू बनेगा। लेकिन कुमार ने बच्चे को लेने से माना कर दिया, बच्चे को मुरूली पांडे के हाथों सौपने को कह दिया। कुमार जंगलों में जितने आत्मविश्वास के साथ आए थे उतनी ही हताशा को लेकर वापस जाता है।

निष्कर्ष

जंगल जहाँ शुरू होता है उपन्यास में एक अंचल विशेष 'मिनी चंबल' में रहने वाले आदिवासियों की सामाजिक दुरावस्था, धार्मिक अन्धविश्वास, सांस्कृतिक, आर्थिक समस्या, आदिवासियों के बदलते विचारों को लेखक ने यथार्थता के साथ चित्रित किया है। इलाके के गैर आदिवासी डाकू गिरोह और जमींदारों के साथ आपस में अन्तर्सम्बन्ध रखते हैं। उन लोगों के द्वारा किए गए अन्याय अत्याचार के परिणाम स्वरुप आदिवासी डाकू बन जाते हैं। थारू आदिवासियों की स्त्रियों का बलात्कार कर दिया जाता है और पुरुषों को अपराधी घोषित कर उन लोगों का एनकाउंटर कर दिया जाता है। काली डाकू गिरोह बनाकर इस सभ्य समाज के व्यवस्था तंत्र को चुनौती देता है। इन आदिवासियों को जीवन के एक सच्चा रास्ता दिखाने वाला कोई नहीं है, इस सभ्य समाज ने जैसे इन लोगों से मुह मोड़ लिया हैं। उपन्यास के अंत तक कुमार भी काली की वैचारिक स्थिति को सही ठहराते है, कुमार भी इन्ही सभ्य समाज के शासन तंत्र से पीसा हुआ एक लाचार पुलिस अधिकारी है। उपन्यास के माध्यम से लेखक पाठक समाज को यह व्यक्त करना चाहता है कि आदिवासियों की यह लड़ाई न्यायिक हैं।

❐

सन्दर्भ –

1. *संजीव, जंगल जहाँ से शुरू होता है, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2000.*
2. *डॉ. टी.आर. देविगा, उपन्यास और आदिवासी जनजीवन, विकास प्रकाशन, 2021, पृ.11.*
3. *संजीव, जंगल जहाँ से शुरू होता है, राधाकृपृ.ण प्रकाशन, 2000, पृ. 26.*
4. *पुर्वोक्त, पृ. 34*
5. *पुर्वोक्त, पृ. 52*
6. *पुर्वोक्त, पृ. 55*
7. *पुर्वोक्त, पृ. 57*
8. *पुर्वोक्त, पृ. 92*
9. *पुर्वोक्त, पृ. 92*
10. *पुर्वोक्त, पृ. 192*
11. *पुर्वोक्त,, पृ. 284*

सहायक ग्रन्थ

. *वंदना टेटे, आदिवासी दर्शन और साहित्य, विकल्प प्रकाशन, 2016.*
. *रमणिका गुप्ता, आदिवासी समाज और साहित्य, कल्याणी शिक्षा परिषद्, 2015.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 30–35

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल के प्रभाव का अध्ययन

गीतिका अग्रवाल
शोधार्थी, हेमचन्द यादव, विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)
Email : geetikaagrawal6@gmail.com Mob no 9303694701
डॉ.ज्योत्सना गढ़पायले
सहायक प्राध्यापक, शिक्षा संकाय, सेन्ट थॉमस महाविद्यालय, भिलाई (छ.ग.)
डॉ.आरती मिश्रा
सहायक प्राध्यापक, कल्याण महाविद्यालय, सेक्टर–7, भिलाई (छ.ग.)

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन उच्चतर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल के प्रभाव जानने हेतु किया गया है । अध्ययन हेतु दुर्ग जिले के 300 विद्यार्थियों का चयन न्यादर्श के रूप में किया गया है। विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा के मापन हेतु डॉ. सरिता आनंद द्वारा निर्मित वृत्तिक आकांक्षा मापनी एवं सामाजिक कौशल के मापन हेतु डॉ. विशालसूद, डॉ. आरती आनंद एवं सुरेश कुमार द्वारा निर्मित निर्धारण मापनी का प्रयोग किया गया है। अध्ययन के निष्कर्ष में पाया गया कि विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल का प्रभाव पाया गया। छात्र व छात्राओं की वृत्तिक आकांक्षा में सार्थक अंतर नहीं पाया गया एवं छात्र व छात्राओं के सामाजिक कौशल में सार्थक अंतर पाया गया। किशोरावस्था में बालक एक चौतरफा रास्ते पर खड़ा होता है जहाँ से वह समान रूप से सही या गलत दोनों ही रास्तों पर जा सकता है अतः उसकी आवश्यकताओं, रूचियों तथा समस्याओं को समझ कर उचित निर्देशन व परामर्श दिए जाने की आवश्कता होती है।

मूल शब्द – किशोरावस्था, वृत्तिक आकांक्षा, सामाजिक कौशल

प्रस्तावना

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास स्वाभाविक रूप से होता है, एवं वह सामाजिक, भौतिक व आध्यात्मिक पर्यावरण के साथ समायोजन कर सकता है। प्रायः किशोर के समक्ष व्यावसायिक चुनाव की समस्या आती है। उसे अपने पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों का चुनाव करना होता है। जो आगे जाकर उसके भविष्य के व्यवसाय में सहायता कर सके। उचित व्यावसायिक पाठ्यक्रमों एवं वृत्तिक के चुनाव में परेशानी का अनुभव करना पड़ता है। निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपने वृत्तिक से संबंधित अनेक कौशल में निपुर्ण होना आवश्यक है। जिनमें से एक सामाजिक कौशल है, जो लक्ष्य को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।

वृत्तिक आकांक्षा

वृत्तिक शब्द का प्रयोग किसी पेशे, व्यवसाय सा व्यापार के संदर्भ में किया जाता है, वृत्तिक का अर्थ डॉक्टर, शिक्षक, प्रबंधक के रूप में कार्य करना होता है। यह जीवन के पूरे कार्यकाल के वर्षों में आपके द्वारा की गई प्रगति और कार्यों को संदर्भित करता है जब वे आपके व्यवसाय से संबंधित होते हैं। आकांक्षा का शाब्दिक अर्थ–एक महत्वाकांक्षा, लक्ष्य या किसी भी प्रकार का वांछित अंत जो व्यक्तिगत प्रयास के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।[1] (ग्रे एवं ओब्रायन 207) वृत्तिक आकांक्षा को किसी दिए गए वृत्तिक के प्रति प्रतिबद्धता के स्तर के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

वैंडेनबॉस (2007) के अनुसार, वृत्तिक आकांक्षा को दीर्घकालिक व्यक्तिगत कार्य–संबंधित लक्ष्यों के रूप में पारिभाषित किया गया है।

संवेल विलियम के अनुसार (1969) वृत्तिक आकांक्षा का स्तर किसी महत्वाकांक्षा और उनके भविष्य के व्यवसाय के बारे में विचार है। वृत्तिक आकांक्षा वे लक्ष्य होते हैं जिसे वर्तमान या भविष्य के व्यवसाय में प्राप्त करना चाहते हैं। इस प्रकार वृत्तिक आकांक्षाएँ आपके व्यवसाय के प्रति भविष्य के लिए दृष्टि है तथा आने वाले वर्षों में अपने व्यावयायिक जीवन में हासिल करने की उम्मीद करते हैं।

वृत्तिक आकांक्षा को निम्नलिखित कारक प्रभावित करते है –

1. आर्थिक सामाजिक स्थिति
2. अभिभावकों की शिक्षा
3. शैक्षिक उपलब्धि
4. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र

सामाजिक कौशल

कौशल का अर्थ– किसी कार्य को करने में निपुर्ण होना। यह किसी निश्चित समय, ऊर्जा या दोनों के अंदर निर्धारित परिणामों के साथ किसी कार्य करने की क्षमता है।[2]

सामाजिक कौशल दूसरों के साथ बातचीत और संचार की सुविधा प्रदान करने वाला कोई भी कौशल है। सामाजिक कौशल वे कौशल है जिनका उपयोग हम प्रतिदिन दूसरों के साथ बातचीत और संवाद करने के लिए करते हैं। उनमें मौखिक और गैर मौखिक संचार शामिल है जैसे भाषण, हावभाव, चेहरे की अभिव्यक्ति और शरीर की भाषा और हमारी व्यक्तिगत उपस्थिति के माध्यम से।

सामाजिक कौशल वे वैयक्तिक मूल्य तथा अंतर वैयक्तिक कौशल है जो किसी व्यक्ति के समूह में अन्य के साथ भली–भाँति मिलजुल कर कार्य करने की सक्षमता का निर्धारण करते हैं। बाह्य विश्व के साथ संव्यवहार के लिए अपने साथियों के साथ सहयोगपूर्ण ढ़ग से कार्य के लिए सामाजिक कौशल आवश्यक है।

सामाजिक कौशलों के प्रकार[3] –

सामाजिक कौशल के विभिन्न संघटक है। इनमें से कुछ जन्मजात होते हैं जैसे आत्मविश्वास, मैत्रीपूर्ण व्यवहार एवं कुछ कौशल ऐसे है जिन्हें सिखाया जा सकता है या उनमें सुधार किया जा सकता है जैसे प्रभावपूर्ण संचार तथा सामाजिक गुणों का विकास। किसी विशिष्ट स्वरूप के कार्य लिए सामाजिक कौशलों के विभिन्न प्रकार के सामाजिक कौशलों की

आवश्यकता होती है। सामाजिक कौशल प्रकार –

1. संचार कौशल
2. श्रवण कौशल
3. प्रस्तुतीकरण कौशल
4. पारस्परिक कौशल
5. दल कौशल
6. नेतृत्व कौशल
7. शिष्टाचार कौशल
8. अंतर–सांस्कृतिक कौशल
9. भाषा कौशल

कुमार एवं अन्य (2019)[4] ने निष्कर्ष में पाया कि वृत्तिक परामर्श मॉड्यूल का विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा व उपलब्धि अभिप्रेरणा पर सकारात्मक प्रभाव होता है। **गंगबेर व अन्य (2021)**[5] ने पाया कि वृत्तिक आकांक्षा व आत्म–विश्वास के मध्य धनात्मक सहसंबंध पाया। **जैकब (2018)**[6] ने निष्कर्ष में पाया कि निम्न और उच्च सामाजिक आर्थिक स्थिति का किशोरों के शैक्षिक व वृत्तिक आकांक्षा पर महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव पाया। **नवमादी (2014)**[7] ने परिणाम में पाया कि व्यावसायिक रूचि व वृत्तिक आकांक्षा के मध्य धनात्मक सहसंबंध पाया। **शर्मा (2017)**[8] ने अध्ययन में शालेय उपलब्धि व सामाजिक कौशल में महत्वपूर्ण सकारात्मक संबंध पाया। **वकशाही (2017)** ने बालकों में बालिकाओं से अधिक सामाजिक कौशल पाया। **देवी (2015)** ने परिणाम में पाया कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि उनके सामाजिक कौशल पर निर्भर करती है। **खन्ना एवं अन्य**[9] ने परिणाम पाया कि सामाजिक कौशल का विकास माताओं के व्यवसाय स्थिति से प्रभावित होती है।

उद्देश्य

- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल के प्रभाव का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के छात्र व छात्राओं का वृत्तिक आकांक्षा का अध्ययन करना।
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के छात्र व छात्राओं के सामाजिक कौशल का अध्ययन करना।

परिकल्पना

- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल का सार्थक प्रभाव नहीं पाया जायेगा।
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के छात्र व छात्राओं की वृत्तिक आकांक्षा में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।
- उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के छात्र व छात्राओं के सामाजिक कौशल में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

शोध–विधि

प्रस्तुत अध्ययन में विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल के प्रभाव जानने के लिए वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

जनसंख्या व न्यादर्श –

छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के तीन विकास खण्ड पाटन, धमधा व दुर्ग को अध्ययन क्षेत्र के रूप में लिया गया। दुर्ग जिले के 137 शासकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों को जनसंख्या के रूप में चुनाव किया गया है। न्यादर्श के रूप में गैर स्तरीकृत यादृच्छिक न्यादर्श विधि के द्वारा कुल 300 विद्यार्थियों (150 छात्र व 150 छात्राएं) को न्यादर्श में शामिल किया गया है।

उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन में विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा के मापन हेतु डॉ. सरिता आनंद द्वारा निर्मित मापनी (2014) का प्रयोग किया गया हैं इस मापनी में कुल 30 पद व पाँच आयाम है। सामाजिक कौशल के मापन हेतु डॉ. विशाल सूद, डॉ. आरती आनंद व सुरेश कुमार द्वारा निर्मित निर्धारण मापनी (2012) का प्रयोग किया गया जिसमें कुल 92 पद व पाँच आयाम है।

परिसीमा

1. यह अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य के दुर्ग जिले के शासकीय विद्यालयों तक सीमित है।
2. यह अध्ययन के लिए दुर्ग (छत्तीसगढ़) के 11वीं कक्षा के विद्यार्थियों तक सीमित है।

सांख्यिकीय विश्लेषण एवं व्याख्या –

विद्यार्थियों के उत्तरों के आधार पर अंकीकरण किया गया। शोध के सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन व टी–परीक्षण का प्रयोग किया गया है।

तालिका – 1

उ. मा. विद्यालय के विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल का प्रभाव

तुलनात्मक समूह	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी–मूल्य	सार्थकता स्तर
उच्च सामाजिक कौशल	105	116.42	11.09	6.6	सार्थक
निम्न सामाजिक कौशल	105	106.69	10.12		

df = 208 $p < 0.05$

तालिका संख्या 1 के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि उच्च सामाजिक कौशल वाले विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा का मध्यमान 116.42 व प्रमाणिक विचलन 11.09 प्राप्त हुआ। तथा निम्न सामाजिक कौशल वाले विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा का मध्यमान 106.69 व प्रमाणिक विचलन 10.12 प्राप्त हुआ जो कि स्वतंत्रता के अंश 208 के 0.05 स्तर पर सार्थक अंतर है अतः शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। सांख्यिकीय आधार पर कहा जा सकता है कि उच्च

सामाजिक कौशल वाले विद्यार्थियों में निम्न सामाजिक कौशल वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा वृत्तिक आकांक्षा अधिक पाई जाती है। उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल का सार्थक प्रभाव पाया गया। इसका कारण यह हो सकता है कि विकसित सामाजिक कौशल संज्ञानात्मक क्षमताओं और बेहतर मानसिक स्वास्थ्य की ओर ले जाते हैं।

तालिका – 2

उ. मा. विद्यालय के छात्र व छात्राओं की वृत्तिक आकांक्षा का तुलनात्मक विवरण

तुलनात्मक समूह	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी–मूल्य	सार्थकता स्तर
छात्र	150	112.01	11.58	0.462	सार्थक नहीं
छात्रा	150	112.07	10.92		

df = 208 $p < 0.05$

तालिका–2 से स्पष्ट होता है कि छात्रों की वृत्तिक आकांक्षा का मध्यमान 112.1 व प्रमाणिक विचलन 11.58 प्राप्त हुआ तथा छात्राओं की वृत्तिक आकांक्षा का मध्यमान 112.7 व प्रमाणिक विचलन 10.92 प्राप्त हुआ जो कि स्वतंत्रता के अंश 298 के लिए 0.05 स्तर पर सार्थक अंतर नहीं है अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। सांख्यिकीय आधार पर कहा जा सकता है कि छात्र व छात्राओं की वृत्तिक आकांक्षा समान है। इसका कारण यह हो सकता है कि वर्तमान समय में छात्र व छात्राओं को बराबर शैक्षिणक सुविधाएं दी जा रही है।

तालिका– 3

उ. मा. विद्यालय के छात्र व छात्राओं के सामाजिक कौशल का तुलनात्मक विवरण

तुलनात्मक समूह	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी–मूल्य	सार्थकता स्तर
छात्र	150	370.2	37.79	2.63	सार्थक
छात्रा	150	358.4	39.94		

df = 208 $p < 0.05$

तालिका – 3 से स्पष्ट होता है कि छात्रों के सामाजिक कौशल का मध्यमान 370.2 व प्रमाणिक विचलन 37.79 तथा छात्राओं की सामाजिक कौशल का मध्यमान 358.2 व प्रमाणिक विचलन 39.94 प्राप्त हुआ जो कि स्वतंत्रता के अंश 298 के लिए 0.05 स्तर पर सार्थक अंतर है अतः शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि छात्रों व छात्राओं के सामाजिक कौशल में अंतर पाया गया अर्थात् छात्रों में छात्राओं की अपेक्षा अधिक सामाजिक कौशल पाया जाता है इसका कारण यह हो सकता है कि समाज द्वारा बालिकाओं की अपेक्षा बालाकों को व्यवहार करने व मेलजोल के तरीकों में अधिक पाबंदी नहीं लगाई जाती है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त हुए :

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की वृत्तिक आकांक्षा पर सामाजिक कौशल का प्रभाव पाया गया।

2. छात्र व छात्राओं की वृत्तिक आकांक्षा में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। छात्रों की वृत्तिक आकांक्षा छात्राओं के समान पायी गयी।
3. छात्र व छात्राओं के सामाजिक कौशल में सार्थक अंतर पाया गया। छात्रों में सामाजिक कौशल छात्राओं की अपेक्षा अधिक पाया गया।

शैक्षिक निहितार्थ

1. किशोरावस्था में विद्यार्थियों को वृत्तिक निर्देशन व परामर्श दिए जाने चाहिए जिससे विद्यार्थी सही समय में सही निर्णय ले सके।
2. विद्यार्थियों में सामाजिक कौशल को बढ़ाने के लिए पाठ्यसहगामी क्रियाओं को शामिल किया जाना चाहिए।
3. विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त वर्कशॉप, सम्मेलन एवं तकनीकी शिक्षा देने के अवसर प्रदान करना चाहिए जिससे विद्यार्थी अपनी रूचि को पहचान कर, रूचि के अनुसार अपने व्यवसाय का चुनाव कर सके।

❐

सन्दर्भ –

1. *Banerjee B & Khanna S, (2018), "Impact of parenting styles on social skills of adolescent children in urban Areas of Ludhiana, India, IOOSR journal of Humanities & social science, 23(7),55-65.*
2. *csuhoky iwtk] ,oa HkkxZo ,p-ih- ¼2017½] Kku ,oa ikB~;Øe] cqd gkml] 68&70-*
3. *Gangber (2020), "Relation between career aspiration & self confidence among higher secondary students", International journal of applied Research, doi.org/10.22271/all research .2021.v7i2b.8243.*
4. *Kumar & Phoghat, v (2019), "Effect of career counseling Module on career aspirations and achievement motivation of secondary school students", Bhatiyam International of education & Research 8(2),14-22.*
5. *Momin N & Geetam C (2019), "Occupational aspiration of undergraduates in Meghalaya: International journal of Advance research of Advance Research, Doi:10.21474/IJARO1/8403.*
6. *eaxy] ,l-ds-] ¼2019½] vf/kxe ,oa fodkl dk euksfoKku] ih-,p-,y- yfuZax izkbosV fyfeVsM] fnYyh] 81&83-*
7. *Nwamadi (2014), "student's interest as correlates of career aspiration of senior secondary school tudents in rivers state, Golobal journal of educational research, 14, 61-66.*
8. *Devi Mukesh (2017) " study of social skill level of school students" International Journal of multidisciplinary research and development 4(7), p. 459-460*
9. *Banerjee B & Khanna S, (2018), "Impact of parenting styles on social skills of adolescent children in urban Areas of Ludhiana, India, IOOSR journal of Humanities & social science, z23(7), p. 55-65.*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 36–45

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

वर्तमान परिदृश्य में भारत में विवाहेत्तर सम्बन्ध एवं कानून
एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

सुबोध कान्त
शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, सामाजिक विज्ञान संकाय,काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
Email : kantbhu@gmail.com

सारांश

विवाहेतर सम्बन्ध विवाह तथा परिवार नामक आधारभूत संस्थाओं को गहनता से प्रभावित करने वाली समस्यात्मक कड़ी है। विवाह संस्था पर सेफ्टी वाल्व बनाये रखने तथा बच्चों को विवाहेतर सम्बन्धों के नकारात्मक परिणामों से सुरक्षित रखने के लिए विवाहेतर सम्बन्ध सामाजिक रूप से अस्वीकृत तो थे ही, साथ ही साथ कानूनी रूप से भी आपराधिक कृत्य माना गया था, परन्तु हालही में सितम्बर 2018 को माननीय उच्चतम न्यायालय ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अत्यधिक महत्व देते हुए तथा पश्चिमी देशों में इससे सम्बंधित कानूनों का हवाला देते हुए विवाहेतर सम्बन्धों को आपराधिक कृत्यों की श्रेणी से बाहर कर दिया। प्रस्तुत शोध पत्र में शोधकर्ता ने विवाहेतर सम्बन्धों के विभिन्न आयामों पर दो केंद्रीय विश्वविद्यालयों काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी तथा बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ में शिक्षा ग्रहण कर रहे परास्नातक तथा शोध छात्र छात्राओं के विचारों एवं परिप्रेक्ष्यों को जानने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द– विवाहेतर सम्बन्ध, पारिवारिक विघटन, दाम्पत्य जीवन, तलाक, व्यभिचार, भावात्मक सम्बन्ध, यौनिक सम्बन्ध, विचलन, समाजीकरण.

प्रस्तावना

विवाह एवं परिवार किसी भी समाज की वे आधारभूत संस्थायें हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति की भावात्मक, मनोवैज्ञानिक, यौनिक, समूहचारिता आदि आवश्यकताओं की पूर्ति का सहजता से प्रबन्ध करती है और पूर्णतः समाज स्वीकृत भी है। यह दोनों ऐसी संस्थायें हैं जो किसी न किसी रूप में प्रत्येक समाज में विद्यमान होती हैं। समयानुसार इनमे परिवर्तन भी अवश्यम्भावी रूप से घटित होता है। सामाजिक परिवर्तन के साथ–साथ विभिन्न सामाजिक संस्थाओं में विचलन होना एक सामान्य समस्या होती है। वैवाहिक सम्बन्धों के सन्दर्भ में एक अत्यधिक प्रभावित करने वाली विचलनात्मक समस्या विवाहेतर सम्बन्धों का उपजना है। दाम्पत्य जीवन के असफल होने

एवं उससे सम्बंधित समस्याओं के कारण ही कोई भी साथी (पति/पत्नी) विवाहेतर सम्बन्धों की तरफ रुख करता है, परन्तु यह सम्बन्ध सिर्फ उनके दाम्पत्य जीवन को ही प्रभावित नहीं करता, बल्कि उनके बच्चों व परिवार के अन्य सदस्यों को भी नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है।

विवाहेतर सम्बन्धों पर विस्तृत एवं गहन अध्ययन से पूर्व यह स्पष्ट कर लेना उचित होगा कि विवाहेतर सम्बन्ध है क्या ? विवाह स्त्री व पुरुष के बीच एक ऐसा बन्धन है, जिसे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक व कानूनी मान्यता प्राप्त होती है। इस सम्बन्ध के फलस्वरूप दोनों पति–पत्नी जीवनभर साथ रहने, संतानोत्पत्ति करने व अन्य पारिवारिक सामाजिक धार्मिक भूमिकाओं को निभाने के लिये वचनबद्ध होते हैं, परन्तु वैवाहिक सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की समस्या उत्पन्न होने के फलस्वरूप दम्पति में से यदि कोई पार्टनर (साथी) अपने पति या पत्नी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति से भावात्मक, यौनिक या दोनों प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करता है और अपने जीवन साथी को धोखा देता है, विवाह सम्बन्धी बॉण्ड को तोड़ता है तो इस प्रकार के सम्बन्ध को विवाहेतर सम्बन्ध कहते हैं।

किसी भी व्यक्ति द्वारा विवाहेतर सम्बन्धों को अपनाने के अनेक कारण हो सकते हैं, परन्तु सार रूप में इसका प्रमुख कारण वैवाहिक सम्बन्ध में समस्याओं व संकटों का होना और उसका उपयुक्त समय पर निदान न होना है। बसार्ड कहते हैं कि वैवाहिक समस्या की शुरुआत मुख्यतः पति–पत्नी के बीच सम्प्रेषण की निरन्तरता के टूट जाने के कारण होता है, जिसके परिणाम स्वरूप उनके बीच निरन्तर झगड़े होते रहते हैं, मनोवैज्ञानिक, भावनात्मक तथा शारीरिक अलगाव हो जाता है और कभी–कभी शारीरिक आक्रमणशीलता भी पनप जाती है, जो अंततः विवाह विच्छेद के द्वार तक ले जाती है।[1]

यदि हम विवाहेतर सम्बन्धों के उपजने के कारणों की विस्तार से पड़ताल करें तो इसके कई मुख्य कारक दृष्टिगोचर होते हैं। यौन एवं प्रजनन सम्बन्धी कारक के अन्तर्गत अपने पार्टनर को यौन संतुष्टि न दे पाना, पति या पत्नी द्वारा यौनिक भिन्नता के अनुभव की इच्छा, पति या पत्नी में संतानोत्पत्ति की क्षमता न होना, सिर्फ विकलांग बच्चे ही पैदा करना आदि तथा आर्थिक व व्यावसायिक कारक के अन्तर्गत पति का अपने कार्यों में अत्यधिक व्यस्त हो जाना, पति या पत्नी का दिन भर के कामों के बाद हमेशा थका होना, पति या पत्नी में से किसी एक का नाईट ड्यूटी होना, पति का आर्थिक रूप से सशक्त न होना, पत्नी द्वारा पति से ज्यादा कमाना या सिर्फ पत्नी द्वारा ही घर सम्भालना, पति द्वारा पत्नी को आर्थिक संरक्षण न देना आदि एवं इसके अलावा उम्र सम्बन्धी कारक के अन्तर्गत पति या पत्नी का जल्दी विवाह हो जाना, पति या पत्नी का अपने जीवनसाथी की अपेक्षा अत्यधिक युवा या उम्रदराज होना आदि विवाहेतर सम्बन्धों को जन्म देते हैं।

केंकेल विवाहेतर सम्बन्धों की चर्चा करते हुए उसके निम्नलिखित प्रमुख स्वरूपों के बारे में बताते हैं.....

• *एक रात के विवाहेतर सम्बन्ध (वन नाईट अफेयर)* – इस प्रकार के सम्बन्ध सामान्यतः बिना किसी प्रयास के अनायास रूप से बन जाते हैं और इसमें यौनिक सम्बन्ध न बनके बल्कि भावात्मक सम्बन्ध ही स्थापित होते हैं। इस प्रकार के सम्बन्धों को हम सामान्य भाषा में थोड़े वक्त के लिये भटकाव कह सकते हैं।

• *भावात्मक उद्वेग सम्बन्धी विवाहेतर सम्बन्ध* – इस प्रकार के विवाहेतर सम्बन्ध सामान्यतः तब बनते हैं, जब वैवाहिक जीवन समस्याओं से गुजर रहा होता है और उसी दौरान कोई एक पार्टनर अपने किसी करीबी विपरीत लिंगी साथी या दोस्त की तरफ आकर्षित हो जाता है। इस प्रकार के विवाहेतर सम्बन्धों में अधिकांश सम्भावना होती है कि वह भटका पार्टनर अपने विवाह सम्बन्ध में वापस आ जायेगा।

• *भावात्मक–यौनिक विवाहेतर सम्बन्ध*– इस प्रकार के विवाहेतर सम्बन्ध में पार्टनर किन्ही कारणों से अपने पति या पत्नी से विश्वासघात करते हुए अपने पति या पत्नी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति से भावनात्मक एवं यौनिक दोनों प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करता है। इस प्रकार के विवाहेतर सम्बन्ध में विवाहेतर सम्बन्ध रखने वाले साथी का अपने विवाह सम्बन्ध में वापस लौट आने की सम्भावना लगभग नगण्य होती है।

• *यौन लत के कारण विवाहेतर सम्बन्ध* – इस प्रकार के विवाहेतर सम्बन्ध अत्यधिक यौन लत या यौनिक सम्बन्धों में भिन्नता तथा विविधता की इच्छा के कारण उपजते हैं।[2]

विवाहेतर सम्बन्ध एवं दाम्पत्य जीवन का विघटन

वर्तमान समय में भारत जैसे विकासशील देशों में विवाहेतर सम्बन्ध लगातार बढ़ते जा रहे हैं और अंतिम रूप में विवाह विच्छेद का कारक बन रहे हैं। भावात्मक सहयोग न होने, यौनिक संतुष्टि न होने, किसी गलत कारण से विवाह कर लेने, अपने पसन्द से जीवनसाथी न चुनने, पति–पत्नी की सामान अभिरुचि न होने, एक दूसरे को उचित व पर्याप्त समय न दे पाने आदि वजहों से भारतीय दम्पतियों में विवाहेतर सम्बन्ध तेजी से बढ़ रहे हैं; जिसके कारण वे वैवाहिक व पारिवारिक जीवन से असंतुष्ट तो हैं ही, साथ ही सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक आदि पहलुओं में भी पूर्ण नहीं हो पाते।[3] जब अपने जीवन साथी से प्यार, आकर्षण व संतुष्टि प्राप्त नहीं होती है तो व्यक्ति बाहर दूसरे स्त्री या पुरुष से फ्लर्ट करने लगता है, ऑनलाइन यौनिक व रूमानी चौटिंग (बातचीत) करने लगता है, पोर्नोग्राफी उपभोग करने लगता है और यदि बाहर कोई विपरीत लिंगी उसके भावनाओं व आवश्यकताओं को समझता है और उसे पूरा करने लगता है तो व्यक्ति धीरे–धीरे अपने जीवनसाथी से मुक्त हो जाता है एवं प्रत्येक तरीके से अपने विवाहेतर सम्बन्धी से जुड़ जाता है।

ओलायिंका अपने अध्ययन से यह स्पष्ट करती हैं कि यदि पत्नी पति को लगातार यौनिक रूप से वंचित करती हैं तो पति में भी अपने पत्नी से यौन सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा समाप्त होने लगती है। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये पुरुष पत्नी के अलावा दूसरी स्त्रियों से फ्लर्ट करना शुरू कर देता है और फिर धीरे–धीरे अपनी पत्नी को समय भी कम देने लगता है। इसके अलावा ब्रायन स्पीटबर्ग के अनुसार स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष यौन सम्बन्धों के बारे में अधिक सोचते हैं, इन उपर्युक्त कारणों से भी पति–पत्नी के बीच स्वस्थ सम्बन्ध नहीं रहते।[4]

भारतीय समाज में अभी भी यह सामाजिक व सांस्कृतिक रूप से स्वीकार नहीं किया जाता है कि कोई लड़का या लड़की विवाह से पूर्व किसी से प्रेम सम्बन्ध में रहे और अपने प्रेमी से भावात्मक या/और यौनिक सम्बन्ध स्थापित करे, ऐसी स्थिति में यदि उनका अपने प्रेम सम्बन्धी से विवाह नहीं हो पता है तो विवाह पश्चात् भी उनके द्वारा अपने प्रेमी से सम्बन्ध

बरकरार रखने कि सम्भावना प्रबल रहती है, क्योकि सामान्यतः उनकी किसी अनजान व्यक्ति से पारिवारिक व सामाजिक दबाव के द्वारा विवाह कराया गया होता है, जिससे उनका भावात्मक, मानसिक या अभिरुचि आदि किसी भी प्रकार से बॉण्ड नहीं बन पाता और वे अपने प्रेमी से सम्बन्ध बरकरार रखते हुए विवाहेतर सम्बन्ध को अपना लेते हैं।

पारिवारिक विघटन एवं बच्चों पर प्रभाव

विवाहेतर सम्बन्धों के कारण सिर्फ दाम्पत्य जीवन का ही विघटन नहीं होता है, बल्कि उसके पारिवारिक जीवन व विश्वास का भी विघटन होने लगता है। चूकि विवाहेतर सम्बन्ध समाज द्वारा स्वीकृत नहीं हैं और सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों, मानदण्डों से विचलन है, इसलिए इसका खामियाजा तानों, उलाहनों तथा कटाक्ष आदि के रूप में विवाहेतर सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति के प्रत्येक पारिवारिक सदस्यों को उठाना पड़ता है। यहाँ तक कि विवाहेतर सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति के माता–पिता द्वारा किये गए समाजीकरण पर सवालिया निशान खड़ा किया जाने लगता है और उन्हें शर्मिंदा होना पड़ता है। एक सामान्य व स्वस्थ परिवार में पारिवारिक सदस्यों के बीच जो एकात्मक बन्धन होता है, निश्छल प्यार व विश्वास की भावना होती है, वह नष्ट होने लगती है।

जब कोई भी व्यक्ति विवाहेतर सम्बन्धों की तरफ आकर्षित हो रहा होता है या अपना रहा होता है तो उस वक्त वह अपने बच्चों व परिवार से अधिक महत्व स्वयं की स्वतंत्रता व खुशी को देता है, जिसके परिणाम बच्चों को कई आयामों में झेलना पड़ता है। जब बच्चा माता–पिता के बीच हमेशा झगड़े व संघर्ष को देखता है और उसे माता–पिता का उचित व पर्याप्त प्यार व भावनात्मक सहयोग नहीं मिलता है तो बच्चे के मन मस्तिष्क में गलत धारणाये जन्म लेने लगती हैं। माता या पिता के बाहर किसी अन्य व्यक्ति से अनैतिक सम्बन्धों को जानकर व अपने साथियों द्वारा लगातार किसी न किसी विषयबिन्दु के बहाने चिढ़ाये जाते रहने पर वह निरन्तर आहात होता रहता है। बच्चे का बालमन कुचल दिया जाता है और उसके आवश्यकताओं का कोई ध्यान नहीं देता। ऐसी परिस्थिति में बच्चे में सामाजिक विचलन सम्बन्धी क्रियाएँ जन्म लेने लगती हैं। वह मानसिक रूप से हमेशा अस्थिर रहने लगता है, जिसके कारण बाल अपराध की तरफ आकर्षित होने की सम्भावना बढ़ जाती है।[5]

जब बच्चे का समाजीकरण सही नहीं होता है और उसका उचित देखरेख करने वाला कोई नहीं होता तो इस मानसिक विचलन की अवधि में बच्चे में हमेशा घर से बाहर रहने की प्रवृत्ति जन्म ले लेती है और धीरे–धीरे वह आपराधिक कृत्य करने वाले समूहों के सम्पर्क में आ जाता है और अंततः हिंसात्मक व्यक्ति एवं बाल अपराधी बन जाता है।[6] इसके अलावा एक प्रबल सम्भावना यह भी होती है कि बच्चा बाहर किसी अपराधी द्वारा शारीरिक, मानशिक अथवा यौनिक शोषण का शिकार बन जाता है। दोनों ही स्थितियों में बच्चे का जीवन तहस–नहस हो जाता है। प्यार, भावनात्मक सहयोग, परिवार में आकर्षण का केंद्र बने रहने की बच्चे की जो इच्छा व अधिकार दोनों होता है, वह कभी नहीं मिलता, बल्कि इसके विपरीत उसे सामाजिक तिरस्कार मिलते हैं। जो बच्चा सामान्य एवं स्वस्थ परिवार में पल–बढ़कर व शिक्षा ग्रहण करके परिवार, समाज व अंततः राष्ट्र निर्माण में सृजनात्मक भूमिका निभा सकता था, वह अब आपराधिक गतिविधियों में संलिप्त हो चुका होता है एवं समाज विरोधी कार्य करता है।

विवाहेतर सम्बन्ध के कानूनी परिप्रेक्ष्य

व्यभिचार या जरता सम्बन्धी कानून भारतीय दण्ड संहिता की धारा 497 तथा आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 198 में वर्णित है, जिसके तहत यदि विवाहित पुरुष किसी अन्य महिला से सम्बन्ध बनता था तो वह व्यभिचार का दोषी होता था और उसके विरुद्ध केस दर्ज किया जा सकता था। इसके लिए अधिकतम पांच वर्ष का कारावास या आर्थिक दण्ड या दोनों सजा का प्रावधान था, परन्तु विवाहेतर सम्बन्ध बनाने वाली महिला के लिए किसी भी प्रकार की सजा का प्रावधान नहीं था, उसे दोषी नहीं माना जाता था; वही यदि महिला अपने पति से स्वीकृति लेकर यदि किसी अन्य पुरुष से सम्बन्ध बनाती थी तो ऐसी स्थिति में किसी को भी कोई सजा नहीं दिया जाता था। यह कानून 158 साल पुराना था।[7]

इटली निवासी जोसेफ शाइन ने दिसम्बर 2017 में व्यभिचार कानून को स्त्री–पुरुष में भेदभाव करने वाला तथा असंवैधानिक करार देते हुये एक जनहित याचिका दायर की थी, जिस पर 27 सितम्बर 2018 को उच्चतम न्ययालय के पांच न्यायाधीशों (न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा, न्यायमूर्ति ए.एम. खानविलकर, न्यायमूर्ति आर.एफ. नरीमन, न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़ तथा न्यायमूर्ति इंदु मल्होत्रा) की पीठ ने अंतिम फैसला सुनाते हुये विवाहेतर सम्बन्ध को अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया। उच्चतम न्यायालय का कहना था कि विवाहेतर सम्बन्ध स्थापित करना अब अपराध नहीं होगा, परन्तु तलाक का आधार अभी भी बना रहेगा।[8] साथ ही यह निर्णय भी सुनाया कि यदि एक जीवनसाथी के ऐसे सम्बन्धों के कारण दूसरा जीवनसाथी आत्महत्या कर लेता है तो विवाहेतर सम्बन्ध अपनाने वाले साथी पर आत्महत्या के लिये उकसाने का केस चलाया जा सकता है।

व्यभिचार कानून पर फैसला सुनाने से पहले उच्चतम न्यायालय ने सरकार को अपना पक्ष रखने को कहा था। सरकार की तरफ से पक्ष रखते हुये एडिशनल सालिसिटर जनरल पिंकी आनन्द ने कहा था कि व्यभिचार को अपराध रहने दिया जाये, क्योकि यदि व्यभिचार को आपराधिक श्रेणी से बाहर कर दिया गया तो विवाह और परिवार जैसी मूलभूत संस्थाओं का सेफ्टी वाल्व समाप्त हो जायेगा और उनको क्षति होगी। पिंकी आनन्द का यह भी कहना था कि सामाजिक परिवर्तन एवं विकास को देखते हुए पति एवं पत्नी दोनों को सामान कानूनी अधिकार दे देना चाहिए, जिसके कि ऐसी स्थिति में दोनों एक दूसरे पर केस कर सकें, परन्तु पश्चिमी समाज के नजरिये से देखते हुये व्यभिचार को आपराधिक कृत्य की श्रेणी से बाहर नहीं किया जाना चाहिये। इस बिंदु पर न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा का तर्क था कि विवाहेतर सम्बन्ध अखुशहाल वैवाहिक जीवन के 'कारण' नहीं होते है बल्कि 'परिणाम' होते हैं।[9] इस फैसले में इन तथ्यों पर ध्यान नहीं दिया गया कि उस पार्टनर (साथी) का क्या होगा, जो पूरे समर्पण व भरोसे से विवाह सम्बन्ध में है। साथ ही यह फैसला व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अधिक महत्त्व देते हुए वैवाहिक इकाई (दम्पति सम्बन्ध) की महत्ता को गौण कर देता है। उच्चतम न्यायालय को इस विषयबिंदु पर अवश्य गौर करना चाहिये था कि यदि विवाह सम्बन्ध खुशहाल व सुखमय न हो तो किसी अन्य व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित करने से पहले तलाक क्यों न ले लें। किसी सामाजिक संस्था को क्षीण करते हुए विवाहेतर सम्बन्ध क्यों स्थापित करें ? साथ ही पांच न्यायाधीशों

की खण्डपीठ ने विवाहेतर सम्बन्धों के कारण बच्चे पर पड़ने वाले प्रभाव व उसके परिणामों के बारे में गहनता से विचार नहीं किया। जबकि यह सर्वविदित है कि यदि बच्चे को माता–पिता का उचित प्यार व भावात्मक सहयोग नहीं मिलेगा तो उसका सर्वांगीण विकास बाधित होगा और वह आपराधिक गतिविधियों में संलिप्त या शिकार हो सकता है।[10]

अध्ययन प्राविधि

प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता द्वारा अध्ययन क्षेत्र के रूप में उत्तरप्रदेश के दो जिलों में स्थित केंद्रीय विश्वविद्यालयों काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी तथा बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ को चुना गया है तथा समग्र के रूप में उपर्युक्त दोनों विश्वविद्यालयों के परास्नातक तथा शोध छात्र–छात्राओं को चुना गया है। अध्ययन के लिये शोधकर्ता द्वारा वर्णनात्मक सह व्याख्यात्मक शोध विधि का प्रयोग करते हुए परास्नातक व शोध विद्यार्थियों की विवाहेतर सम्बन्धों के विविध आयामों के प्रति विचार व परिपेक्ष्य जानने का प्रयास किया गया है।

इस शोध में अकड़ा संकलन हेतु प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों श्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक आकड़ा संकलन के लिये उद्देश्यात्मक एवं सुविधाजनक प्रतिचयन विधि का प्रयोग करते हुए चुने गए प्रतिदर्शों से साक्षात्कार विधि द्वारा अकड़े संकलित किये गये। द्वितीयक श्रोत के रूप में शोधकर्ता ने शोध विषय पर लिखी गयी पुस्तकों, शोधपत्रों, पत्रिकाओं, समाचारपत्रों, वेबसाइट्स आदि का प्रयोग किया है।

बिंदुवार शोध परिणाम

अभिनति से बचने, शोध परिणामों में अत्यधिक यथार्थता तक पहुंचने तथा स्त्रियों व पुरुषों के परिप्रेक्ष्यों में तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए शोधकर्ता ने 50 प्रतिशत पुरुष उत्तरदाता तथा 50 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं को लिया, जिसमे लगभग 73 प्रतिशत उत्तरदाता अविवाहित/सिंगल हैं, 20 प्रतिशत उत्तरदाता किसी के साथ प्रेम सम्बन्ध में हैं तथा लगभग 07 प्रतिशत उत्तरदाता विवाहित हैं। इसके अलावा समस्त उत्तरदाताओं में से 70 प्रतिशत उत्तरदाता शोधार्थी (एम.फिल. तथा पी.एच.डी.) हैं तथा 30 प्रतिशत उत्तरदाता परास्नातक विद्यार्थी हैं। 1.43 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि वर्तमान समय में विवाहेतर सम्बन्धों की तरफ पुरुष अधिक आकर्षित होते हैं और अपनाते हैं; जबकि एक तिहाई उत्तरदाताओं का मत है कि ये सम्बन्ध स्त्री तथा पुरुष दोनों सामान रूप से अपनाते हैं, वहीं 20 प्रतिशत उत्तरदाता किसी भी नतीजे पर नहीं पहुंच सके।

यदि तुलनात्मक रूप से देखें तो 40 प्रतिशत पुरुष तथा 47 प्रतिशत महिलाओं का मानना है कि पुरुष ही ज्यादा आकर्षित होते हैं, जबकि महज 07 प्रतिशत पुरुष महिलाओं को इसके लिए जिम्मेदार ठहराते हैं वहीं कोई भी महिला इस सम्बन्ध में आकर्षित होने तथा अपनाने के लिए महिलाओं को जिम्मेदार नहीं मानती। 47 प्रतिशत पुरुष तथा 20 प्रतिशत महिलाएं विवाहेतर सम्बन्ध में ज्यादा आकर्षण के लिए स्त्री व पुरुष दोनों को सामान रूप से जिम्मेदार ठहराते हैं।

2. अत्यधिक उत्तरदाता (70 प्रतिशत) किसी भी पार्टनर (साथी) द्वारा विवाहेतर सम्बन्ध अपनाने

का मुख्य कारण भावात्मक सम्बन्ध तथा यौनिक सम्भोग दोनों को मानते हैं, जबकि 23 प्रतिशत उत्तरदाता इस सम्बन्ध का मुख्य कारण सिर्फ यौनिक सम्भोग को ही समझते हैं।

3. विवाहेतर सम्बन्ध उत्पन्न होने के प्रमुख कारण क्रमशः पार्टनर द्वारा भावात्मक व यौनिक सहयोग न होना या असंतुष्टि होना, आपसी सम्बन्ध (बॉण्ड) विकसित न होना, पति–पत्नी में आपसी तालमेल की कमी, भिन्न यौनिक आनंद अनुभूति की प्रवृत्ति, विवाहपूर्व प्रेमी होने के बावजूद पारिवारिक दबाव के कारण दूसरे से जबरदस्ती विवाह करा देना, किसी एक पार्टनर का मादक द्रव्य व्यसनी होना, आर्थिक समस्या से उबरने के लिए तथा पश्चिमीकरण व फिल्म, धारावाहिक आदि से प्रेरित होना, नाभकीय परिवार होने के कारण दम्पति में झगडे के बाद उनको कोई समझाने वाला न होना आदि हैं।

4. आधे से ज्यादा (लगभग 53 प्रतिशत) उत्तरदातों का मानना है कि कोई भी व्यक्ति अपने व्यक्तिगत इच्छा या आत्मप्रेरित होकर ही विवाहेतर सम्बन्धों को अपनाता है, जबकि 17 प्रतिशत उत्तरदाता फिल्म व धारावाहिक आदि से प्रेरित, 17 प्रतिशत उत्तरदाता परिवार व मित्रमंडली में किसी सदस्य द्वारा प्रेरित तथा 13 प्रतिशत उत्तरदाता जीवनसाथी द्वारा सम्बन्ध में धोखा देने को कारण मानते हैं।

5. इस तथ्य से 47 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः सहमत तथा 40 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत रहे कि विवाहेतर सम्बन्ध पारिवारिक विघटन के कारक बनते हैं, जबकि 13 प्रतिशत उत्तरदाता इस तथ्य से किसी न किसी प्रकार असहमत रहे।

6. लगभग 57 प्रतिशत उत्तरदाता इस तथ्य से पूर्णतः सहमत तथा 30 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत रहे कि विवाहेतर सम्बन्ध के कारण बच्चों का समाजीकरण नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है तथा उन्हें विचलन की तरफ धकेलता है, जबकि 13 प्रतिशत उत्तरदाता इस तथ्य से असहमत रहे।

7. व्यभिचार/जरता (विवाहेतर सम्बन्ध) से सम्बन्धित IPC की धारा 497 तथा CrPC की धारा 198 से सम्बन्धित सामान्य नियमों के बारे में 10 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः जानकारी, लगभग 33 प्रतिशत उत्तरदाता अधिकतम जानकारी, 30 प्रतिशत उत्तरदाता अंशतः जानकारी रखते हैं, जबकि लगभग 27 प्रतिशत उत्तरदाता इसके बारे में नहीं जानते।

8. विवाहेतर सम्बन्ध पर 27 सितम्बर 2018 को उच्चतम न्यायालय के फैसले से 20 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः, लगभग 07 प्रतिशत उत्तरदाता अधिकतम तथा लगभग 33 प्रतिशत उत्तरदाता आंशिक रूप से संतुष्ट हैं, जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदाता इस फैसले से संतुष्ट नहीं हैं।

9. विवाहेतर सम्बन्ध पर भारत की एडिशनल सॉलिसीटर जनरल पिंकी आनंद के तर्क को लगभग 47 प्रतिशत उत्तरदाता न्याय संगत तथा उचित मानते हैं, जबकि लगभग 37 प्रतिशत उत्तरदाता न्यायसंगत नहीं मानते हैं, वहीं 16 प्रतिशत उत्तरदाता किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाये।

10. लगभग 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि विवाहेतर सम्बन्ध पर उच्चतम न्यायालय

के इस फैसले से स्त्री सशक्तिकरण कि तरफ कुछ हद तक कदम बढ़ा है, परन्तु 33 प्रतिशत युवा ऐसा नहीं मानते।

11. लगभग 23 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि उच्चतम न्यायालय के इस फैसले ने विवाह संस्था को बनाये रखने वाले सेफ्टी वाल्व को समाप्त कर दिया है, जबकि 43 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि विवाह संस्था को इससे कुछ हद तक ही नुकसान पहुंचेगा, वहीं लगभग 23 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि विवाह संस्था को इससे कुछ भी नुकसान नहीं पहुंचेगा। 10 प्रतिशत उत्तरदाता किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सके।

12. इस तथ्य से लगभग 13 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः सहमत (20 प्रतिशत स्त्री तथा लगभग 07 प्रतिशत पुरुष), लगभग 17 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत (13 प्रतिशत स्त्री तथा 20 प्रतिशत पुरुष) हैं कि विवाह पश्चात् पति या पत्नी को किसी से भी सम्बन्ध स्थापित करने की आजादी मिलनी चाहिए, जबकि इस तथ्य से लगभग 23 प्रतिशत उत्तरदाता असहमत (लगभग 07 प्रतिशत स्त्री तथा 40 प्रतिशत पुरुष) तथा लगभग 47 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः असहमत (60 प्रतिशत स्त्री तथा लगभग 33 प्रतिशत पुरुष) रहे।

13. इस बिन्दु पर 30 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः सहमत तथा लगभग 47 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत रहे कि अशिक्षित तथा कम पढ़े लिखे व्यक्तियों की अपेक्षा उच्च शिक्षित लोगों में विवाहेतर सम्बन्ध अधिक पाया जाता है, जबकि लगभग 23 प्रतिशत उत्तरदाता इस तथ्य से किसी न किसी प्रकार असहमत रहे।

14. इस तथ्य से लगभग 37 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः सहमत तथा 47 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत रहे कि निम्न आय वर्ग कि अपेक्षा उच्च आय वर्ग के लोगों में अधिक विवाहेतर सम्बन्ध स्थापित होते हैं, जबकि लगभग 23 प्रतिशत उत्तरदाता इस तथ्य से असहमत रहे।

15. इस तथ्य से लगभग 07 प्रतिशत उत्तरदाता पूर्णतः सहमत(0 प्रतिशत स्त्री व 14 प्रतिशत पुरुष) तथा लगभग 47 प्रतिशत उत्तरदाता सहमत (लगभग 33 प्रतिशत स्त्री व 60 प्रतिशत पुरुष) हैं कि उन व्यक्तियों के विवाहेतर सम्बन्ध अपेक्षाकृत अधिक होते हैं जिनके विवाहपूर्व किसी अन्य व्यक्ति से सम्बन्ध रह चुके होते हैं; जबकि 46 प्रतिशत उत्तरदाता (लगभग 67 प्रतिशत स्त्री व लगभग 27 प्रतिशत पुरुष) किसी न किसी प्रकार इस तथ्य से असहमत रहे।

16. यदि विवाहपूर्व किसी प्रेम सम्बन्ध में हैं परन्तु किसी कारण विवाह किसी दूसरे व्यक्ति से हो जाने कि स्थिति में आधे से ज्यादा (60 प्रतिशत) लोग (लगभग 73 प्रतिशत स्त्री व लगभग 47 प्रतिशत पुरुष) अपने प्रेमी से विवाहेतर सम्बन्ध रखना पसन्द नहीं करेंगे, परन्तु 40 प्रतिशत उत्तरदाता (लगभग 37 प्रतिशत स्त्री व लगभग 53 प्रतिशत पुरुष) दूसरे से विवाह हो जाने के बावजूद भी अपने प्रेमी से विवाहेतर सम्बन्ध रखना पसन्द करेंगे। विवाहेतर सम्बन्ध रखने वाले युवाओं में से अधिकांश (75 प्रतिशत स्त्री व 75 प्रतिशत पुरुष) का मत था कि वे अपने प्रेमी से सिर्फ भावात्मक सम्बन्ध रखना पसन्द करेंगे।

निष्कर्ष

उपरोक्त शोध कार्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि जीवनसाथी (पार्टनर) द्वारा भावात्मक सहयोग व यौनिक संतुष्टि न मिलने, पति–पत्नी के मध्य आपसी तालमेल न होने, भिन्न यौनिक अनुभव की इच्छा रखने, विवाहपूर्व किसी अन्य व्यक्ति से प्रेम सम्बन्ध होने, आर्थिक समस्या, संयुक्त परिवार टूटने आदि कारणों से विवाहेतर सम्बन्ध पनप रहे हैं और हमारे युवाओं का मानना है कि इन विवाहेतर सम्बन्धों की तरफ पुरुष अपेक्षाकृत अधिक आकर्षित होते हैं। यह सम्बन्ध मूलतः भावात्मक सहयोग एवं यौनिक संतुष्टि दोनों के लिए अपनाया जाता है, जिसकी प्रेरणा व्यक्ति को अधिकांशतः स्वयं से मिलती है।[11] विवाहेतर सम्बन्ध पारिवारिक विघटन के कारक बनते हैं और साथ ही बच्चों के समाजीकरण को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं, जिसके कारण बच्चे के सर्वांगीण विकास में बाधा पहुँचती है और वह शोषण का शिकार या बाल अपराधी बन जाता है।[12]

व्यभिचार/जरता (विवाहेतर सम्बन्ध) से सम्बन्धित नियमों के बारे में युवाओं को सामान्य जानकारी तो है, परन्तु सम्पूर्ण जानकारी नहीं है। उच्चतम न्यायलय द्वारा विवाहेतर सम्बन्ध के विषय में दिए गये निर्णय व सरकार के पक्ष प्रस्तुत करने के सन्दर्भ में हमारे युवा मिली जुली प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं।[13] उनका मानना है कि इस सम्बन्ध से परिवार व विवाह संस्था पर विघटनात्मक प्रभाव तो पड़ता है, परन्तु यह रूढ़िवादिता को तोड़कर व्यक्तिगत स्वतंत्रता में वृद्धि भी करता है। हलाकि अधिकांश युवाओं का मानना है कि यह सम्बन्ध विवाह संस्था का सेफ्टी वाल्व समाप्त कर देता है, इसलिए विवाह पश्चात् पति या पत्नी को किसी अन्य व्यक्ति से सम्बन्ध स्थापित करने की आजादी नहीं मिलनी चाहिए। उनके अनुसार अशिक्षित या कम पढ़े लिखे व्यक्तिओं की अपेक्षा उच्च शिक्षित तथा निम्न आय वर्ग के लोगों की अपेक्षा उच्च आय वर्ग के लोगों में इस प्रकार के सम्बन्ध अधिक स्थापित होते हैं। विवाह पूर्व किसी अन्य से प्रेम सम्बन्ध होने की स्थिति में विवाह पश्चात् अपने प्रेमी से विवाहेतर सम्बन्ध रखने की इच्छा अधिकांश युवा नहीं रखते और जो अपने प्रेमी से विवाहेतर सम्बन्ध रखना चाहते हैं वे सिर्फ भावात्मक सम्बन्ध ही रखना चाहते हैं, परन्तु विवाह पूर्व किसी अन्य से प्रेम सम्बन्ध होने को विवाहेतर सम्बन्ध स्थापित होने के प्रबल कारक के रूप में अवश्य स्वीकार करते हैं।

❒

सन्दर्भ –

1. *लॉज, डी. रिचर्ड, ओडोनोहुए, विलियम टी.,(1997). सेक्सुअल डेवियन्स, थीयरी असेसमेंट एंड ट्रीटमेंट, द गिलफोर्ड प्रेस, न्यूयार्क, लन्दन.*
2. *यास्मीन, जहान, चौधरी, अबू सईद, रहमान, एस.एम. अतिकुर, चौधरी, साजेदा, खैर, जारा (2017 मई). फैक्टर इन्वोल्विंग एक्सट्रामैरिटल अफेयर्स अमंग मैरिड एडल्ट्स इन बांग्लादेश, इंटरनेशनल जॉर्नल ऑफ कम्युनिटी मेडिसिन एंड पब्लिक हेल्थ, वॉल्यूम 04, पृ.1369–1386.*
3. *थॉम्पसन, एंथोनी पीटर (1984, फरवरी). इमोशनल एंड सेक्सुअल कंपोनेंट्स ऑफ एक्सट्रामैरिटल रिलेशन्स, जॉर्नल ऑफ मैरिज एंड फॅमिली, वॉल्यूम. 46, पृ. 35–42.*

4. एडवर्ड्स, जॉन एन. (1973 ऑगस्ट). एक्सट्रामैरिटल इन्वॉल्वमेंटः फैक्ट एंड थ्योरी, द जॉर्नल ऑफ सेक्स रिसर्च, वॉल्यूम. 09, पृ. 210–224.
5. फेयर, रे. सी. (1978 फरवरी). अ थ्योरी ऑफ एक्सट्रामैरिटल अफेयर्स, जॉर्नल ऑफ पोलिटिकल इकॉनमी, वॉल्यूम. 86, पृ. 45–61.
6. स्पिट्जबर्ग, ब्रायन एच. (2013). एक्सट्रामैरिटल अफेयर्स, द इंटरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इंटरपर्सनल कम्युनिकेशन, सैन डिएगो स्टेट यूनिवर्सिटी, यू. एस. ए.
7. ओगवोखदेम्हें, मौरीन, इशोला, सी.ए. (2013). फैक्टर्स रेस्पोंसिबल फॉर एक्सट्रामैरिटल अफेयर्स अस परसीव्ड बाई मैरिड एडल्ट्स इन लेगोस, नाइजीरिया, प्रोब्लेम्स ऑफ साइकोलॉजी इन द 21 सेंचुरी, वॉल्यूम 06.
8. मोरारो, मरूबे अमोस, (2015). एस्टब्लिशिंग अटिट्यूड्स ऑन एक्सट्रामैरिटल अफेयर्स अमंग मैरिड पीपल एंड डोज इन कमिटेड रिलेशनशिप्स इन केन्या, स्कॉलर्स जॉर्नल ऑफ आर्ट्स, ह्यूमैनिटिज एंड सोशल साइंसेज.
9. एक्स्ट्रा–मैरिटल रिलेशन्स एंड इट्स इम्पैक्ट ऑन चिल्ड्रन, लीगल सर्विस इंडिया .कॉम legalserviceindia.com/article/Extra-marital-Relations-and-its-Impact-on-children.html
10. शर्मा, मोहित, (2018, सितम्बर 27). सुप्रीम कोर्ट ने खत्म की IPC की धारा 497, व्यभिचार को अपराध मानने से इनकार, पत्रिका.काम.https://www.patrika.com/miscellenous-india/supreme-court-decision-on-adultery-will-come-today-1-3474662/
11. द वायर स्टाफ (2018, सितम्बर 27). सुप्रीम कोर्ट का फैसलारू व्यभिचार अब अपराध नहीं, महिला पति की संपत्ति नहीं. द वायर कॉम. https://www.latestlaws.com/hindi-news/
12. वैद्यनाथन, ए. (2018, सितम्बर 27). अडल्ट्री नॉट अ क्राइम सेज सुप्रीम कोर्ट के कोट्स ऑफ द जजेज, एन. डी. टी. वी. https://www.ndtv.com/india-news/adultery-is-not-a-crime-says-supreme-court-key-quotes-of-the-judges-1922973
13. जैन, मेहाल, (2018, सितम्बर 27). 'हस्बैंड इस नॉट द मास्टर ऑफ वाइफ', एस सी स्ट्राइक्स डाउन, 158 ईयर ओल्ड अडल्ट्री लॉ अंडर सेक्शन 497 IPC

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 46–51

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

परम्परा का मूल्यांकन और तुलसीदास दलित सौन्दर्यबोध के आईने में

अंकित कुमार वर्मा
शोधार्थी–भारतीय भाषा केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नईदिल्ली
E-mail : kumarankit8998@gmail.com Mob. +91 8948887969

तुलसीदास की सर्वतोमुखी प्रतिभा का वैशिष्ट्य उनका सृजनात्मक कल्पनालोक है। जिसमें राम के आदर्श से परिपूर्ण व्यवस्था को व्यापक और सर्वग्राही बताया गया है। तुलसी के भावबोध में भले ही 'रामराज्य' त्रितापों रहित व्यवस्था का घोतक हो, लेकिन शूद्र व अन्त्यज के लिए यह व्यवस्था नियम एवं कानून से आबद्ध धार्मिक पाठ के अलावा कुछ नहीं है। आदर्श व्यवस्था के प्रतिमान अवर्ण एवं सवर्ण दोनों के लिए एक से नहीं हो सकते। यदि ऐसा होता तो समाज में क्रांति एवं प्रतिक्रांति के मूल्यांकन की अर्थवत्ता ही नहीं रहती। हिंदी दलित आलोचना का उन्मेश उसके सौन्दर्यबोध तथा समतामूलक समाज की प्रबल चेष्टा से हुआ है। इसका पूर्ण परिपाक समता, स्वतंत्रता एवं बंधुत्व की भावना में निहित है। इसलिए तथाकथित मुख्यधारा हिंदी आलोचना का जो प्रतिरूप उसके आदर्श के व्यापकत्व एवं सर्वग्राही होने में है, उसका पूर्णतः निषेध दलित आलोचना करती है। दलित आलोचना यथार्थोन्मुख मानवतावादी संस्कृति की पूर्ण पराकाष्ठा है। इसलिए दलित आलोचना का उद्देश्य हिंदूवादी व्यवस्था से मुक्ति, उसके आदर्शों से मुक्ति के विधान में है।

तुलसी का कल्पनात्मक लोक 'रामराज्य' 'दैहिक', 'दैविक', 'भौतिक' तापों से रहित व्यवस्था है। इस व्यवस्था में सभी मनुष्य परस्पर प्रेम करके अपनी–अपनी रीति से चलते हैं। यह रीति वर्णव्यवस्था से परिचालित समाजिक व्यवस्था है।

"दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।"[1]

कहना न होगा इस व्यवस्था में, तुलसी ने 'टर्म एंड कंडीशन' भी लगा दी है। यदि इस व्यवस्था में सभी वर्णव्यवस्था के अनुरूप चलेंगे तभी त्रिताप नहीं व्यापेंगे। अन्यथा वे व्यापेंगे ही।

तुलसी का सम्पूर्ण चिंतन सनातनी व्यवस्था के प्रति मोहग्रस्त है। वे कलिकाल से निवेदन करते हैं कि समाज व्यवस्था विछिन्न हुयी जा रही है, कोई अपने धर्म के अनुसार नहीं चल रहा

है। वे 'रामराज्य' के लिए जर्जर हो चुकी वर्णव्यवस्था को पुनर्जीवित करना चाहते हैं। उनके 'रामराज्य' में उच्च आसन पर ब्राह्मण ही बैठा हुआ है। जिनके राम भी विप्रों के चरण पूजते हैं।

"सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा।
धर्म धुरंधर रघुकुलनाथा।।" [2]

तुलसी का रामराज्य सामंती व्यवस्था का प्रतिफलन है। जिस अमानवीय व्यवस्था ने दलितों को प्रताड़ित एवं उत्पीड़ित करके कहीं का न छोड़ा। वे उसी व्यवस्था की हिमाकत कर रहे हैं।

तुलसी के रामराज्य में अराजकता है। इसमें न्यायिक व्यवस्था नहीं है। सामर्थ्यवान पुरुष का इस व्यवस्था में कोई दोष ही नहीं होता है। इसमें तथाकथित भगवान भी बलात्कार करते हैं। वह भी उससे जो पतिव्रत धारण करती है।–

"छल करि टारेउ तासु ब्रत प्रभु सुर कारज कीन्ह।" [3]

किसी भी सभ्य समाज के लिए यह ग्राह्य नहीं होगा कि दुश्मन से बदला लेने के लिए उसकी पत्नी के साथ संसर्ग किया जाए। यह अराजकता है, इसमें गरीब–दलित को न्याय मिल ही नहीं सकता। जो समर्थ है उसी के पास सत्ता होगी। तब यह कैसे यकीन किया जा सकता है कि "तुलसी के राम दीनबन्धु हैं।"[4] यह साहित्य में सच को झुठलाना ही हुआ। सत्य कुछ और है हिन्दी आलोचना कुछ और कहकर बरगला रही है। 'रामराज्य' में दहेज का निषेध नहीं है। तुलसी ने इसका भाव विभोर होकर वर्णन किया है।

"कनक बसन मन भरि भरि जाना। महिषीं धेनु बस्तु बिधि नाना।।"[5]

किसको नहीं पता है कि दहेज के नाम पर घरेलू हिंसा में नव वधुओं के साथ क्या–क्या उत्पीड़न नहीं होता है। दहेज के नाम पर उन्हें पीड़ा एवं अवमानना इस कदर मिलती है। कि उन्हें अपने प्राणों की भी आहुति देनी पड़ती हैं। यह किसी भी समाज की सबसे बड़ी रूढ़ि है। यह रामराज्य के लिए भले ही सार्थक एवं प्रासंगिक हो लेकिन किसी भी सभ्य समाज के लिए सबसे कटुतम एवं दारुण व्यवस्था है।

तुलसी के 'रामराज्य' में 'प्रेम' से भी उत्कर्ष 'धर्म' का बताया गया है। बालि कहता है कि राम आप धर्म हेतु अवतरित हुए हैं और मुझे शिकारी की भांति मारा है। ऐसा कौन सा मैंने बैर कर दिया था जिससे कि मैं बैरी और सुग्रीव आपको प्यारा हो गया।–

"धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि ब्याध की नाईं।।
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा।।" [6]

क्या 'रामराज्य' की न्यायिक व्यवस्था में दोषी को दोष से अवगत कराने से पहले उसको मृत्युदंड दिया जाएगा? यदि मृत्युदंड देना जरुरी है तो उसमें भी नियम एवं कायदे–कानून तो होना ही चाहिए। दृष्टिपात करने पर प्रतीत होता है कि बालि की हत्या राम द्वारा की गयी सुनियोजित एवं योजनाबद्ध हत्या है। यह हत्या बालि की न होकर उतनी ही न्यायिक व्यवस्था की भी हत्या है। जिसमें दोषी को सजा का कोई प्रावधान नहीं है। फिर रामविलास शर्मा भले ही कहते रहें।–

"लेकिन तुलसी की भक्ति मानव–वाद में डूबी हुयी है। यह कवि मनुष्य का सबसे बड़ा उपासक है।"[7] लेकिन एक दलित को तो पता ही है कि भक्ति में कवि या ईश्वर के सम्मुख बराबरी से होने वाला कुछ नहीं है। बल्कि सामाजिक स्तर पर बराबरी की मांग करनी होगी। दलित ये भी जानते हैं कि हिन्दू व्यवस्था के आग्रही संतो ने "उन्होंने यह सीख नहीं दी कि सभी मनुष्य बराबर हैं। उनकी यह सीख थी कि ईश्वर की नजर में सभी बराबर हैं।"[8]

यथार्थ यह है कि भक्ति का उद्देश्य सामाजिक समरसता से जुड़ा हुआ है। जबकि दलित या शूद्र का उद्देश्य राजनीतिक एवं सामाजिक स्तर पर समतावादी संस्कृति का आह्वान है। तब ऐसे में सवाल उठता है कि जब शूद्र सामाजिक स्तर पर बराबरी की मांग करेंगे तब तुलसी क्या बराबरी देना चाहेंगे? तब तो उन्हें यह चिंता सताने लगेगी।–

"सूद्र करहिं जप तप ब्रत नाना।
बैठि बरासन कहहिं पुराना।।"[9]

इसलिए रामविलास शर्मा का यह कहना कितना सार्थक है कि यह कवि मनुष्य का सबसे बड़ा उपासक है। यह वे ही जानें। शूद्र तो आज इस व्यवस्था का त्याग ही करना चाहते हैं। जिस ब्राह्मणवादी व्यवस्था में राम भी ब्राह्मणों के चरण स्पर्श से अछूते नहीं रहे हैं। उस सामन्ती व्यवस्था में शूद्र क्योंकर सम्मिलित होंगे?

यह जानना ही होगा कि तुलसी का 'रामचरितमानस' वर्णव्यवस्था की रक्षा के लिए तरह–तरह के यत्न करके उसकी हिमाकत करता है। उनके काव्य में राम कहीं भी अस्पृश्यता के आकांक्षी नहीं हैं। वे पिछड़े वर्ग के निषाद को गले लगाते हैं। तथा शबरी के भी जूठे बेर खाते हैं। अर्थात् सामाजिक समरसता के आग्रही होने का परिचय देते हैं। लेकिन जब बात सामाजिक समानता की आती है, तब यही राम कहने लगते हैं।–

"जाहु भवन मम सुमिरन करेहू।
मन क्रम बचन धर्म अनुसरेहू।।"[10]

राम का यह कथन निषाद से है। इससे यह बात निकलकर आती है कि जब तक निषाद वर्ण व्यवस्था का अनुसरण करता रहेगा तब तक राम गले लगाते रहेंगे। लेकिन जैसे ही कोई शूद्र वर्ण व्यवस्था के प्रति आक्रोश करेगा तब? तब भले ही तुलसी ने न लिखा हो, तब वे शूद्र का गला शम्बूक की भांति काट देंगे। यह भी 'रामराज्य' का उतना ही सच है। तुलसी ने आगे व्यंजित किया है कि पुण्य इस जगत में कोई दूसरा नहीं है, ब्राह्मण के मन, कर्म तथा वचन से पद पूजने के अलावा।–

"पुन्य एक जग महुँ नहिं दूजा।
मन क्रम बचन बिप्र पद पूजा।।"[11]

अन्यत्र तुलसी के राम कहते हैं।–

"पूजिअ बिप्र सील गुन हीना।
सूद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना।।"[12]

तुलसी तथा उनके राम के अलावा ब्राह्मणों की भी यह उतनी ही चिंता है कि शूद्र यदि

व्यवस्था बाह्य हो जायेंगे तो ब्राह्मणों के पैर पूजने वाला कौन रह जायेगा। इसलिए न ही तुलसी और न ही उनके राम कहीं भी अस्पृश्यता की वकालत करते हैं। बल्कि वे इससे इतर वर्णव्यवस्था के अनुपालन की वकालत करते नजर आते हैं। आज रामराज्य की आग्रही भारतीय जनता पार्टी भी तो यही चाहती है कि सभी हिन्दू बने रहें। यदि कोई व्यवस्था में रहेगा नहीं तो वर्णव्यवस्था की रक्षा कैसे होगी ? तुलसी की यही मूल चिंता है। इसलिए कहीं–कहीं वे उदारवादी सनातनी की भांति हमारे सम्मुख आते हैं।

इसलिए जो लोग निषाद एवं शबरी प्रसंग के आधार पर तुलसी में सामंत विरोधी मूल्य ढूंढ़ते हैं, वे दलित साहित्य की चेतना को बरगला कर भ्रमित करने के अलावा कुछ और नहीं कर रहे हैं। जो तुलसी के काव्य में प्रगतिशीलता एवं सामंत विरोधी मूल्य खोजते हैं वे तुलसी की वे ही पंक्तियाँ रेखांकित करते हैं। जो रामकथा के प्रवाह में मध्य की कुछ नैतिक जान पड़ती हैं। या यूँ कहें जिनसे उनकी स्थापना तार्किक एवं पुष्ट होती है। जैसे 'परंपरा का मूल्यांकन' में कुछ पंक्तियाँ उद्धृत है।–

"परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
परपीड़ा सम नहिं अधमाई।।"[13]

ये चुन–चुन कर वही पंक्ति रेखांकित करते हैं जो नैतिक एवं सदाचारी है। तुलसी का सम्यक विवेचन करेंगे तब इन्हें मानना ही पड़ जायेगा कि तुलसी वर्णव्यवस्था के समर्थक होने के कारण अंततोगत्वा ब्राह्मण के ही चरण पुजवा रहे हैं। इसलिए वे वर्णव्यवस्था के समर्थन वाली पंक्तियों को ही प्रक्षिप्त बता रहे हैं। जिसका आगे विवेचन किया जायेगा। उपरोक्त दी हुई चौपाई का यहाँ दिग्दर्शन अपेक्षित है।–

"पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।
निर्नय सकल पुरान बेद कर। कहेउँ तात जानहिं कोबिद नर।।"[14]

देखिये पूरी चौपाई की जगह इन्होंने वही पंक्तियों का रेखांकन किया जिनसे इनका मत पुष्ट होता है।

जहाँ पूरे वेद शास्त्र का बखेड़ा खड़ा किया जा रहा है। उसे ये हिंदी के आलोचक नहीं रेखांकित करना चाह रहे हैं। वे सिर्फ 'सलेक्टिव' पंक्तियों के माध्यम से पूरी तन्मयता के साथ तुलसी को प्रगतिशील घोषित करने में लगे हैं। किताब में अन्यत्र 'रिडल' खड़ी की गयी है।–

"एक नारिब्रतरत सब झारी।
ते मन बच क्रम पतिहितकारी।।"[15]

प्रस्तुत पंक्ति की रामविलास शर्मा आत्ममुग्ध होकर व्याख्या कर रहे हैं। "इस तरह पुरुष के विशेषाधिकारों को न मानकर तुलसीदास ने दोनों को सामान रूप से एक ही व्रत पालने का आदेश दिया था।"[16] बताइए ये हिंदी की मार्क्सवादी आलोचना है! 'पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं' तथा एक उपरोक्त दी हुई कुछ पंक्तियों के माध्यम से तुलसी को नारी का शुभचिंतक घोषित किया जा रहा है। जिसके बदले तुलसी की अन्य नारी विषयक कथनों की पूर्ण रूप से तिलांजलि दी जा रही है। ठीक है, लेकिन उपर्युक्त दी हुई चौपाई को तो वे पूर्ण लिख सकते थे। जिसे

उन्होंने नहीं लिखा। रामचरितमानस में यह चौपाई कुछ इस अनुसार है।–

"सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी।।
एक नारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी।।"[17]

कैसे ये हिंदी के आलोचक धता पढ़ा रहे हैं। यहाँ स्पष्ट देखा जा सकता है। ये हिंदी के मार्क्सवादी आलोचक उन्हीं पंक्तियों को रेखांकित कर रहे हैं, जो इनके काम की हैं। पूरी चौपाई के उद्धरण देते तो इन्हें स्वीकार ही करना पड़ जाता (जो कि स्वीकार नहीं हैं) कि 'रामराज्य' में पतिपरायण स्त्रियाँ इसलिए थीं क्योंकि 'रामराज्य' में सभी स्त्री एवं पुरुष ब्राह्मणों के पैर पूजते थे। यहाँ विदित है कि अपनी स्थापनाओं की तार्किकता के लिए सच का गला घोंटा जा रहा है। ये तुलसी की एक ही चौपाई के वे ही चरण रेखांकित कर रहे हैं जो सामंत विरोधा भासि होते हैं। जब कोई इनसे सवाल खड़ा करे तब ये कहते हैं।– "भारत की बहुसंख्यक किसान–जनता की वेदना, सुखी जीवन के लिए उसकी अदम्य आकांक्षा, सामाजिक परिवर्तन के लिए संघर्ष करने के लिए उसकी क्षमता भारतीय साहित्य में, सर्वाधिक तुलसीदास में अभिव्यक्त हुई। उनके सामाजिक विचारों को जानने के लिए रामचरितमानस के साथ कवितावली, गीतावली और विनय पत्रिका को मिलाकर पढना चाहिए। इससे पता चलेगा कि रामचरितमानस में प्रक्षिप्त अंश कौन से हैं।"[18] 'रामचरितमानस' में प्रक्षिप्त विद्यमान हैं। ये जाहिर तौर पर वर्णव्यस्था के समर्थन वाली पंक्तियों को प्रक्षिप्त करार देंगे। ये 'रामचरितमानस' के साथ–साथ 'गीतावली', 'कवितावली' और 'विनयपत्रिका' पढ़ने की सलाह दे रहे हैं। इनसे पूछा जा सकता है फिर 'विनयपत्रिका' में ये कैसी पंक्तियाँ हैं ? जहाँ भी तुलसी की मूल चिंता वर्णधर्म के विघटन की बनी हुई है।–

"आश्रम–बरन–धरम–बिरहित जग, लोक–बेद–मरजाद गई है।"[19]

यहाँ विनयपत्रिका में भी देखा जा सकता है, तुलसी राम के प्रति अनुनय–विनय करके कलियुग के 'कलि कौतुक तात न जात कही' कहकर 'नानापुराणनिगमागम' व्यवस्था को छिन्न–भिन्न होने का दुखड़ा रो रहे हैं। ऐसा नहीं है कि उत्तरोत्तर रचनाओं में उन्होंने बहुत कुछ सीखा है। सच यह है कि उन्होंने कुछ सीखकर भी नहीं सीखा है। वे कलियुग के तोष गरीबी, भूख और दरिद्रता का कारण वर्णव्यवस्था में आये विघटन को समझ रहे हैं। यहाँ ऐसे में तुलसी की उत्तरकालीन रचना कवितावली से उद्धरण देना यथोचित होगा।–

"बर्न–बिभाग न आश्रमधर्म, दुनी दुख–दोष–दरिद्र–दली है।"[20]

यहाँ कवितावली में भी देखा जा सकता है कि तुलसी की मूल चिंता कलियुग में वर्णधर्म के लोप की ही बनी हुई है। लेकिन ये हिंदी के आलोचक 'रामचरितमानस' के साथ पढने की सलाह दे रहे हैं। इसलिए निष्कर्ष रूप में कहें तो दलित साहित्य के भावबोध एवं सौंदर्यबोध में श्रेणीबद्ध विचारधारा का उन्मूलन है, इसलिए 'रामराज्य' या ऐसी व्यवस्था के पारंपरिक सौंदर्यशास्त्र को दलित साहित्य नकारता है। अस्तु।

❐

सन्दर्भ –

1. *टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दारः श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर, गोबिन्दभवन कार्यालय कोलकाता का संस्थान, संस्करण एक सौ छब्बीसवां, सं 2077 पृ. 854*
2. *पूर्वोक्त पृ. 854*
3. *पूर्वोक्त पृ. 111*
4. *रामविलास शर्माः परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. 66*
5. *टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दारः श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर,गोबिन्दभवन कार्यालय कोलकाता का संस्थान, संस्करण एक सौ छब्बीसवां, सं 2077 पृ.284*
6. *पूर्वोक्त पृ. 635*
7. *रामविलास शर्माः परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. 84*
8. *डॉ भीमराव अम्बेडकरः जाति का विनाश, अनु. राजकिशोर, फारवर्ड प्रेस, गणेश नगर, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. 139*
9. *टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दारः श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर, गोबिन्दभवन कार्यालय कोलकाता का संस्थान, संस्करण एक सौ छब्बीसवां, सं 2077 पृ. 923*
10. *पूर्वोक्त पृ. 853*
11. *पूर्वोक्त पृ. 874*
12. *पूर्वोक्त पृ. 610*
13. *रामविलास शर्माः परंपरा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. 70*
14. *टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दारः श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर,गोबिन्दभवन कार्यालय कोलकाता का संस्थान, संस्करण एक सौ छब्बीसवां, सं 2077 पृ. 871*
15. *रामविलास शर्माः परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. 81*
16. *पूर्वोक्त, पृ. 81*
17. *टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दारः श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर,गोबिन्दभवन कार्यालय कोलकाता का संस्थान, संस्करण एक सौ छब्बीसवां, सं 2077, पृ. 855*
18. *रामविलास शर्माः परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. 22*
19. *टीकाकार हनुमानप्रसाद पोद्दारः श्रीरामचरितमानस, गीताप्रेस गोरखपुर,गोबिन्दभवन कार्यालय कोलकाता का संस्थान, संस्करण एक सौ छब्बीसवां, सं 2077, पृ. 855*
20. *रामविलास शर्माः परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृ. 22*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 52–63

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

उत्तराखण्ड में महिला सशक्तिकरण की चुनौतियाँ तथा सम्भावनाऐं

डॉ. रवि जोशी

संविदा शिक्षक, राजनीति शास्त्र, स्व.डॉ.आर.एस. टोलिया राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुनस्यारी, जनपद–पिथौरागढ़, (उत्तराखण्ड)

E-mail : joshiravialm@gmail.com Mob. 7302204313

सारांश

भारतीय संविधान में महिलाओं के सम्मान को सुनिश्चित करने तथा उनके सशक्तीकरण को बढ़ावा देने हेतु अनेक उपबन्ध किये गये हैं। सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिदृश्य में महिलाओं का सशक्तीकरण किसी देश को समग्रता में समझने और विकास के प्रतिमानों को पहचानने का एक माध्यम भी है। किसी भी समाज में महिलाओं का सशक्तीकरण समाज में उनकी स्थिति का द्योतक होता है। महिला सशक्तीकरण को किसी समाज में महिलाओं की सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षमता के रूप में भी अभिव्यक्त किया जाता है। यह एक ऐसे परिवेश का सृजन भी है जहाँ महिलाऐं अपनी उन्नति तथा परिस्थिति के बारे में स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय कर सकें। महिला सशक्तीकरण से तात्पर्य किसी भी महिला के आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता व आत्मविश्वास में वृद्धि के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक उत्थान से है। प्रस्तुत शोध पत्र में उत्तराखण्ड में महिलाओं की वर्तमान स्थिति, उनके समक्ष चुनौतियों तथा संभावनाओं का विश्लेषण किया गया है।

किसी भी देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रगति को जानने के लिये वहां की महिलाओं की स्थिति एवं स्तर का आंकलन करना अति आवश्यक है। समाज में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। महिलाओं को विकास की मुख्यधारा से जोड़े बिना किसी भी समाज, राज्य एवं देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक विकास की कल्पना भी नही की जा सकती है। भारतवर्ष में महिलाओं का सशक्तीकरण स्वाधीनता के बाद से ही सरकारों की चिंता का एक प्रमुख विषय रहा हैं।

भारतवर्ष में महिलाओं की स्थिति तथा उनकी बेहतरी को दृष्टिगत रखते हुऐ संविधान के अनेक अनुच्छेदों में उपबन्ध किये गये हैं। अनुच्छेद 14 के अनुसार ''राज्य भारत के राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नही करेगा।''

अनुच्छेद 15 (1) के अनुसार –''राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।''

अनु. 15 (3) के अनुसार– ''इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबन्ध करने से निवारित नहीं करेगी।''

अनु. 16 के अनुसार–''राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबन्धित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी।''

नीति निदेशक तत्वों में भी महिलाओं की समानता और विकास को सुनिश्चित करने हेतु कई उपबन्ध किये गये हैं– अनु. 39 (क) के अनुसार– ''पुरूष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो।''

अनु. 39 (घ) के अनुसार–'' पुरूषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो।''

अनु. 39(ड.) के अनुसार–'' पुरूष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों।''

अनु. 42 के अनुसार–'' राज्य काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए और प्रसूति सहायता के लिए उपबन्ध करेगा।''

संविधान के भाग 4 क में उपबन्धित मूल कर्त्तव्यों में भी महिलाओं के हित में तथा उनके सम्मान को बढ़ाने हेतु प्रावधानित किया गया है– अनु. 51 क (ड.) के अनुसार– ''भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है।''[1]

इस प्रकार भारतीय संविधान में भी महिलाओं के सम्मान को सुनिश्चित करने तथा उनके सशक्तीकरण को बढ़ावा देने हेतु अनेक उपबन्ध किये गये हैं। सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिदृश्य में महिलाओं का सशक्तीकरण किसी देश को समग्रता में समझने और विकास के प्रतिमानों को पहचानने का एक माध्यम भी है। किसी भी समाज में महिलाओं का सशक्तीकरण समाज में उनकी स्थिति का द्योतक होता है। महिला सशक्तीकरण को किसी समाज में महिलाओं की सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षमता के रूप में भी अभिव्यक्त किया जाता है। यह एक ऐसे परिवेश का सृजन भी है जहाँ महिलाऐं अपनी उन्नति तथा परिस्थिति के बारे में स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय कर सकें। महिला सशक्तीकरण से तात्पर्य किसी भी महिला के आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता व आत्मविश्वास में वृद्धि के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक उत्थान से है।

''व्यापक अर्थों में सशक्तीकरण से तात्पर्य भौतिक संपदा, बौद्धिक साधनों व विचारधारा पर स्त्रियों का भी नियंत्रण होने से है। भौतिक साधनों में भूमि, जल ,जंगल, शारीरिक श्रम, संपत्ति व संपत्ति के स्रोतों पर नियंत्रण को सम्मिलित किया जा सकता है जबकि बौद्धिक स्रोतों

में ज्ञान, सूचना तथा विचारों पर नियंत्रण के अंतर्गत विशिष्ट प्रकार के विश्वास, मूल्य, अभिवृत्तियाँ तथा व्यवहार को उत्पन्न करने, प्रचलित करने, उनका पोषण कर उन्हें संस्थागत स्वरूप प्रदान करने की क्षमता को सम्मिलित किया जा सकता है जो यह निश्चित करेगा कि किसी विशिष्ट सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिदृश्य में लोग स्त्रियों को किस प्रकार से देखते हैं।''[2]

उत्तराखण्ड में महिला सशक्तीकरण के बढ़ते आयाम

वर्ष 2000 में पृथक राज्य गठन के बाद यहाँ की महिलाओं को सशक्त बनाने का मुद्दा लगातार प्रमुखता से उठता रहा है। राजनीतिक दलों, स्वयंसेवी संगठनों, बुद्धिजीवियों एंव सामाजिक कार्यकर्ताओं की लगातार मांग रही है कि इसके लिए ठोस कार्यक्रम बनाकर महिलाओं के विकास की ओर समुचित ध्यान दिया जाय क्योंकि महिलाऐं उत्तराखण्ड के जन जीवन का आधारस्तम्भ हैं।

शिक्षा का बढ़ता प्रसार– राज्य गठन के बाद महिला शिक्षा में लगातार बढ़ोत्तरी हुई है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता की दर 59.6 प्रतिशत थी वहीं वर्ष 2011 में यह बढ़कर 70.70 प्रतिशत हो गई है। राज्य में महिलाओं द्वारा ग्रहण की जाने वाली परम्परागत शिक्षा तथा तकनीकी शिक्षा एंव व्यावसायिक शिक्षा में भी बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। यद्यपि इस दिशा में अभी भी काफी कुछ किया जाना बाकी है।

महिला रोजगार में बढ़ोत्तरी– राज्य गठन के बाद सरकारी विभगों एंव अन्य संस्थानों में महिला रोजगार के आँकड़ों में वृद्धि दर्ज की गई है। इसके अतिरिक्त मनरेगा जैसी महत्वपूर्ण योजनाऐं लागू होने का एक सकारात्मक परिणाम यह हुआ है कि इसके माध्यम से यहाँ की महिलाओं की दैनिक मजदूरी रोजगार में प्रतिभागिता बढ़ गयी है। यह योजना लागू होने से पूर्व यहाँ की महिलाओं की मजदूरी रोजगार में प्रतिभागिता बेहद कम थी।

मनरेगा में महिलाओं की प्रतिभागिता

स.क्रं.	जनपद	वर्ष 2006–07		वर्ष 2007–08		वर्ष 2008–09	
		प्राप्त रोजगार मानव दिवस (लाख में)	कुल सृजित रोजगार में से प्रतिशत	प्राप्त रोजगार मानव दिवस (लाख में)	कुल सृजित रोजगार से प्रतिशत	प्राप्त रोजगार मानव दिवस (लाख में)	कुल सृजित रोजगार से प्रतिशत
1.	टिहरी गढ़वाल	5.93	32.4	21.7	52.28	18.46	62.11
2	चमोली	5.73	31.19	9.5	39.4	8.16	43.63
3.	चम्पावत	0.71	18.06	1.9	31.2	1.12	23.18
4.	उधमसिंह नगर			1	16.7	1.71	23.71
5.	हरिद्वार			0.3	8.3	0.54	8.09
6.	पौढी गढवाल					2.75	38.73
7.	अल्मोड़ा					1.53	26.51
8.	रूद्रप्रयाग					0.24	22.01
9.	पिथौरागढ़					1.39	21.31
10.	देहरादून					1.45	20.6
11.	बागेश्वर					0.59	17.25
12.	उत्तरकाशी					0.31	8.70
13.	नैनीताल					0.22	8.39
कुल	उत्तराखण्ड	12.37	30.46	34.36	42.76	38.46	36.46

स.क्रं.	जनपद	वर्ष 2014–15		वर्ष 2021–22	
		प्राप्त रोजगार मानव दिवस (लाख में)	कुल सृजित रोजगार में से प्रतिशत	प्राप्त रोजगार मानव दिवस (लाख में)	कुल सृजित रोजगार से प्रतिशत
1.	टिहरी गढ़वाल	15.59	69.81	23.60	71.19
2	चमोली	13.36	57.85	15.40	63.32
3.	चम्पावत	1.82	35.60	5.77	45.70
4.	उधमसिंह नगर	2.37	37.22	6.47	47.47
5.	हरिद्वार	0.97	15.94	4.65	40.97
6.	पौढी गढवाल	12.07	64.33	16.12	66.14
7.	अल्मोड़ा	4.37	50.03	9.35	55.19
8.	रूद्रप्रयाग	5.66	51.99	8.55	61.92
9.	पिथौरागढ	5.62	42.57	10.00	49.33
10.	देहरादून	1.29	21.88	6.35	35.81
11.	बागेश्वर	2.18	43.23	5.10	54.09
12.	उत्तरकाशी	8.08	45.80	17.80	52.71
13.	नैनीताल	1.24	27.48	5.23	44.72
कुल	उत्तराखण्ड	74.62	50.58	134.44	55.28

स्रोत– नरेगा एलर्ट एण्ड एनालिसिस 2006–07 से 2008–09 एवं नरेगा इम्पलीमेंटेशन स्टेट्स रिपोर्ट 2006–07 से 2021–22 एवं www.nrega.nic.in

उत्तराखण्ड में महिलाओं को मनरेगा के अन्तर्गत वर्ष 2006–07 से 2021–22 तक प्राप्त हुऐ दैनिक मजदूरी रोजगार के आँकड़ों का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि इस योजना के अन्तर्गत राज्य में महिलाओं को प्राप्त हो रहे रोजगार में लगातार वृद्धि हुई है। उत्तराखण्ड के पूर्णतः पर्वतीय जिलों जहाँ कि पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं की संख्या अधिक है तथा पुरूषों के लगातार पलायन के चलते कृषि, पशुपालन तथा अन्य सामाजिक कार्यों का अधिकांश भार महिलाओं के ही जिम्मे है। ऐसे में मनरेगा में महिलाओं की सक्रिय और व्यापक भागीदारी की उम्मीद पूर्व में ही की गई थी। यद्यपि आज भी महिलाओं की बहुत बड़ी आबादी मनरेगा के समुचित लाभों से वंचित है तथापि इस योजना के अन्तर्गत महिला रोजगार में वृद्धि महिला सशक्तीकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसी तरह राज्य के कई जिलों में चलाई जा रही आजीविका परियोजना, उत्तराखण्ड महिला समेकित विकास योजना, महिला समाख्या, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, स्वशक्ति एंव स्वंयसिद्धा तथा स्वयं सहायता समूहों के निर्माण के माध्यम से भी महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने एंव सशक्तीकरण की प्रक्रिया को बल मिला है।

शराब के विरूद्ध आन्दोलन एंव अन्य सामाजिक आन्दोलनों तथा पर्यावरण संरक्षण में महिलाओं की प्रभावी भूमिका

उत्तराखण्ड में रहने वाले पुरूषों में व्यापक तौर पर पाई जाने वाली मद्यपान की प्रवृत्ति राज्य की एक प्रमुख सामाजिक समस्या है। राज्य के युवाओं में लगातार बढ़ती इस प्रवृत्ति ने उन्हें भीतर से तो खोखला किया ही है, साथ ही पारिवारिक तनावों तथा विखण्डन को भी तीव्र

किया है जिसका सर्वाधिक नुकसान महिलाओं को उठाना पड़ा है। मद्यपान की बढ़ती प्रवृति के कारण पारिवारिक झगड़ों, सामाजिक तनावों तथा महिला हिंसा के मामलों में वृद्धि हुई है तथा महिलाओं का जीवन और भी अधिक कष्टप्रद होता गया है।

समाज में लगातार बढ़ रही मद्यपान की प्रवृत्ति के विरूद्ध महिलाओं ने समय–समय पर अपनी आवाज बुलन्द की है तथा कई जगहों पर इस प्रवृत्ति के विरूद्ध लगातार धरना–प्रदर्शन, शराब की दुकानों को बन्द करवाना तथा शराबियों के सामाजिक बहिष्कार इत्यादि कदम उठाये हैं। जो यथास्थितिवाद के विरूद्ध महिलाओं के संघर्ष की बढ़ती प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है, साथ ही महिलाओं की लगातार उन्नत होती सामाजिक एंव राजनैतिक चेतना का परिचायक भी है। यद्यपि महिलाऐं राज्य से शराब को पूरी तरह हटाने के अभियान में सफल नहीं हो पाई हैं, तथापि कई जगहों पर शराब विरोधी आन्दोलनों में सशक्त भागीदारी कर उन्होंने अपनी उन्नत चेतना को प्रदर्शित किया है।

इसी तरह पेयजल की समस्या, जंगली जानवरों एंव आवारा जानवरों से खेती–किसानी को हो रहे नुकसान, विद्यालय में शिक्षकों की कमी आदि अनेक सामाजिक समस्याओं के विरूद्ध आन्दोलनों में महिलाओं ने प्रभावी पहल की है तथा सशक्त नेतृत्व प्रदान किया है। पर्यावरण सरंक्षण एंव वनों से संबन्धित हक–हकूकों के प्रसिद्ध आन्दोलन **'चिपको आन्दोलन'** ने यहाँ की महिलाओं को विश्वव्यापी पहचान दिलाई।

उत्तराखण्ड में महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के ग्यारह वर्षों के कार्यान्वयन में पहली बार टिहरी गढ़वाल जनपद के थौलधार विकास खण्ड के ग्राम पंचायत **किरगणी** के 55 जॉबकार्ड धारकों को बेरोजगारी भत्ता दिया गया जिसमें से 46 महिलाऐं थी।[3] यह बेरोजगारी भत्ता सरकारों की विफलता तथा इन श्रमिकों के डेढ़ वर्ष तक चले अनवरत् संघर्ष का परिणाम था। इस तरह राज्य में महिलाओं ने बेरोजगारी भत्ता प्राप्त कर अपने संघर्ष को एक नई पहचान दी है।

'प्रकृति के साथ समन्वय से रहने के कारण पहाड़ी महिलाओं में एक गहरी समझ और परिपक्वता आयी और यह उनके जीवन और आन्दोलनों से साफ झलकती है, लेकिन आज की विकास परियोजनाओं ने प्रकृति के साथ खिलवाड़ कर उनकी जीवन शैली को ही बदल दिया है।

पिछले कुछ दशकों में वनों के सफाये के साथ–साथ हिमालय क्षेत्र के प्राकृतिक पानी के स्रोत सूख गये है और बाँध परियोजनाओं एंव शहरीकरण की वजह से उनकी अधिकांश उपजाऊ भूमि उनसे छिन चुकी है, परंतु इस विकृत विकास के बावजूद यहाँ की महिलाऐं लोकप्रिय महिला आन्दोलनों के जरिये अपनी आवाज बुंलद करती रही हैं, सत्तर के दशक का चिपको अन्दोलन जिसने पूरी दुनिया का ध्यान अपनी ओर खींचा, महिलाओं के विरोध का एक ज्वलंत उदाहरण है।''[4]

पंचायतों तथा शहरी निकायों में पचास फीसदी महिला प्रतिनिधित्व

राज्य गठन के बाद पंचायतों तथा शहरी निकायों में महिलाओं को 50 फीसदी आरक्षण दिये जाने से ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में महिला प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय बढ़ोत्तरी हुई है। महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता बढ़ने से महिलाओं के सशक्तीकरण की प्रक्रिया आगे बढ़ी है।

उत्तराखण्ड में महिला सशक्तीकरण की चुनौतियाँ

पृथक उत्तराखण्ड राज्य गठन के पन्द्रह वर्ष पूर्ण होने को है। पृथक राज्य गठन के लिये इस क्षेत्र के पिछड़ेपन को जिम्मेदार माना गया था। राज्य निर्माण के आन्दोलन में छात्रों, युवाओं, कर्मचारियों तथा समाज के हर वर्ग की प्रतिभागिता के साथ–साथ महिलाओं की भी प्रभावी उपस्थिति थी। ऐसी उम्मीद की गई थी कि पृथक राज्य निर्माण से यहाँ रहने वाली महिलाओं का न केवल जीवन स्तर बेहतर होगा बल्कि उनका कार्यबोझ कम करते हुऐ उनका स्वास्थ्य भी बेहतर बनाने हेतु यथोचित प्रयास किये जायेंगे, परंतु राज्य का पन्द्रह वर्षो का सफर महिलाओं के सशक्तीकरण के मार्ग में अनेक चुनौतियो को रेखांकित करता है।

महिलाओ के विरुद्ध हिंसा एवं अपराधों में लगातार हो रही बढोत्तरी

पूरे देश की ही तरह उत्तराखण्ड राज्य में भी विगत पन्द्रह वर्षों में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा एंव अपराधों में लगातार बढोत्तरी हुई है। शांत समझी जाने वाली पर्वतीय वादियो में भी बढते अपराधों की वजह से सामाजिक असुरक्षा तथा परिवर्तित परिवेश की वजह से महिला शिक्षा पर भी विपरीत प्रभाव हुआ है। उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रसार तथा महिलाओं को उपभोग की वस्तु समझने की प्रवृत्ति के कारण भी महिलाओं के विरुद्ध अपराधों में लगातार बढोत्तरी हो रही है। गॉवों एवं शहरों का माहौल भी विगत दो दशकों में तेजी से बदला है। आज राज्य में महिलाओं की सुरक्षा एवं सम्मान की संस्कृति विकसित करना महिला सशक्तीकरण के लिए एक जबर्दस्त चुनौती है। इसके साथ ही साथ महिलाओं के विरूद्व हो रहे अपराधों एवं हिंसा को समाप्त करके ही सही अर्थों में महिला सशक्तीकरण का सपना साकार किया जा सकता है क्योंकि भयमुक्त वातावरण एवं सुरक्षित परिवेश में ही महिलाओं का समुचित विकास सम्भव है।

पर्वतीय क्षेत्रो से पुरूषों का बढ़ता पलायन

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों से पुरुषों का पलायन लगातार बढता गया है। रोजगार की तलाश के साथ–साथ उच्च एवं व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा की तलाश इसके प्रमुख कारण रहे हैं।

जनपद चंपावत की कुछ ग्राम सभाओं में लोगो के बर्हिप्रवजन का परिदृश्य

स.क्रं.	ग्राम सभा	मार्च 2010 में कुल परिवार	विगत 10 वर्षो में पलयान करने वाले परिवार		पलायन करने वाली जनसंख्या का प्रतिशत
			परिवारों की संख्या	कुल व्यक्ति	
1.	गागर	278	110	400	39.56
2.	पिनाना	55	20	65	36.3
3.	बेड़ाओड़	120	30	110	25
4.	कायल	250	50	200	20
5.	मड़चमार	140	25	66	17.8
6.	थुवामौनी	120	20	40	16.6
7.	नरसिंहडांडा	210	30	48	14.2
8.	बोराबूंगा	40	5	10	12.5
9.	बाराकोटा	250	15	60	6
10.	पाटी	170	10	25	5.8
11.	चौडापिता	850	40	100	4.70

स्रोतः संबंधित गांवों का क्षेत्रीय अध्ययन

उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों से पुरूषों के लगातार बढ़ते पलायन का दुष्प्रभाव महिलाओं पर भी सर्वाधिक हुआ है। परिणामस्वरूप महिलाओं पर कार्यबोझ और अधिक बढ़ गया है। कृषिगत जटिलताओं तथा पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारियों का निर्वहन भी महिलाओं को ही करना पड़ता है। पुरूषों के पलायन के कारण सामाजिक असुरक्षा बढ़ी है तथा सामाजिक सहभागिता एवं सौहार्द्र में भी कमी आई है। कई परिवारों में महिलाऐं एवं वृद्ध माता–पिता एकांगी जीवन जीने को विवश है। ''पहाड़ों के विकास के सरकारी आयाम उत्पादकता से नहीं जुड़े हैं। पहाड़ों पर सड़कों का जाल बिछाया गया, इससे पलायन और सरल हो गया और उपभोक्ता वादी संस्कृति पहाड़ों के गाँवों तक पहुँच गई। इसका नुकसान भी महिलाओं की कठिनाईयों में वृद्धि के रूप में सामने आया है।''[5]

वर्षों से लगातार जारी पलायन को रोकना सरकारों के लिये चिन्ता का एक मुख्य बिन्दु बना हुआ है। सरकारों द्वारा इसके लिये कई घोषणाऐं की गई हैं परन्तु राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी तथा ठोस व्यावहारिक योजनाओं के अभाव में पलायन को रोकना आज भी एक प्रमुख चुनौती बना हुआ है, परिणामस्वरूप राज्य की महिलाओं के कष्टों में वृद्धि लगातार जारी है।

कृषि, पशुपालन एवं पारिवारिक दायित्वों का अत्यधिक कार्यबोझ महिलाओं पर

राज्य में कृषि, पशुपालन, चारे की व्यवस्था,पेयजल संग्रहण, ईंधन संग्रहण तथा खेतों में खाद पहुँचाने सहित पारिवारिक दायित्वों का अत्यधिक कार्यबोझ महिलाओं पर ही है। पारम्परिक रूप से भी महिलाओं एवं पुरूषों के कार्यों में भेदभाव रखा गया है। मार्गदर्शन के अभाव, व्यावहारिक युवा नीति के अभाव एवं समुचित शिक्षा के अभाव के कारण कई युवा मद्यपान, जुआ खेलने एवं अन्य बुरी प्रवृत्तियों की ओर प्रवृत्त होते हैं। आज भी उत्तराखण्ड में कई पुरूषों को गाँवों में, दुकानों पर या नुक्कड़ पर जुआ खेलते या अनावश्यक बहस करते सर्वत्र देखा जा सकता है जबकि महिलाऐं दिन–रात अति परिश्रमयुक्त कार्य करती रहती हैं। अत्यधिक कार्यबोझ के चलते महिलाओं के स्वास्थ्य पर भी विपरीत असर पड़ता है तथा महिलाऐं अपने लिये भी बिल्कुल समय नहीं निकाल पाती हैं।

पर्वतीय महिलाओं के प्रतिदिन के क्रियाकलापों का चार्ट

स.क्रं.	कार्य	समय	कार्य प्रतिशत
1.	कृषि कार्य	5 घण्टा	28 प्रतिशत
2.	पशु चारा	4 घण्टा	22 प्रतिशत
3.	घर के कार्य	4 घण्टा	25 प्रतिशत
4.	पशुपालन एवं देखरेख	2 घण्टा	11 प्रतिशत
5.	खाद की निमाण एवं खाद की ढुलाई	2 घण्टा	11 प्रतिशत
6.	ईधन लाना	1 घण्टा	6 प्रतिशत
	कुल	**18 घण्टा**	

स्रोत – क्षेत्रीय अध्ययन, संबंध संस्था, जनपद चम्पावत

अध्ययन से स्पष्ट है कि पर्वतीय क्षेत्र की महिलाओं को प्रतिदिन 16–18 घण्टे लगातार कार्यबोझ से दबे रहना होता है, जो कि राज्य में महिला सशक्तीकरण के मार्ग में एक प्रमुख चुनौती है। खेद की बात यह है कि हमारी सरकारों का भी ध्यान महिलाओं के कार्यबोझ को कम करने की ओर नहीं है। परिणामस्वरूप राज्य की महिलाओं पर कार्यबोझ लगातार बढ़ता ही जा रहा है तथा महिलाओं के कार्यबोझ को कम करने हेतु चलायी गई उत्तराखण्ड महिला समेकित विकास योजना, स्वशक्ति एवं स्वयंसिद्धा सहित अनेक योजनाऐं भी अपने उद्देश्य में समग्रता से कामयाब नहीं हो पाई है।

''सबसे बड़ा प्रहार यहाँ की जीवन निर्वाह का आधार कृषि पर हुआ है। आधुनिकीकरण ने नकद फसलों को महत्व देकर हिमालय की कृषि को हेय ठहराया है जिससे कृषक स्त्री का दर्जा और भी पीछे बड़ी तेजी से स्खलित हुआ है, नौकरी परस्त शिक्षा ने भी पर्वतीय नारी के व्यक्तित्व की वह निर्भीक, बुद्धिशाली, श्रमपूर्ण एवं परिस्थितियों से टकराने वाली साहसी छवि को कायम नहीं रखा है। नकद फसलों के प्रसार से अन्न के ऊपर जो अधिकार नारी का था, वह छिन गया है।''[6]

चिंता का एक प्रमुख विषय–महिलाओं का स्वास्थ्य

पूरे देश की ही तरह उत्तराखण्ड में भी महिलाओं को बेहतर स्वास्थ्य प्रदान करना एक प्रमुख चुनौती है। महिला एंव बाल विकास विभाग के आँकड़ों के अनुसार राज्य की 45.2 प्रतिशत महिलाऐं खून की कमी से पीड़ित है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण–II के अनुसार राज्य की केवल 54.3 प्रतिशत महिलाओं को ही उनकी सेहत पर निर्णय में सम्मिलित किया जाता है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण–II के अनुसार राज्य की केवल 36 फीसदी विवाहित महिलाऐं ही पारिवारिक मामलों में हिस्सेदारी कर पाती हैं। सितंबर 2012 में बाल विकास विभाग द्वारा किये गये सर्वेक्षण के अनुसार राज्य में 0–5 वर्ष के 7406 बच्चे अतिकुपोशित हैं। इसमें से अधिकांश बालिकाऐं हैं। अल्मोड़ा जनपद में लोक प्रबंध विकास संस्था द्वारा ताकुला विकास खण्ड के 12 गाँवों में कुपोषण की जाँच के दौरान संस्था ने पाया कि अति कुपोशित बच्चों में से 89 प्रतिशत बालिकाऐं हैं।[7]

इससे स्पष्ट होता है कि खाद्य सुरक्षा प्रभावित होने, जागरूकता के अभाव, सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वास, दूषित पेयजल एवं गंदगी तथा बाजारवाद की बढ़ती प्रवृत्ति के चलते उत्तराखण्ड में महिलाओं के स्वास्थ्य पर विपरीत असर पड़ा है। इसके लिए परिवारों में व्याप्त सामंतवादी सोच भी जिम्मेदार है। लैंगिक भेदभाव के कारण परिवारों में प्रारम्भ से ही बालिकाओं को उपेक्षित मानकर उनके स्वास्थ्य की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता है। गाँवों एंव शहरों में सरकारी स्वास्थ्य केन्द्रों में डाक्टरों के अभाव तथा देखभाल की कमी के कारण भी स्थितियाँ विकट हुई हैं। आज भी राज्य में अधिकांश महिलाओं को घर के बाहर जाकर आवश्यक स्वास्थ्य सेवाऐं खोजने ओर पाने की इजाजत नहीं होती।

अक्सर परिवारों में महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण अपनाया जाता है और जब बीमारी असाध्य हो जाती है तब अंतिम समय में ही जाकर अस्पतालों की ताकीद की जाती है। इस तरह राज्य में महिलाओं को स्वस्थ जीवन का अधिकार मिल पाना अभी भी एक महत्वपूर्ण चुनौती बना हुआ है।

वरिष्ठ पत्रकार एंव सामाजिक कार्यकर्ता डॉ.पी.एस. बिष्ट मानते हैं कि ''राज्य में सरकारी स्वास्थय सेवाओं का बुरा हाल है। ग्रामीण क्षेत्रों की तो बात ही छोड़ दें, शहरों के सरकारी अस्पतालों में भी पर्याप्त डाक्टर नहीं है। राज्य के मेडिकल कालेजों में सरकारी खर्चे पर मेडिकल की पढ़ाई करने वाले डाक्टरों को प्रदेश के दूरस्थ स्वास्थ्य केन्द्रो पर भेजने की सरकार की सारी कोशिशें नाकाम साबित हुई हैं। सरकारों की अदूरदर्शिता एंव स्वास्थ्य क्षेत्र में पर्याप्त निवेश न किये जाने के कारण प्रदेश में सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है।''[8]

लिंग विभेद एंव घटना लिंगानुात

पुत्रवती भव! जैसे आशीर्वादों वाले हमारे देश में महिलाओं के प्रति प्रारम्भ से ही विभेद सर्वत्र प्रचलित है। उनकी शिक्षा एंव पोषण पर समुचित ध्यान नहीं दिया है। परिवारों में लिये जाने वाले निर्णयों में भी महिलाओं की राय को महत्व नहीं दिया जाता है। लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को श्रेष्ठ समझने तथा लड़कों के पोषण एंव सुख–सुविधाओं का विशेष ख्याल रखने की मनोवृत्ति के चलते हमारे परिवारों में महिलाओं को दोयम दर्जे का ही नागरिक समझा जाता है। विभेदकारी लैंगिक मनोवृत्ति के कारण महिलाओं का स्वभाविक विकास भी प्रभावित होता है। राज्य गठन के पन्द्रह वर्षों बाद भी उत्तराखण्डी समाज की इस मनोवृत्ति में कोई विशेष अन्तर नहीं आया है।

वर्ष 2001 तथा 2011 की जनसंख्या के आँकड़े राज्य में घटते लिंगानुपात की पुष्टि करते हैं। यद्यपि राज्य के आठ पर्वतीय जिलों में पुरूषों से अधिक महिलाऐं हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राज्य में लिंगानुपात 963 है। 0–6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात केवल 886 है। जोकि बेहद चिंताजनक है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार 0–6 वर्ष के बच्चों का लिंगानुपात 908 था। पूर्व गर्भाधान एवं प्रसवपूर्व निदान तकनीक (PCPNDT) अधिनियम के लागू होने के बावजूद राज्य में लगातार घटना लिंगानुपात कन्या भ्रूण हत्या की पुष्टि करता है।

इस प्रकार राज्य में प्रचलित लिंग भेद एंव घटता लिंगानुपात महिला सशक्तीकरण के मार्ग में एक प्रमुख बाधा है। लिंग विभेद को समाप्त करने हेतु किये गये सरकारी एंव गैर सरकारी प्रयास अत्यंत सीमित रहे हैं। तकनीकी विकास एंव तेजी से विकास के इस युग में भी हमारे परिवारों में ऐसी मनोवृत्ति का कायम रहना अंत्यत चिंताजनक है।

मद्यपान की बढ़ती प्रवृत्ति

हमारी सरकारें भले ही जन–जन तक स्वच्छ पेयजल उपलब्ध न करा पाई हों, लेकिन गाँव–गाँव तक शराब पहुँचा पाने में अवश्य सफल रही हैं। पर्वतीय समाज में मद्यपान की बढ़ती प्रवृत्ति एक सामाजिक समस्या है, जिसका दुष्प्रभाव परिवारों में तनाव, मारपीट, पारिवारिक विखण्डन, महिलाओं के विरूद्ध हिंसा तथा अपराधों में बढोत्तरी के रूप में प्रदर्शित होता है। राज्य में शराब बिक्री के ऑकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इसकी खपत लगातार बढ़ी है। राज्य में मद्यपान की बढती प्रवृत्ति ने महिला सशक्तीकरण की प्रक्रिया पर विपरीत प्रभाव डाला है। राज्य से मद्यपान की प्रवृत्ति को समाप्त करना महिला सशक्तीकरण के मार्ग में एक प्रमुख चुनौती है।

पंचायतों में महिला आरक्षण के बावजूद पुरुष सहयोगियों द्वारा कार्य संचालन

उत्तराखण्ड में देश के कई अन्य राज्यों की तरह पंचायतों में महिलाओं को 50 फीसदी आरक्षण दिया गया है। वर्तमान में प्रदेश में हजारों महिलाऐं ग्रामीण जनप्रतिनिधि चुनी गई हैं, परन्तु विडम्बना यह है कि महिला जनप्रतिनिधियों के अधिकांश दायित्वों का संचालन उनके पुरुष सहयोगियों द्वारा ही किया जाता है। जानकार मानते हैं कि शिक्षा की कमी, समुचित प्रशिक्षण न हो पाने, पारिवारिक दायित्वों के अत्यधिक कार्यबोझ तथा महिला ग्रामीण जनप्रतिनिधियों को अपने अधिकारों का समुचित बोध न हो पाने के कारण ही इस प्रकार की स्थितियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। यद्यपि कई ग्रामीण महिला जनप्रतिनिधियों ने स्वतंत्रतापूर्वक अपने दायित्वों का निर्वहन कर बेहतरीन मिसाल पेश की है परन्तु ऐसी महिलाओं की संख्या काफी कम है।

उत्तराखण्ड में महिलाओं को अधिकार संपन्न बनाने एवं उनके न्याय एवं समतामूलक संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिये सतत् संघर्षरत संगठन 'जनवादी महिला समिति, उत्तराखण्ड' की प्रदेश सचिव एडवोकेट सुनीता पाण्डे मानती हैं कि– "महिलाओं की राजनीतिक क्षमता निर्माण सामाजिक न्याय कार्यक्रम का हिस्सा है परन्तु सरकारों का ध्यान इस ओर नहीं है। पितृसत्तात्मक मूल्यों के प्रभाव के कारण महिलाओं के स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने में कठिनाईयाँ हैं।"[9]

आर्थिक गतिविधियों में संलग्न होने के बावजूद आर्थिक स्वायत्तता नहीं

वर्ष 2016–17 में राज्य का सकल घरेलू उत्पाद बढ़कर 16282409 लाख़ रुपया तथा प्रति व्यक्ति आय 160975 रुपये[10] हो जाने के बावजूद सच्चाई यह है कि राज्य की लगभग 40 फीसदी आबादी अभी भी गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करती है। ऐसा माना जाता है कि सकल घरेलू उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति आय के आँकड़े लोगों की वास्तविक स्थिति को प्रदर्शित नहीं करते हैं। राज्य में महिलायें दिन भर खेती किसानी सहित घर के कार्यों में व्यस्त रहती हैं। पूरे दिन अत्यधिक कार्यभर के कारण उनके पास अपने करियर निर्माण के बारे में सोचने का भी समय नहीं मिलता। अधिकांश महिलाओं को परिवार के आर्थिक निर्णयों में भी सम्मिलित नहीं किया जाता है। महिलाओं के कार्यों को कमतर आँकने, अनउत्पादक समझे जाने तथा उनकी स्वाभाविक जिम्मेदारियों एवं कर्तव्य के रुप में स्वीकार किये जाने की प्रवृत्ति प्रचलित है। महिलायें पारिवारिक देखभाल के साथ–साथ कृषि, पशुपालन सहित समस्त गतिविधियों में संलग्न रहती हैं, बावजूद इसके उन्हें आर्थिक स्वायत्ता नहीं मिल पाती । आधुनिक समय में भी महिलाओं की कमाई पर भी पति का ही अधिकार रहता है। इस प्रकार राज्य में महिलाओं को आर्थिक अधिकारों एवं स्वायत्तता से वंचित रखना महिला सशक्तीकरण के मार्ग में प्रमुख चुनौती है।

पितृसत्तात्मक मूल्य एवं अभिवृत्तियाँ तथा सामाजिक सोच

पितृसत्तामक समाज प्रारंभिक काल से ही महिलाओं के प्रति भेदभाव एवं अर्थव्यवस्था, समाज, राजनीति व संस्कृति के क्षेत्र में पुरुषों के वर्चस्व और नारी की अधीनता का पक्षधर रहा है। परिवारों में लड़के और लड़कियों के मध्य गैर बराबरी, दबाव, वर्जना, उत्पीड़न और भेदभाव आज भी प्रचलित है। ''पितृसत्ता उत्पीड़न की एक संक्रामक व्यवस्था है। यह एक वायरस की तरह है जो महिलाओं के शोषण की एक ऐसी पद्वति तैयार कर देता है जो अनंत काल तक चलता रहता है।''[11]

समाज में व्यापक तौर पर पाई जाने वाली महिला असमानता का प्रारम्भ पारिवारिक संरचनाओं में विद्यमान असमानताओं से ही होता है। आज भी हमारे परिवारों में बहुत सी ऐसी परम्परायें, मान्यतायें व व्यवहार विद्यमान हैं जो महिलाओं को पारिवारिक व सामाजिक संदर्भ में दुर्बल बनाते हैं तथा उनकी स्थिति को कमतर आंकते हैं। अतः वैयक्तिक मूल्यों व विचारों को परिवर्तित किये बिना महिला समानता का प्रसार संभव नहीं है। उत्तराखण्ड में भी पितृसत्तात्मक मान्यताओं के कारण समाज में गैरबराबरी और उत्पीड़न की लम्बी श्रृंखला है जिसका सर्वाधिक कुप्रभाव महिलाओं पर ही पड़ता है। पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था व समाज में लड़के और लड़कियों के संदर्भ में प्रचलित सांस्कृतिक मूल्यों के कारण भी महिलाओं का जीवन कष्टप्रद होता गया है।

इसके अतिरिक्त उत्तराखण्ड में स्वच्छ पेयजल, शौचालय सुविधा तथा विद्युत सुविधा की उपलब्धता के आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि यहाँ पर अभी भी आधारभूत सुविधाओं की कमी है। इसका सर्वाधिक कुप्रभाव महिलाओं पर ही होता है। महिलाओं का काफी वक्त दूर–दूर से पेयजल लाने में लगता है। पर्याप्त जल संसाधन वाले प्रदेश में भी जन–जन तक स्वच्छ पेयजल पहुँचा पाने में सरकारों की विफलता के कारण महिलाओं के सशक्तीकरण की प्रक्रिया प्रभावित होती है।

प्रदेश में भौगोलिक दुरुहताओं एवं पशुओं के लिये चारे की बढ़ती समस्या ने भी महिलाओं के कष्टों में वृद्वि की है। महिलाओं को पशुओं के लिये चारा संग्रहण हेतु घर से काफी दूर–दूर जाना पड़ता है। राज्य में प्रतिवर्ष सैकड़ों महिलायें घास काटते समय चट्टानों से गिरकर असमय मौत का शिकार होती हैं। जंगली जानवरों तथा आवारा पशुओं द्वारा फसलों को नुकसान पहुँचाने से भी स्थितियाँ विकट हुई हैं तथा पलायन बढ़ा है। परम्परागत कृषि उपकरणों तथा कई स्थानों पर महिलाओं के यंत्रवत प्रयोग भी महिलाओं पर अत्यधिक कार्यबोझ हेतु उत्तरदायी हैं।

सम्भावनाऐं

राज्य के विकास की प्रक्रिया में महिलाओं का दमन करने वाली अथवा उन्हें हाशिये पर छोड़ देने वाली परम्पराओं तथा दबावों को पहचान कर उन्हें परिवर्तित करने की दिशा में उठाये गये कदमों से ही महिला सशक्तीकरण सम्भव है। इसके लिये सामाजिक मूल्यों, अभिवृत्तियों तथा सोच को परिवर्तित करने की आवश्यकता है।

गहरे सामाजिक सरोकारों के साथ राज्य में महिलाओं का संघर्ष आज भी जारी है। महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता बढ़ाने, निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी बढ़ाने तथा संगठित एवं जागरुक करने हेतु सशक्त एवं ईमानदारीपूर्ण प्रयास आज भी अपेक्षित ही हैं। राज्य में महिला सशक्तीकरण के लिये लैंगिक भेदभाव समाप्त कर प्राथमिकता देने की प्रवृत्ति अपनानी होगी। सामाजिक सोच में बदलाव तथा मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति से ही ऐसा किया जा सकेगा। उम्मीद की जानी चाहिये कि भविष्य में महिलाओं को सशक्त बनाने की प्रक्रिया और तेजी से आगे बढ़ेगी।

❐

सन्दर्भ –

1. *भारत का संविधान, चतुर्थ संस्करण 2001, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, पृ. 5, 9, 10,25, 26, 27,*
2. *सेन : गीता, जरमेन : ए.डी. तथा लिंकन चेन, 1994 ''हैल्थ एम्पावरमेंट एण्ड राइट्स", क्रैम्ब्रिज, हावर्ड विश्वविद्यालय प्रेस, में श्री लता बाटलीवाला का लेख'' मीनिंग ऑफ एम्पावरमेंटः न्यू कमेंटस् फ्राम एक्शन'' पृ. 129*
3. *पत्रांक 657/सू.अ.अधि.–2005–15/दिनांक 23 दिसंबर 2014, कार्यालय, लोक सूचना अधिकारी/खण्ड विकास अधिकारी, थौलधार, टिहरी गढ़वाल।*
4. *राधा बहन : हिमालय की महिलाऐं एवं विकास नीति – उत्तराखण्डः दृष्टि, दशा और दिशाः साप्ताहिक अलंकनंदा किनारे प्रकाशन पौढी गढवाल, पृ. 25, 26, 27,*
5. *टोडरिया : डा. एन.पी., उत्तराखण्ड में महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति–उत्तराखण्डः दृष्टि, दशा और दिशा, साप्ताहिक अलकनंदा किनारे प्रकाशन, पौढ़ी गढ़वाल, पृ. 73,74,75,*
6. *राधा बहन : हिमालय की महिलाऐं एंव विकास नीति–उत्तराखण्ड : दृष्टि, दशा और दिशा, साप्ताहिक अलकनंदा किनारे प्रकाशन, पौढ़ी गढ़वाल, पृ. 25, 26, 27*
7. *जोशी : श्री ईश्वर, 'आइये उत्तराखण्ड को कुपोषण मुक्त बनाऐं'– लोक प्रबन्ध विकास संस्था, सुनोली, अल्मोड़ा, पृ.3*
8. *बिष्ट : डॉ.पी.एस.–वरिष्ठ पत्रकार एंव सामाजिक कार्यकर्ता , अल्मोडा, साक्षात्कार दि–27–8–2021*
9. *पाण्डे : सुनीता –एडवोकेट एवं प्रदेश सचिव, जनवादी महिला, समिति उत्तराखण्ड, साक्षात्कार दि0–15–03–2022*
10. *सांख्यिकी डायरी, उत्तराखण्ड, वर्ष 2016–17 अर्थ एवं संख्या निदेशालय, नियोजन विभाग उत्तराखण्ड,देहरादून, पृ. 37*
11. *स्वांई : ज्ञान रंजन, विस्वाल : तपन, मानवाधिकार,जेंडर एवं पर्यावरण, पितृसत्तात्मक व्यवस्थाः एक विश्लेषण, वाइवा बुक्स प्रा. लि., नई दिल्ली, पृ. 212*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 64–70

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

डॉ. भीमराव अम्बेडकर की महिलाओं के प्रति अन्तर्दृष्टि
सामाजिक–धार्मिक सुधार के संदर्भ में एक अध्ययन

माधवी धुर्वे
शोधार्थी, महात्मा गांधी अतंर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)
E-mail : madhavi0712dhurve@gmail-com Mob. 9527983753

प्रेमकुमार नाईक
शोधार्थी, महात्मा गांधी अतंर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)
E-mail : premkumar-naik-2022@gmail-com Mob. 9021331541

सारांश

सदियों से महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आयामों पर शोषण, अन्याय, अत्याचार आदि का शिकार होती आईं थी। जिसका सबसे बड़ा सामाजिक बदलाव यह हुआ कि ये महिलाएँ अपने आप को पुरुषवादी समाज के आगे स्वयं को दासी मान बैठी थीं। हालाँकि महिलाओं की इस भूमिका को सामाजिक सुधारकों द्वारा उन्नीसवीं शताब्दी में नाकारा गया और उनके सामाजिक–धार्मिक अधिकार को वापस दिलाया गया। लेकिन अभी भी उन सभी महिलाओं को संवैधानिक अधिकार की प्राप्ति नहीं हो पायी थी, जिसे दिलाने के लिए डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कड़ा संघर्ष किया और संविधान सभा में मजबूती से अपने पक्ष रखते हुए महिलाओं को स्वतंत्रता, समानता, सम्पति अधिकार, उत्तराधिकार, बाल विवाह निषेध, तलाक, विधवा विवाह, अवकाश आदि जैसे अनेक संवैधानिक अधिकार दिलाये। वर्णात्मक प्रकार के इस शोध–पत्र में डॉ. अम्बेडकर महोदय के महिला सुधार केन्द्रित सामाजिक–धार्मिक सुधार की अंतर्दृष्टि का गहन अध्ययन किया गया है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन किये गए इस शोध–पत्र के लिए प्राथमिक स्रोत के रूप में अभिलेखि, दस्तावेजों तथा द्वितीयक स्रोत के रूप में सम्बन्धित साहित्य का सहारा लिया गया है।

मुख्य शब्द– डॉ. भीमराव अम्बेडकर, सामाजिक सुधार, धार्मिक सुधार, नारी स्वतंत्रता–समानता, संवैधानिक अधिकार, हिन्दू कोड़ बिल.

प्रस्तावना

यह सार भौमिक सत्य है कि महिलाएं समाज की अभिन्न अंग होती है, क्योंकि सामाजिक संरचना में एक महिला का जो स्थान है, उसकी जो समपर्ण की भावना है, वह एक पुरुष कभी नहीं ले सकता। फिर भी असमानता सिद्धांत पर आधारित कार्य विभाजन व सामाजिक वर्गीकरण

में एक महिला की जो स्थिति है वह किसी भी काल में सामाजिक अन्याय तथा पीड़ादायक ही रही है। भारतीय परिपेक्ष्य में प्राचीन काल, मध्यकाल और औपनिवेशिक काल में भी यही स्थिति रही थी, हालाँकि उन्नीसवीं शताब्दी में सामाजिक सुधारकों ने इस ओर ध्यान दिया और महिला अधिकार के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण का सूत्रपात करते हुए अनेक आंदोलनों तथा कठिन प्रयासों, संघर्षों से लोगों को महिलाओं के प्रति ओछी मानसिकता को बदलने के लिए बाध्य भी किया, जो अपने आप में एक नई सामाजिक क्रांति थी। जिसका तात्कालिक परिणाम यह हुआ कि महिला आन्दोलनों तथा आजादी की लड़ाई में अनेक महिलाओं की भूमिका साफ दिखाई पड़ती है।

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक पांच दशकों, आजादी की लड़ाई तथा संविधान निर्माण में डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर (1891–1956) भी आधुनिक नारीवादी समाज सुधारकों की श्रेणी में दिखाई पड़ते हैं। महिलाओं के प्रति उनकी दृष्टिकोण, विचार व कार्यों ने महिलाओं के जीवन में एक नवीन स्फूर्ति पैदा कर डाली। प्रगति का मुख्य आधार ही महिलाओं को मानने वाले डॉ. अम्बेडकर ने सवेतन प्रसूति लाभ, काम के निश्चित घंटे, नारी शिक्षा, समानता, स्वतंत्रता तथा उनकी सामाजिक–धार्मिक, आर्थिक सशक्तिकरण पर बल देते हुए संविधान में उनकों संरक्षण भी दिया।

ब्रिटिश भारत में महिलाओं की स्थिति

भारत में कमजोर मुगल प्रशासक और हाशिए पर लटकी भारत की सामाजिक परिस्थितियों का लाभ उठाते हुए ब्रिटिश क्राउन सरकार ने एकछत्र शासन करना आरंभ किया और साथ ही में भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक स्थितियों की कटु आलोचना भी की। खासकर कभी भारत की धरती पर कदम न रखने वाले ब्रिटिश प्रशासक जेम्स मिल ने अपनी पुस्तक 'द हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया (1817)' में भारतीय महिलाओं की दीन–हीन स्थिति व समाज में व्याप्त असमानता, अशिक्षा को ही अपना मुख्य मुद्दा बनाया।[1] हालाँकि जेम्स मिल की ही तरह लिखने वाले अन्य साम्राज्यवादी इतिहासकारों की आलोचना का जवाब भारतीय सामाजिक सुधारकों ने उसी दशकों में देना आरंभ कर किया और सामाजिक कुप्रथाओं के खिलाफ आवाज बुलंद करने के लिए आगे आने लगे। जिसमें राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद विद्यासागर, पंडित विष्णुशास्त्री, रानाडे, ज्योतिबा फूले, सावित्री फूले, डी.के. कर्वे, वीरेशलिंगम, केशवचंद सेन, बी.एम. मलावारी, डॉ. हरविलास शारदा, आदि कई अग्रणी समाज सुधारक शामिल थे। फिर भी ऐसी कई खामियां रह गयी, जिसे तात्कालिक भारतीय समाज सुधारकों ने दूर नहीं किया, जो आजादी के बाद संवैधानिक सुधारों के फलस्वरूप ही संभव हो पाया। बल्कि बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में इन सुधारों की ओर बाबा साहेब ने अपनी पैनी नजर दौड़ायी और उसे सदा के लिया मुक्त करने के लिए संवैधानिक प्रयास में लग गये।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर को हम जितने राजनीतिक और कानूनी विचारकों के रूप में जानते है, उतना ही हम उन्हें सामाजिक सुधारक के रूप में भी जानते है। बाबा साहेब अकेले ऐसी महान सामाजिक–धार्मिक सुधारक थे, जिन्होंने स्वतंत्रता से पहले और स्वतंत्रता पश्चात

तक महिलाओं के अधिकारों के लिए कानूनी लड़ाई लड़ते रहें। कुल मिलाकर वे अपनी महापरिनिर्वाण के दिन तक महिला शोषण के खिलाफ आवाज बुलंद करते रहे। अक्सर हम बाबा साहेब को केवल दलित चिंतक बताकर उनका सामान्यीकरण कर देते है, लेकिन उनके द्वारा महिलाओं के शोषण के खिलाफ उठाये आवाज हमें यह बताता है कि वे समूची जाति के महिला सशक्तिकरण के कितने बड़े पक्षधर रहे थे। उन्होंने सिर्फ संविधान के माध्यम से ही महिलाओं को वैधानिक अधिकार प्रदान नहीं किये थे, बल्कि सामाजिक दृष्टी से आंदोलनों व सभाओं के माध्यम से उनमें जागृती भी लाये थे।

सामाजिक सुधार

भारतीय समाज में महिलाओं के शोषण के प्रति कटु आलोचना करते हुए बाबा साहेब सामाजिक क्रांति की बात करते हुए प्रश्न उठाये थे कि 'विश्व के अनेक देशों में सामाजिक क्रांतियाँ होती रही है। भारत में सामाजिक क्रांति क्यों नहीं हुई, यह एक ऐसा प्रश्न है जो मुझे सदैव कष्ट देता है।[2] आगे इस मुद्दे पर बल देते हुए वे कहते हैं कि 'भारत में सामाजिक सुधार का कार्य स्वर्ग के मार्ग के सामान है और इस कार्य में अनेक कठिनाइयाँ है। भारत में समाज सुधार कार्य में मित्र कम और आलोचक ज्यादा है। एक समय था जब यह माना जाता था कि सामाजिक कुशलता के बिना अन्य कार्य क्षेत्रों में प्रगति असंभव है, लेकिन कुप्रथाओं के कारण हिन्दू समाज की कार्यकुशलता ही समाप्त हो चुकी है। वर्तमान समय में हमें इन बुराइयों को उखाड़ फेंकने के लिए अथक प्रयास करने होंगे।'[3] अपने वकतव्य को आगे बढ़ाते हुए बाबा साहेब हिन्दू चातुर्वर्ण्य व्यवस्था पर चोट करते हुए कहते हैं कि 'यदि चातुर्वर्ण्य अनिवार्य है तो इसे महिलाओं पर भी लागू करना होगा। उन्हें महिला पुरोहित तथा महिला सैनिक रखने के लिए तैयार रहना होगा। वहीं उन्हें शिक्षक और बैरिस्टर बनने के मौके देने होंगे और प्रत्येक उस कार्य को करने की अनुमति देनी होगी जो पुरुष समाज करता है।'[4] आगे वे चिंता व्यक्त करते हुए कहते हैं कि 'मेरी राय में इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब तक आप अपनी सामाजिक व्यवस्था नहीं बदलेंगे तब तक कोई प्रगति नहीं होगी।'[5]

डॉ. भीमराव अम्बेडकर इस सामाजिक असामनता को समाप्त करने के लिए पुरजोर कोशिश की और यह कहा कि 'प्रत्येक स्त्री को पुरुष के समान अवसर मिलने चाहिए। सभी के विकास से देश व जाति का विकास संभव है।' डॉ. अम्बेडकर की यह धारणा थी कि समाज में रहने वाले सभी नागरिक सामान है और अधिकारों, कर्तव्यों व सुविधाओं के अधिकारी है। उन सभी चीजों पर कोई प्रतिबन्ध न हो जिससे मानव व्यक्तित्व का उत्थान हो, उसकी गरिमा बढे और वह मान–सम्मान से सुशोभित हो।[6] तभी तो डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने महिलाओं के शोषण को जड़ से समाप्त करने के लिए और इस सामाजिक असमानता से बचाने के लिए भारतीय संविधान द्वारा स्त्रियों को संवैधानिक समानता प्रदान की और किसी भी प्रकार के लिंग के आधार पर भेदभाव की मनाही की तथा भारतीय संविधान में अनुच्छेद 19 से 22 के अंतर्गत इस मानवाधिकार व स्वतंत्रता को दर्ज किया।

महिला शिक्षा व वेश्यावृत्ति

महिलाओं को समाज का एक महत्वपूर्ण अंग मानने वाले बाबासाहेब डॉ. भीमराव

अम्बेडकर भी महिला शिक्षा के प्रबल समर्थकों में से एक थे। डॉ. भीमराव अम्बेडकर भी अन्य समाज सुधारकों की तरह महिला शिक्षा पर बल देते हुए कहा करते थे कि 'बलों में सबसे बलिष्ठ शिक्षा है, जो समानता, स्वतंत्रता व भाईचारे का पाठ पढ़ाती है एवं आत्म सम्मान व स्वालम्बन जैसे गुणों का विकास करती है।'[7] बाबासाहेब के जीवन चरित्र को नये ढ़ंग से विश्लेषण करने वाले धनंजय कीर लिखते हैं कि 'बाबासाहेब भारतीय समाज के पतन और अवनति का एक मुख्य कारण अशिक्षा को ही मानते थे। वे महिलाओं को पुरुषों के समान ही अनिवार्य रूप से शिक्षा ग्रहण करने की बात करते थे। उनका मत था कि ज्ञान और विद्या केवल पुरुषों के लिए ही नहीं है, वह महिलाओं के लिए भी अति आवश्यक है। अतः महिलाओं के लिए शिक्षा का प्रबन्ध अनिवार्य रूप से होना चाहिए।'[8]

महिला शिक्षा के साथ–साथ बाबासाहेब महिला संगठनों पर भी विश्वास करते थे, क्योंकि उनका मानना था कि शिक्षित महिला संगठित होकर स्वयं ही अपने सुधार कार्य करेंगी। कुल मिलाकर बाबासाहेब के महिला शिक्षा पर डाला गया यह दृष्टिकोण भारत के महात्मा बुद्ध, कबीर, फूले, अफ्रीकी–अमेरिकी मूल के प्रसिद्ध शिक्षाविद् बुकर टी. वाशिंगटन तथा कोलंबिया के प्रोफेसर जॉन डीवी से प्रभावित था। क्योंकि कोलंबिया के प्रोफेसर जॉन डीवी का यह विचार था कि *'शिक्षा केवल संसार को जानने का ही माध्यम नहीं वरन् समाज को बदलने का भी एक सशक्त उपकरण है।"*[9] मूकनायक और बहिष्कृत भारत के अनुवादक श्यौराज सिंह बेचौन यह लिखते है कि 'मद्य निषेध कानून से भी ज्यादा अनिवार्य शिक्षा पर जोर देने वाले बाबा साहेब प्राथमिक शिक्षा के लिए बालक–बालिकाओं में भेद न करके जितना जल्द हो सके इनके लिए अनिवार्य एवं मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था पर करने पर जोर डालते थे। क्योंकि वे मानते थे कि महिलाओं को अपनी स्वतंत्रता व अधिकार हांसिल करने के लिए सुशिक्षित होना अत्यंत आवश्यक है।'[10] कुल मिलाकर यह बाबासाहेब का ही कठिन परिश्रम व शिक्षा के लिए आधुनिक महिलाओं को जो मूलमंत्र दिया यह उसी का परिणाम है कि 2011 की जनगणना में महिला शिक्षा का कुल प्रतिशत 1951 के 8.86 प्रतिशत से बढ़कर 64.46 प्रतिशत तक पहुँच गया है, जो यह प्रतिशत आगे और भी बढ़ने की राहों पर अग्रसर है।

जहाँ एक तरफ डॉ. भीमराव अम्बेडकर शिक्षा को शेरनी के दूध के सामान तथा महिला शिक्षा को अनिवार्य मानते थे, महिलाओं को समाज की मुख्य धारा में लाने के लिए कुछ भी करने को तत्पर थे। तो वहीं दूसरी तरफ, समाज में व्याप्त वेश्यावृत्ति से घोर चिंतित भी थे। समाज के लिए इस वेश्यावृत्ति को कलंक मानाने वाले डॉ. भीमराव अम्बेडकर इसे समाज की बहुत बड़ी समस्या मानते हुए यह टिप्पणी किये कि 'यदि आप हम सबके साथ रहना चाहती है तो आप अपनी जीवन पद्धति को बदलें। आप विवाह कर समाज कि अन्य महिलाओं की भांति सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करें। वेश्यावृत्ति के घृणास्पद जीवन के अलावा आजीविका कमाने के समाज में अनेकों साधन है। जब तक आप वेश्यावृत्ति के घृणास्पद जीवन का परित्याग नहीं करती तब तक समाज में आपकों उचित सम्मान प्राप्त नहीं हो सकेगा।'[11] डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने वेश्यावृत्ति के व्यवसाय में लगी महिलाओं के आजीविका से सम्बंधित संविधान में कई प्रावधान भी डालें, जैसे– अनुच्छेद 19 (6) में राज्य द्वारा महिलाओं को आजीविका के स्वतंत्र साधन चुनने का अवसर तो देता है, पर अनुच्छेद 23 स्त्रियों को अनैतिक कार्यों और इसी प्रकार

के अन्य प्रयोजनों हेतु उनके क्रय–विक्रय को दण्डनीय अपराध भी घोषित करता है।[12] बाद में इसी अनुच्छेद को आगे बढ़ाते हुए एक नारी को वेश्यावृत्ति के दलदल से निकालने के लिए 1986 में भारतीय संसद ने 'स्त्री तथा लड़की अनैतिक व्यापार दमन अधिनियम' संसोधित कर पारित किया, जिसे डॉ. अम्बेडकर महिलाओं के लिए इसे एक बड़ा दलदल मानते थे।

स्वस्थ जीवन और जन्म नियंत्रण

डॉ. भीमराव अम्बेडकर महिलाओं के स्वस्थ जीवन में आने वाली सबसे बड़ी समस्या से निबटने के लिए जन्म नियंत्रण को लागु करने के पक्ष में विश्वास रखते थे। वे निरंतर बढ़ रहे जनसंख्या पर नियंत्रण करने के लिए भी इसे समाधान के रूप में देखते थे। साथ ही वे लड़कियों के वैवाहिक आयु में वृद्धि पर भी जोर देते थे, वे कहा करते थे कि 'वैवाहिक आयु में वृद्धि के साथ ही वैवाहिक प्रजनन में भी वृद्धि होगी। वैसे भी हमारी आबादी बहुत अधिक है और इसे उच्चदर पर बढ़ाने का प्रयास आत्मघाती होगा। लड़कियों के विवाह की उम्र बढ़ाने के प्रयास के साथ ही हमें जन्म नियंत्रण का भी एक व्यापक अभियान चलाना होगा।'[13] इस प्रकार डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने जन्म नियंत्रण व लड़कियों की विवाह आयु में वृद्धि को महिला हित व देशहित के लिए अनिवार्य समझा और इसे जल्द से जल्द समाज को अपनाने पर जोर दिया।

हिन्दू कोड बिल

महिला सुधार व सशक्तिकरण हेतु डॉ. भीमराव अम्बेडकर का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष हिन्दू कोड़ बिल (1956) से सम्बंधित है। इस बिल के द्वारा डॉ. अम्बेडकर ने महिला शोषण, महिला दुर्गति, व्यापकता, पर्दा प्रथा आदि को तोड़ने का प्रयास किया तथा उनकी स्वतंत्रता व समानता का अधिकार से भी परिचय कराया। डॉ. भीमराव अम्बेडकर का विचार था कि 'स्वतंत्र भारत में स्त्री को भी पुरुषों की भांति समान अधिकार प्राप्त होने चाहिए, हिन्दू कोड़ बिल उसी दिशा में ही किया गया एक प्रयास है।'[14] इस बिल को तैयार करते समय डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि *'मुझे भारत का संविधान बनाने में इतनी प्रसन्नता नहीं हुई जीतनी हिन्दू कोड़ बिल को पास कराने पर होगी क्योंकि इससे समूचा समाज लाभान्वित होगा और स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार भी मिल जायेंगे।'*[15] हालाँकि संविधान बनने की प्रक्रिया में यह बिल रुढ़िवादी ताकतों के विरोध स्वरूप शोरगुल के आगे फिंका पड़ गया और बाबा साहेब को इसे तत्काल प्रभाव से वापस लेना पड़ा। लेकिन 1955–56 में इस बिल के महत्व को संसद ने स्वीकार कर बिल को चार अलग–अलग भागों में विभाजित कर, एक अधिनियम बनाकर पास कर दिया। ये चार भाग इस प्रकार विभाजित किये गये (क) हिन्दू विवाह अधिनियमय (ख) हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियमय (ग) हिन्दू अल्पसंख्यक और गार्जियन कानून अधिनियम और (घ) हिन्दू गोद व भरण पोषण अधिनियम कानून आदि।

धार्मिक सुधार

धार्मिक सुधार, स्वतंत्रता डॉ. भीमराव अम्बेडकर की अंतर्दृष्टि में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता था। धार्मिक सुधार को वे धर्म (खास कर हिन्दू धर्म) से जोड़कर देखते थे। बाबा साहेब के अनुसार वास्तविक धर्म वही है, जो समाज में मानव और मानव के बीच मधुर प्रेम व सहयोग

के स्वाभाविक संबंधों को स्थापित करे, ऐसे धर्म ही समाज को मानवतावादी बना सकता है। समाज को धर्म की आवश्यकता रहती है क्योंकि धर्म मानव कल्याण के लिए प्रयास करता है तथा प्रत्येक मानव को उसके सामाजिक उत्तरदायित्व का बोध कराता है।'[16] बाबा साहेब धार्मिक अनाचार के लिए हिन्दू धर्म पर चोट करते हुए मनुस्मृति के लेखक मनु को जिम्मेवार माना तथा इस हिसाब से असमानता को हिदू की आत्मा माना। खासकर मनु पर महिलाओं के धार्मिक अधिकारों को छीने जाने पर प्रश्न चिन्ह् भी लगाये। वे कहते थे कि मनुस्मृति हिन्दुओं के सामाजिक–धार्मिक कार्यों की एक ऐसी विधि संहिता है, जिसका पालन करने से नारी के धार्मिक अधिकार रसातल में चले गये। धार्मिक अनुष्ठानों व देवदासी के नाम पर उनके साथ यौनाचार, अशुद्धि के नाम पर मंदिरों से बहिष्कार आदि का कार्य किया गया।

डॉ. अम्बेडकर इतने से ही नहीं रुकें। उन्होने महिलाओं के धार्मिक अधिकारों के लिए उनका खुलकर समर्थन भी किया और कुप्रथाओं पर तर्क करते हुए धार्मिक क्रांति की उपियोगिता पर जोर दिये। हिन्दू धर्म के परीक्षण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने न्याय के सिद्धांत का समर्थन कर यह कहा कि 'न्याय का सिद्धांत एक सारभूत सिद्धांत है और इसमें उन सभी सिद्धांतों का समावेश है जो नैतिक व्यवस्था का आधार बने है। न्याय के सिद्धांत ने सदैव से ही समानता व क्षतिपूर्ति के सिद्धांत को प्रतिपादित किया है। निष्पक्षता से समानता उभरी है यदि सभी मनुष्य सामान है तो ये समान तत्व उन्हें समान मौलिक अधिकार तथा एक समान स्वतंत्रता के योग्य बनाते है। न्याय का दूसरा सरल नाम स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व भाव है।'[17] तभी तो संविधान में इन्होंने अनुच्छेद 25 से 28 तक धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार का विवेचन प्रस्तुत किया और स्वयं अपने अंतिम जीवन वर्ष में हिन्दू को ठुकरा कर बौद्ध धर्म धारण कर लिये।

निष्कर्ष

निष्कर्ष तौर पर यह कहा जा सकता है कि डॉ. भीमराव अम्बेडकर की महिला सुधार अंतर्दृष्टि भारत में सामाजिक–धार्मिक सुधार में ही निहित थी, क्योंकि भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक–धार्मिक व्यवस्था से सबसे ज्यादा नुकसान, शोषण, अपमान आदि महिलाओं को उठाना पड़ा। सामाजिक–धार्मिक सुधार से सम्बंधित ग्रंथों व उन्नीसवीं में लगातार किये गए सुधार को देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि महिलाओं के साथ रुढ़िवादी समाज किस प्रकार का नजरिया रखता था। डॉ. अम्बेडकर ने इस सामाजिक–धार्मिक सुधार को जारी रखते हुए इस सुधार में महिलाओं को केन्द्र में रख, इसमें और भी कई बदलाव किये और उन्हें समनाता व स्वतंत्रता का संवैधानिक अधिकार दिलाकर इस अव्यवस्था को जड़ से समाप्त करने की परिकल्पना की। महिला सुधार के प्रति डॉ. अम्बेडकर की यह गहरी अंतर्दृष्टि ही थी कि मौलिक अधिकार में उन्होंने ऐसे कई प्रावधान को जोड़ा, जो आज वर्तमान समाज में काफी प्रासंगिक प्रतीत हो रहा है। इस प्रयास में हिन्दू कोड़ बिल एक ऐसा आवश्यक कदम है, जो महिलाओं को उनके पैतृक अधिकार से जोड़े रखा है तथा उनकों अपने अधिकार के लिए पुरुषों से लड़ना भी सिखाया है। यह डॉ. अम्बेडकर की ही देन है कि आज भी ऐसी कई महिलाएं हैं जो अपने हक के लिए पुरुषवादी मानसिकता को न्यायलय में चुनौती दे रहीं हैं और अपने सारे अधिकार को पुरुषों से प्राप्त भी कर रही हैं।

❐

सन्दर्भ –

1. *शेखर बंद्योपाध्याय. प्लासी से विभाजन तक (आधुनिक भारत का इतिहास), ओरियंट ब्लैक स्वांन, दिल्ली, 2009, पृ. 415*
2. *बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर. सम्पूर्ण वाड्मय खण्ड–1, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1993, पृ. 08*
3. *वही, पृ. 55*
4. *वही, पृ. 83*
5. *वही, पृ. 89*
6. *प्रति पाण्डे. डॉ. अम्बेडकर और पं. दीनदयाल, ए.बी.डी. पब्लिशर्स, जयपुर, 2006, पृ. 69*
7. *एस.एस. शशि. अम्बेडकर एण्ड सोशल जस्टिस, भाग–2, डाइरेक्टर पब्लिकेशन डिविजन, एम.ओ.आई.बी. भारतसरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली, 1992. पृ.180*
8. *धनंजय कीर. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पाप्यूलर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996, पृ. 390*
9. *प्रति पाण्डे, पूर्वोक्त, पृ. 258*
10. *डॉ. अम्बेडकर. बहिष्कृत भारत (अनुवाद– श्यौराज सिंह बेचौन), गौतम बुक सेंटर, 2008, पृ. 94–95*
11. *डॉ. रामगोपाल सिंह. डॉ. अम्बेडकर का विचार दर्शन, मध्य प्रदेश हिन्दू ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2002, पृ. 148*
12. *डॉ. जयनारायण पाण्डेय. भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, 2011, पृ. 298*
13. *बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाड्मय खण्ड–3, पूर्वोक्त, पृ. 302–303*
14. *डॉ. रामगोपाल सिंह. डॉ. अम्बेडकर का विचार दर्शन, मध्य प्रदेश हिन्दू ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2002, पृ. 242*
15. *डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर, राइटिंग एण्ड स्पीसेज, खण्ड–17, भाग–1, पृ. 768*
16. *प्रति पाण्डे. पूर्वोक्त, पृ. 72*
17. *बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाड्मय खण्ड–6, पूर्वोक्त, पृ. 43*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 71–77

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

महिला अधिकारों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. अमित कुमार जोशी

संविदा शिक्षक, राजनीति शास्त्र विभाग, लक्ष्मण सिंह महर राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पिथौरागढ़, जनपद–पिथौरागढ (उत्तराखण्ड)

E-mail : joshiamitkumarpth@gmail.com Mob. 7060025221

सारांश

पितृसत्तात्मक व्यवस्था सदियों तक महिलाओं के विकास एवं ज्ञान अर्जित करने के मार्ग में एक बड़ी रूकावट रही है। आधुनिक समय में आजादी के आंदोलन में महिलाओं ने अपनी नेतृत्व क्षमता का उल्लेखनीय प्रदर्शन किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात संविधान द्वारा सृजित समानता का अधिकार गैर बराबरी एवं असमानता के खिलाफ एक महत्वपूर्ण सार्थक पहल माना जा सकता है। उसके बाद भी महिलाओं को अपने बुनियादी अधिकारों के लिए लगातार संघर्ष करना पड़ा, जिसके परिणामस्वरूप समान कार्य के लिए समान वेतन एवं मातृत्व तथा प्रसूति अवकाश अधिनियम सरीखे कई महत्वपूर्ण अधिनियम पारित करने के लिए सरकारों को बाध्य होना पड़ा। महिलाओं की लंबे समय से चली आ रही मांग को स्वीकार करते हुए भारतीय संसद ने 73वां एवं 74वां संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया, जिसके परिणामस्वरूप स्थानीय निकायों एवं पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अधिकार हासिल हुआ। भारतवर्ष में आज भी महिलाएं संसदीय राजनीति में आनुपातिक प्रतिनिधित्व पाने के लिए लगातार संघर्ष कर रही हैं और इसमें अभी भी उनको सफलता नहीं मिल पाई है। प्रस्तुत शोध पत्र में महिलाओं को प्राप्त अधिकारों के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य तथा उनके संघर्षों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

मानव सभ्यता का इतिहास महिलाओं के अनथक संघर्षों का इतिहास रहा है। इस विकास यात्रा में महिलाओं ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कई सार्थक मुकाम हासिल किए हैं, उसके बावजूद महिलाएं सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं धार्मिक आदि क्षेत्रों में भेदभाव एवं असमानता की शिकार बनी हुई हैं। वैश्विक स्तर पर दुनिया के विभिन्न देशों में महिलाएं आज

भी इस गैर बराबरी एवं असमानता के खिलाफ आवाज उठा रही हैं जिसकी अभिव्यक्ति समय–समय पर उनके द्वारा की जाने वाली विरोध कार्यवाहियों के रूप में प्रदर्शित हो रही है।

भारतीय संदर्भों में स्थितियां लगातार परिवर्तित हो रही हैं। पितृसत्तात्मक व्यवस्था सदियों तक महिलाओं के विकास एवं ज्ञान अर्जित करने के मार्ग में एक बड़ी रूकावट रही है। आधुनिक समय में आजादी के आंदोलन में महिलाओं ने अपनी नेतृत्व क्षमता का उल्लेखनीय प्रदर्शन किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात संविधान द्वारा सृजित समानता का अधिकार गैर बराबरी एवं असमानता के खिलाफ एक महत्वपूर्ण सार्थक पहल माना जा सकता है। उसके बाद भी महिलाओं को अपने बुनियादी अधिकारों के लिए लगातार संघर्ष करना पड़ा, जिसके परिणामस्वरूप समान कार्य के लिए समान वेतन एवं मातृत्व तथा प्रसूति अवकाश अधिनियम सरीखे कई महत्वपूर्ण अधिनियम पारित करने के लिए सरकारों को बाध्य होना पड़ा। महिलाओं की लंबे समय से चली आ रही मांग को स्वीकार करते हुए भारतीय संसद ने 73वां एवं 74वां संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया, जिसके परिणामस्वरूप स्थानीय निकायों एवं पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अधिकार हासिल हुआ। भारतवर्ष में आज भी महिलाएं संसदीय राजनीति में आनुपातिक प्रतिनिधित्व पाने के लिए लगातार संघर्ष कर रही हैं और इसमें अभी भी उनको सफलता नहीं मिल पाई है।

महिला आंदोलन का विकास

वैश्विक स्तर पर महिला आंदोलन का विकास जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अधिकारों की मांग के रूप में दिखाई देता है, जिसके शुरूआती रुझान फ्रांसीसी क्रांति (1789) के आसपास दिखाई देते हैं। फ्रांसीसी क्रांति के सूत्र वाक्य **"स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व"** ने गैर बराबरी एवं असमानता के खिलाफ माहौल का निर्माण करने में सार्थक पहल की। फ्रांसीसी महिला अधिकार कार्यकर्ता **ओलम्प दे गूज** को महिला अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाली प्रथम महिला के रूप में याद किया जाता है, जिन्होंने तत्कालीन शोषणकारी परिस्थितियों के अनुरूप महिलाओं के मुद्दों की पहचान करते हुए राजसत्ता से उन मुद्दों पर सकारात्मक निर्णय का आग्रह किया जिसकी परिणति उन्हें अपनी जान देकर चुकानी पड़ी। सर्वप्रथम 1791 में महिला एवं नागरिक घोषणापत्र तैयार किया गया, इस घोषणापत्र के मुख्य बिंदु थे–[1]

1. औरत जन्मना स्वतंत्र है और अधिकारों में पुरुषों के समान है।

2. सभी राजनीतिक संगठनों का लक्ष्य पुरुष एवं महिला के नैसर्गिक अधिकारों को संरक्षित करना है। ये अधिकार हैं–स्वतंत्रता, संपत्ति, सुरक्षा और सबसे बढ़कर शोषण के प्रतिरोध का अधिकार।

3. समग्र संप्रभुता का स्रोत राष्ट्र में निहित है जो पुरुषों एवं महिलाओं के संघ के सिवाय कुछ नहीं है।

4. कानून सामान्य इच्छा की अभिव्यक्ति होनी चाहिए। सभी महिला एवं पुरुष नागरिकों का या तो व्यक्तिगत रूप से या अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से विधि निर्माण में दख़ल होना चाहिए। यह सभी के लिए समान होना चाहिए। सभी महिला एवं पुरुष नागरिक अपनी योग्यता एवं प्रतिभा के बल पर समान रूप से एवं बिना किसी भेदभाव के हर तरह के सम्मान व सार्वजनिक पद के हकदार हैं।

5. कोई भी महिला अपवाद नहीं है। वह विधिसम्मत प्रक्रिया द्वारा अपराधी ठहरायी जा सकती है, गिरफ्तार और नजरबंद की जा सकती है। पुरुषों की तरह महिलाएं भी इस कठोर कानून का पालन करें।

ओलम्प दे गूज ने महिलाओं के अधिकारों का वैकल्पिक घोषणा पत्र जारी करते हुए कहा था कि "महिलाएं स्वतंत्र रूप से जन्मी हैं और उनके अधिकार पुरुष अधिकारों के समान हैं। कानून सामान्य इच्छा की अभिव्यक्ति होना चाहिए, सभी नागरिकों, पुरुष हों या स्त्री, की इसे बनाने में हिस्सेदारी होनी चाहिए। महिलाओं को फांसी के तख्ते पर जाने का अधिकार है, उसे संसद में भी जाने का अधिकार होना चाहिए।"[2] इसके साथ–साथ इसी कालखंड में एवं इसके बाद विश्व के विभिन्न देशों में महिलाएं अपने बुनियादी अधिकारों के लिए आवाज उठाने लगीं और अपने संघर्षों के परिणामस्वरूप बहुत सारे अधिकारों को हासिल करने में कामयाब भी रहीं।

अमेरिकी संदर्भों में 1776 की **"स्वतंत्रता की अमेरिकी घोषणा"** द्वारा मानवीय समानता के प्रयास किए गए। अमेरिकी जनता को **"बिल ऑफ राइट्स 1789"** द्वारा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रेस की आजादी, धार्मिक स्वतंत्रता, न्यायिक अधिकार आदि प्राप्त हुए। "बिल ऑफ राइट्स 1789" के पारित होने के बावजूद दास प्रथा के पूर्ण रूप से उन्मूलन में भी एक लंबा समय लग गया, जबकि 1776 में स्वतंत्रता की घोषणा के बाद से महिलाओं को मत देने का अधिकार 26 अगस्त 1920 को पारित **"महिला मताधिकार संशोधन (19 वां संशोधन) एंथोनी अमेंडमेंट)"** के द्वारा प्राप्त हुआ।

इस संदर्भ में कैरे चैपमैन लिखते हैं कि "मत का अधिकार पाने के लिए महिला आंदोलन को 52 साल के अविराम अभियान, पुरूष वोटर्स के जनमत संग्रह के लिए 56 अभियान, मताधिकार संशोधन पर वोटिंग कराने के लिए विधानसभाओं पर दबाव डालने के लिए 480 अभियान, महिला मताधिकार को राज्य के संविधान में लिखने के लिए राज्य के संवैधानिक कन्वेंशनों को राजी करने के लिए 47 अभियान, राज्य पार्टी की कन्वेंशनों में महिला अधिकारों के सवाल को शामिल करवाने के लिए 277 अभियान, अध्यक्षयीय पार्टी कन्वेंशनों को पार्टी के मंचों पर महिला मताधिकार के सवाल को स्वीकारने के लिए राजी करने के लिए 30 अभियान और 19 लगातार कांग्रेसों में 19 अभियान करने पड़े।"[3]

वैश्विक स्तर पर महिलाओं को मत देने का अधिकार पुरुषों के मुकाबले काफी देरी से मिला। 1900 ई. से पूर्व केवल न्यूजीलैंड में महिलाओं को मत देने का अधिकार था, जबकि कुछ देशों में प्रथम विश्व युद्ध के बाद एवं अधिकांश देशों में द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात महिलाओं को मताधिकार प्राप्त हुआ। स्विट्जरलैंड, स्पेन एवं पुर्तगाल जैसे यूरोपीय देशों में महिलाओं को मत देने का अधिकार हासिल करने के लिए 1970 के दशक तक इंतजार करना पड़ा।[4] कुवैत जैसे कट्टर रूढ़िवादी देशों में महिलाओं को मत देने एवं चुनाव लड़ने का अधिकार 2005 में जाकर मिला।

महिलाओं के मुद्दों की सही समझ

वैश्विक स्तर पर महिलाएं आज भी दमन, उत्पीड़न, भेदभाव एवं अत्याचार का शिकार बनी हुई हैं। विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक एवं महिला अधिकार कार्यकर्ताओं द्वारा उन मुद्दों

की पहचान करने के प्रयास किए गए हैं जो महिलाओं की गैरबराबरी एवं भेदभाव के लिए जिम्मेदार माने जाते रहे हैं। महिलाओं के अधिकारों के लिए काम करने वाले व्यक्तियों एवं संगठनों द्वारा इन मुद्दों को विभिन्न मंचों से प्रमुखता से उठाया जाता रहा है।

सामाजिक तौर पर वर्गीय संरचना में जीवन यापन करने वाली महिलाओं के मुद्दों में लगातार परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। मध्यमवर्गीय महिलाएं जहां अपने साथ होने वाले भेदभाव को दूर करने के लिए संघर्षरत हैं, वहीं निम्नवर्गीय महिलाएं समान कार्य के लिए समान वेतन, काम के घंटों को कम करने, कार्यस्थलों पर बुनियादी सुविधाएं, अवकाश आदि के लिए संघर्ष कर रही हैं। वर्गीय संरचना के अंतर्विरोध महिलाओं के मुद्दों के बुनियादी परिवर्तनों की ओर इशारा करते हैं, जिसके अनुरूप ये महिलाएं अपने–अपने मुद्दों को लेकर लगातार मुखर रही हैं।

बदली हुई परिस्थितियों में, महिला आंदोलन एवं महिला अधिकार के लिए संघर्षरत व्यक्तियों एवं संगठनों का मुख्य फोकस इन्हीं मुद्दों के इर्द गिर्द एक स्पष्ट समझदारी का निर्माण कर सार्थक संघर्षों को आगे बढ़ाने की दिशा में रहा है। प्रमुख महिला अधिकार कार्यकर्ता वृंदा करात[5] लिखती हैं कि "अगर हम अपने देश के महिला मुक्ति आंदोलन की बात करें तो 1970–80 के दशकों में कई अलग–अलग और छोटे–छोटे नारीवादी समूह बने थे और उनकी समझ यह थी कि तमाम स्त्रियों में एक "सिस्टरहुड" (बहनापा) है, जिसके आधार पर वे सब मिलकर अपनी मुक्ति का आंदोलन चला सकती हैं, लेकिन जब हमने यानी महिला संगठनों ने, बहनापे के नारे को हिन्दुस्तान की पृष्ठभूमि में परिभाषित किया, तो कहा कि निश्चित रूप से हमारी संस्कृति पर पितृसत्ता के विचार का वर्चस्व है, जिसके खिलाफ़ हमें लड़ना है और जिसको जड़ से उखाड़ना है। लेकिन इस संघर्ष में हमें इस बुनियादी बात को नजरअंदाज नहीं करना है कि हिंदुस्तान में हर स्त्री का दर्जा बराबर का नहीं है।

एक मजदूर स्त्री और एक पूंजीवादी घर में जन्मी स्त्री, एक दलित स्त्री और एक ऊंची जाति की स्त्री, एक अल्पसंख्यक समुदाय की स्त्री और एक बहुसंख्यक समुदाय की स्त्री की सामाजिक स्थितियों में अंतर है। अगर हम इस अंतर को नहीं समझेंगे, तो बहनापे का नारा केवल प्रभुत्वशाली तबके के हितों को आगे बढ़ाने वाला होगा। अतः हमने यह नारा दिया कि हर स्त्री जब मजदूर, दलित और अल्पसंख्यक स्त्रियों के पक्ष में खड़ी होगी तब स्त्रियों में असली बहनापा होगा और तभी स्त्रियों में वह असली एकजुटता होगी जो स्त्रियों की मुक्ति के एक व्यापक आंदोलन का आधार बनेगी। केवल जन्म के आधार पर स्त्रियों के बहनापे की बात करना अथवा यह सोचना कि सब तरह की महिलाएं स्त्री होने मात्र से बहनें हैं और इसी आधार पर वे एकजुट हो सकती हैं, एक खामख़याली है। इस काल्पनिक बहनापे के आधार पर महिला मुक्ति का कोई आंदोलन खड़ा नहीं हो सकता। पश्चिमी देशों के नारीवाद और हमारे देश के नारीवाद में यह बुनियादी फर्क है। भारत के प्रगतिशील जनवादी या वामपंथी महिला मुक्ति आंदोलन ने स्त्रियों के असली बहनापे पर जो यह नई और सही समझ पैदा की है, वह दुनियाभर के स्त्री आंदोलन को भारत की स्त्रियों के आंदोलन की देन है। इसे सारी दुनिया में पहचाना गया है और विभिन्न देशों के महिला आंदोलन इससे प्रभावित हुए हैं।"

वर्गीय संरचना के साथ–साथ जातीय संरचना के संदर्भ में भी नारीवाद को समझना महत्वपूर्ण है क्योंकि उच्च जातियों से आने वाली महिलाओं को एक सीमा तक कुछ बुनियादी

अधिकार एवं स्वतंत्रता प्राप्त है जबकि जातीय संरचना में निचले पायदान से आने वाली महिलाएं दमन एवं शोषण के दोहरे चक्र का सामना करती हैं। पहला, महिला होने के नाते किया जाने वाला भेदभाव या शोषण और दूसरा उस जाति विशेष की महिला होने के नाते किया जाने वाला सामाजिक भेदभाव या शोषण। "जाति व्यवस्था, असमानता, शोषण, दमन पर आधारित रिश्तों को मान्यता देती है, दलित स्त्री अपनी जाति, वर्ण और लिंग की वजह से सर्वाधिक दमित और शोषित रही है।"[6]

वर्गीय एवं जातीय संरचना का विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि जीवन के विविध क्षेत्रों में जन्म से लेकर मृत्यु तक महिलाएं दमन, उत्पीड़न एवं शोषण का शिकार बनी रहती हैं। महिलाओं के जीवन में विभिन्न स्तरों पर इस भेदभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यही वे मुद्दे हैं जो नारीवाद के सन्दर्भ में सही समझदारी को विकसित करने में मददगार हो सकते हैं, क्योंकि जीवन के विभिन्न स्तरों पर होने वाला भेदभाव ही नारीवाद के प्रति सही समझदारी को विकसित कर सकता है। वर्गीय संरचना, जातीय भेदभाव, लैंगिक भेदभाव, दहेज प्रथा एवं शोषण, बलात्कार, कन्या भ्रूण हत्या, सामाजिक कुरीतियां एवं भेदभाव आदि वे बुनियादी मुद्दे हैं, जिन पर स्पष्ट समझदारी का निर्माण किए बिना हम महिलाओं के मुद्दों के प्रति सही समझ नहीं बना सकते हैं। इसलिए इन मुद्दों के इर्द–गिर्द ही महिला आंदोलन को गोलबंद करते हुए वैचारिक धरातल पर आगे बढ़ाया जा सकता है।

विभिन्न विचारधाराओं का नारीवादी आंदोलन पर प्रभाव

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विभिन्न विचारधाराओं ने नारीवादी आंदोलन के विकास एवं उभार में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने महिलाओं को लंबे समय तक उनके बुनियादी अधिकारों से वंचित रखने के प्रयास किए। उसी का परिणाम था कि महिलाएं आज भी जीवन के बुनियादी क्षेत्रों में भी अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष कर रही हैं लेकिन पितृसत्तात्मक व्यवस्था आज भी उन्हें उनके मूलभूत अधिकारों से वंचित रखना चाहती है। वह नहीं चाहती कि महिलाएं रूढ़िवादी सोच से मुक्त होकर स्वतंत्र सोच को विकसित करते हुए बराबरी पर आधारित सामाजिक व्यवस्था में जीवन यापन कर सकें।

उदारवादी नारीवाद सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के साथ–साथ आर्थिक, राजनीतिक एवं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समानता का पक्षधर है और चाहता है कि गैर बराबरी पर आधारित सामाजिक व्यवस्था को समाप्त कर महिलाओं को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ने के अवसर प्राप्त हों। **रेडिकल** नारीवादी विचारक महिलाओं की स्थिति में आमूलचूल परिवर्तनों का समर्थन करते हैं। इस विचारधारा के समर्थकों का मानना है कि लैंगिक आधार पर गठित श्रम विभाजन व्यवस्था को समाप्त कर, योग्यता पर आधारित व्यवस्था को अपनाया जाए। यह विचारधारा भी पुरुष प्रधानता पर आधारित व्यवस्था को समाप्त कर समानता पर आधारित व्यवस्था के निर्माण की संकल्पना पर बल देती है।

मार्क्सवादी नारीवाद को विकसित करने का श्रेय कार्ल मार्क्स एवं उनके अनुयायियों को जाता है, जिन्होंने वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ–साथ वर्गीय संरचना की पड़ताल कर उन कारकों को ढूंढने में सफलता अर्जित की जो वर्गीय शोषण के लिए जिम्मेदार माने जाते हैं। इस

विचारधारा के समर्थक आर्थिक कारकों को वर्गीय शोषण के बुनियादी तत्व के रूप में स्वीकार करते हैं और इनका मानना है कि एक ऐसे वर्गविहीन एवं शोषण विहीन समाज की स्थापना करना, जिसमें व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार काम मिले और काम के अनुसार वेतन मिलना सुनिश्चित हो, तभी जाकर महिलाओं की स्थितियों में बुनियादी बदलाव संभव है।

इस विचारधारा के समर्थकों के अनुसार "समाज में महिलाओं का उत्पीड़न सीधे तौर पर किसी व्यक्ति के इरादतन किए गए कृत्यों से नहीं होता है बल्कि इसके पीछे वह सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक संरचना कार्य करती है जिसमें कि वह व्यक्ति रह रहा होता है। व्यक्ति की समस्त पहचान उत्पादन पर निर्भर करती है। हमारी पहचान इस बात से निर्धारित होती है कि हम क्या उत्पादन करते हैं। चूंकि महिलाओं को दोयम दर्जे की भूमिका में रखा गया है अतः आर्थिक एवं सामाजिक रूप से इस गौण भूमिका के कारण इनकी छवि नकारात्मक बनी है।"[7]

निष्कर्ष एवं सुझाव :

मानव की विकास यात्रा में प्राचीन समय से लेकर आज तक कई परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। इन्हीं परिवर्तनों में से एक परिवर्तन सामाजिक व्यवस्था के भीतर महिला पुरुष संबंधों एवं उनके प्रभुत्व में आए परिवर्तनों से भी संबंधित है। मातृसत्तात्मक व्यवस्था से प्रारंभ हुआ सामाजिक व्यवस्था का स्वरूप वर्तमान में इस आधुनिक स्वरूप तक पहुंचा है, जिसमें पुरुष प्रभुत्व लगातार स्थापित होता चला जा रहा है। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हुए परिवर्तनों ने महिलाओं की स्थिति में लगातार प्रतिकूल प्रभाव डाला है जिसके कारण महिलाएं विकास की दौड़ में लगातार पिछड़ती चली जा रही हैं। लैंगिक आधार पर स्थापित हुए श्रम विभाजन के बुनियादी स्वरूप के कारण महिलाएं ज्ञान अर्जित करने के बुनियादी अवसरों से वंचित रहीं, जिसका असर विभिन्न क्षेत्रों में उनकी भूमिकाओं एवं स्थितियों पर स्पष्ट दिखाई देता है।

आज दुनिया के सबसे विकसित देश भी महिलाओं को उनके बुनियादी अधिकारों से वंचित रखना चाहते हैं। राजनीतिक हिस्सेदारी के लगभग दो–ढाई सौ वर्षों के अनुभव के बाद भी यह एक कटु सत्य है कि अमेरिका जैसे दुनिया के सबसे विकसित देश में कोई भी महिला राष्ट्रपति के पद को अभी तक भी धारित नहीं कर पाई है। आज भी लैंगिक भेदभाव हमारी वैश्विक व्यवस्था के एक प्रमुख स्तंभ के रूप में बना हुआ है। तमाम वैश्विक प्रयासों के बावजूद इसके स्वरूप में कुछ बुनियादी परिवर्तन अवश्य आये हैं, लेकिन अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाकर एवं महिलाओं को एक गरिमापूर्ण एवं सम्मानजनक जीवन जीने के अवसर उपलब्ध करवाकर ही महिला असमानता को दूर किया जा सकता है। महिला असमानता को दूर करने हेतु समग्र प्रयासों की आवश्यकता आज बेहद शिद्दत के साथ महसूस की जा रही है। समाज के सभी वर्गों की भागीदारी एवं सहयोग के बिना यह संभव नहीं है। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने परिवार एवं समाज से ही महिलाओं को सम्मान एवं जीवन जीने की आजादी देकर इस भेदभाव की समाप्ति की दिशा में कारगर कदम उठा सकते हैं। बालिकाओं को अपने सपनों को साकार करने की आजादी के पंख देकर हम उन्हें अनंत ऊंचाइयों तक जाने हेतु प्रेरित करें, तभी

वास्तविक अर्थों में हम कह पाएंगे कि लैंगिक भेदभाव या लैंगिक असमानता का हमने उन्मूलन कर दिया है और समग्र, सामूहिक प्रयासों से ही यह संभव है।

❒

सन्दर्भ –

1. *भारत और समकालीन विश्व–1, सामाजिक विज्ञान, इतिहास, अध्याय प्रथम. एन.सी.ई.आर.टी., पृ. 20*
2. *Lard: Joan B,: "Women and the Public Sphere in the age of the French Revolution Itchaca", Cornell University press, 1988, pp. 2-3*

3- *Chapmen: Carrie, catt and Nettie Rogers Shuler: "Women Suffrage and Politics", New York, p. 107*

4. *आर्य : साधना, मेनन : निवेदिता, लोकनीता : जिमी, : "नारीवादी राजनीति : संघर्ष एवं मुद्दे", हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, वर्ष 2015, पृ. 56*
5. *करात, वृंदा : "जीना है तो लड़ना होगा", सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.11*
6. *जोशी गोपा : "भारत में स्त्री असमानता," हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, वर्ष 2011, पृ.149*
7. *बिस्वाल, डा. तपन : "मानवाधिकार, जेंडर एवं पर्यावरण", विवा बुक्स, दिल्ली, वर्ष 2014, पृ. 201*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 78–82

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

प्रतीक के रूप में बौद्ध स्तूपों का दार्शनिक विश्लेषण

राजकिशोर यादव
शोधार्थी, प्राचीन भारतीय इतिहास,संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग,काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
E-mail : rajkishoryadav65@gmail.com

प्रस्तावना

विश्व के सभी धर्म के लोग अपने धर्म में आस्था एवं विश्वास को बनाये रखने के लिए किसी न किसी प्रतीक की पूजा करते हैं। यह मूर्त अथवा अमूर्त रूप में होता है। इसमें से बौद्ध धर्म विभिन्न विशय और दर्शन का प्रेरणास्रोत है, जिसकी अभिव्यक्ति स्तूप में दिखाई देती है। बौद्ध धर्म में स्तूप त्रिरत्न बुद्ध, संघ और धम्म तथा बुधंम शरणम् गच्छामि, संघम शरणम् गच्छामि, धम्म् शरणम् गच्छामि पर आधरित है। बौद्ध स्तूपों के स्थापत्य में विविधता दिखाई देता है, किन्तु इसके दर्शन में एकरूपता दिखाई देती है। अपने अलौकिक दर्शन के कारण बौद्ध धर्मं विश्व के अनेक देशों में यथाशीघ्र फैल गया और वहाँ भी स्तूप का निर्माण हुआ। प्रस्तुत शोध पत्र में शोधार्थी द्वारा बौद्ध स्तूपों का दार्शनिक विश्लेषण किया गया है।

अस्थि अवशेष का विभाजन

बौद्ध धर्म में महात्मा बुद्ध के महापरिनिर्वाण के पश्चात्, उनके भग्नावशेष को आठ भागों में विभाजित कर, तत्कालीन राजाओं द्वारा आठ स्तूप का निर्माण प्रतीक के रूप में किया गया क्योंकि स्तूप का प्रतीक के रुप में दार्शनिक महत्त्व है। कालातंर में बौद्ध धर्म का जब विकास हुआ और उपासकों की संख्या में वृद्धि हुई। उसको देखते हुये मौर्य सम्राट अशोक द्वारा चौरासी हजार स्तूपों का निर्माण करवाया गया। इसके बाद उपासकों की श्रद्धा को ध्यान में रखते हुये, शुंग, कुषाण, सातवाहन, शक–क्षत्रप और गुप्त वंश के राजाओं ने भी स्तूप निर्माण तथा इसके विकास में योगदान दिया। शुंग काल में निर्मित साँची का महास्तूप वर्तमान में विद्यमान सभी स्तूपों में सबसे आर्कषक है। (चित्र संख्या 01)

चित्र संख्या 01– साँची का महास्तूप

स्तूप के प्रकार : स्तूपों को प्रयोजन कि दृष्टि से चार भागो में विभाजित किया जा सकता है।

1. शारीरिक स्तूप–जिस स्तूप का निर्माण बुद्ध और उनके, शिष्य अथवा महान सम्राट के धातु (राख) पर किया गया। उसे शारीरिक स्तूप कहते हैं। जैसे– कुशीनगर का रामाशार स्तूप, पिपरहवा स्तूप सिद्धार्थ नगर, सारनाथ का धमेख व धर्मराजिका स्तूप, साँची स्थित सारियपुत् एवं महामोग्गलायन का स्तूप इत्यादि।

2. पारिभोगिक स्तूप–जिस स्तूप का निर्माण महात्मा बुद्ध के दैनिक जीवन में उपयोग होने वाली वस्तुओं पर किया गया। उसे पारिभोगिक स्तूप कहा जाता है। जैसे– पेशावर स्थित कनिष्क कालीन बुद्ध स्तूप जिसका निर्माण महात्मा बुद्ध के भिक्षापात्र पर किया गया, तपस्सु और भल्लिक ने बुद्ध के केश धातु पर अपने देश बाल्हीक में स्तूप का निर्माण करवाया।

3. उद्देशिका स्तूप–किसी विशेष प्रयोजन या उद्देश्य को लेकर जिस स्तूप का निर्माण किया गया। उसे उद्देशिका स्तूप कहते हैं। जैसे सारनाथ का चौखण्डी स्तूप, साँची का महास्तूप इत्यादि।

4. मनौती स्तूप–जब किसी उपासक या उपासिका की मन्नत पुरी हो जाती थी, तब वह स्तूप का निर्माण करवाता था। उसे मनौती स्तूप कहा जाता है। इस प्रकार के स्तूप कुशीनगर के महापरिनिर्वाण मन्दिर के पास स्तूप एवं सारनाथ स्थित धमेख स्तूप के पास देखा जा सकता है।

बौद्ध वास्तुकला और स्थापत्य की दृष्टि से स्तूप के पाँच प्रमुख अंग हैं। (चित्र संख्या–2)

अण्ड – स्तूप का ऊँचा दिखाई देने वाला अर्द्धगोलाकार भाग अण्ड कहलाता है। यह गोलाकार, अर्द्धगोलाकार, चन्द्रकार, बेलनाकार इत्यादि रूपों में होता है।

हर्मिका – अण्ड के ऊपर चौकोर अथवा आयताकार ताबूत का निर्माण करते हैं। जिसे हर्मिका कहते हैं।

छत्रावली – हर्मिका के ऊपर छाते के आकार का दिखने वाला भाग छत्रावली कहलाता है। यह स्तूप के सबसे ऊपरी भाग पर होता है।

प्रदक्षिणापथ – अण्ड के चारों तरफ परिक्रमा करने वाले भाग को प्रदक्षिणापथ कहते हैं।

वेदिका और तोरणद्वार – स्तूप को सुरक्षित रखने के लिए, उसके चारों ओर से लकड़ी, ईंटों या पत्थरों से घिरे हुए भाग को वेदिका कहा जाता है। उसमें प्रवेश करने के लिए प्रवेश द्वार का निर्माण किया जाता है,

जिसे तोरणद्वार कहा जाता है। वेदिका के चार भाग है– आलंबन, स्तंभ, सूची और उष्णीस।

1–आलंबन : आलंबन का कार्य स्तंभ को सीधा रखना है। यह जमीन के नीचे का भाग होता है।

2–स्तंभ : यह वेदिका को सीधा खड़ा रखता है। आलंबन इससे जुड़ा होता है।

3–सूची : स्तंभों को परस्पर जोड़ने के लिए प्रस्तर का ऐसा भाग तैयार किया जाता, जो दोनों तरफ स्तंभ के गहरे कटान से जुड़े होते थे। इसी जोड़ने वाले प्रस्तर–खंड को सूची कहते है।

4–उष्णीस : स्तम्भ और सूची को जोड़नें वालें भाग को उष्णीस कहा जाता है।

चित्र संख्या–2

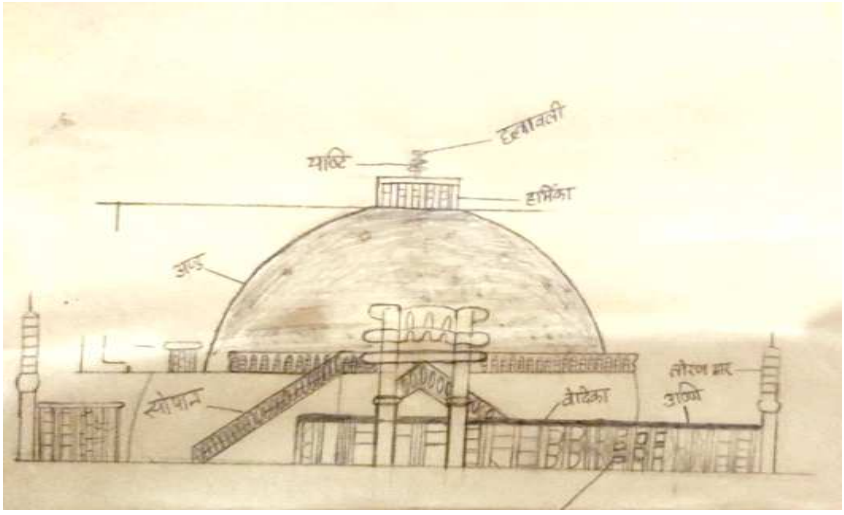

स्तूप का विकास –

मौर्य काल में स्तूप का तेजी से निर्माण और विकास हुआ। इसका प्रमुख कारण बौद्ध धर्म का भाांति और अहिंसा की नीति थी। बौद्ध धर्म का यह नीति हमे स्तूप में दिखाई देता है,

क्योंकि स्तूप का जो स्वरूप हम बाहर से देखते हैं। उसमें महात्मा बुद्ध के विचार और दर्शन दिखायी देता है। इस दार्शनिक परंपरा की शुरुआत, हमें वैदिक धर्म के उपनिषदों में भी दिखायी देता है।[1] कालांतर में बौद्ध वास्तुकला में परिवर्तन हुआ और स्तूप का अध्यात्मिक एवं दार्शनिक महत्त्व बढ़ता गया। यह दार्शनिक महत्त्व पूर्णरुप से स्तूप में दिखायी देता है।

स्तूप का दर्शन

पृथ्वी और आकाश जहाँ आपस में मिलते हुए प्रतीत होते हैं उसे विज्ञान की भाषा में क्षितिज कहा जाता है।[2] उसके ऊपर के भाग को ब्रह्मांड कहते हैं। इसे वैदिक एवं बौद्ध धर्म में स्वर्गलोक अथवा देवलोक कहा जाता है। इसके नीचे पृथ्वीलोक है, जहाँ मनुष्य निवास करता है। स्तूप के विभिन्न भागों पर विचार करते हुए वासुदेव शरण अग्रवाल ने ब्राह्मण ग्रंथों एवं श्रौतसूत्रों में वर्णित वैदिक यूप निदान में देखी है।[3] उनके अनुसार यूप और स्तूप की पारस्परिक एकता तथा तुलना इस प्रकार चरितार्थ होती है–

- जो भाग भूमि के अन्दर छिपा रहता है– वह पितरों का भाग या पितृलोक का प्रतिरूप है।
- निखात भाग की रेखा से ऊपर रशना तक – यह भाग मनुष्य लोक का प्रतिरूप है।
- रशना से ऊपर चशाल या मस्तक भाग की चकरी तक– यह देवलोक का प्रतिरुप है।
- चशाल से ऊपर का भाग जो दो अंगुल या तीन अंगुल निकला होता है– यह साध्य देवों का अंश माना जाता है।

गुस्तव रोथ ने अपनी किताब 'द सिम्बोलिज्म ऑफ द बुद्धिष्ट स्तूप में स्तूप के 37 अध्यात्मिक लक्षणों का उल्लेख किया है।[4] स्तूप का निर्माण ऊँचे चबूतरे पर किया जाता है। यह चबूतरा पृथ्वी के समान है। पृथ्वी को माता के तुल्य माना जाता है, जो अपनी आंचल में सबको समेटी हुई है।[5] बी.एम. बरूआ के अनुसार ''स्तूप स्थापत्यकला का तुलना मनुष्य के जीवन के विभिन्न चरणों से किया जा सकता है, स्तूप के उपर अवशेष को ताबुत में रखना गर्भाधान को इंगित करता है, ताबुत को ईंट अथवा पत्थर के बक्से में रखना जन्म का संकेत है, इस बाक्स को अण्ड के उपर स्थापित करना शैशावस्था का प्रतिनिधित्व करता है। जिसकी रक्षा स्तूप के सबसे उपर बना छत्रावली करता है। स्तूप के किनारे वेदिका बना होता है, यह शिषु को बाह्य जगत से रक्षा प्रदान करता है। इसी प्रकार चबूतरे पर स्तूप के विभिन्न भागों का निर्माण होता है। इसके उपर सर्वप्रथम स्तूप के अण्ड का निर्माण होता है। यह अंतरिक्ष के समान है। यह बौद्ध धर्म में धम्म का प्रतीक है और यह मन की स्थिरता (चंचलता) को शांत करता है।

अण्ड के उपर हर्मिका बना होता है, यह हृदय के समान है, जहाँ आत्मा निवास करता है। हर्मिका के उपर यष्टि लगा होता है, जो हिन्दू मंदिर के ध्वज के समान है।[6] यह आत्मा और शरीर के बीच योजक का कार्य करता है। यष्टि के उपर छत्रावली लगा होता है। यह छत्रावली उपर से आने वाले दुष्ट तत्वों से स्तूप की रक्षा करता है। यह राजत्व का प्रतीक भी समझा जाता है।[7] इस छत्रावली द्वारा सृष्टि के लोकों की संख्या को भी प्रदर्शित किया जाता है। जिस स्तूप में तीन छत्र बने होते है, उसे तीन लोक और जिसमें सात छत्र बने होते है, उसे सप्त लोक का सूचक माना जाता है।

स्तूप के किनारे प्रदक्षिणापथ का निर्माण किया जाता है, यह उस धार्मिक रूप को याद दिलाता है, जब मनुष्य विवाह और अन्तयोष्टि संस्कार के समय सात फेरा लेता है। प्रदक्षिणापथ के बाद वेदिका का निर्माण होता है। यह स्तूप के भीतरी भाग को बाहर के दुष्ट आत्माओं से सुरक्षा प्रदान करता है और अपनी पवित्रता को बचाये रखता है। वेदिका में तोरण द्वार बना होता है। यह मनुष्य को अपनी ओर आर्कषित करता है। इस तोरण द्वार के अन्दर प्रवेश करते ही अपवित्र आत्मा पवित्र हो जाता है। बौद्ध स्तूप मनुष्य की आत्मा को शांति प्रदान करता है। स्तूप यह याद दिलाता है कि ''मनुष्य इस संसार में अकेला ही आया है और अकेला ही जायेगा तथा खाली हाथ आया था और खाली हाथ जायेगा''। स्तूप से यह भी पता चलता है कि समस्त संसार नश्वर है क्योंकि महात्मा बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य आनन्द से कहा था कि–

''कायकमेन हितेन सुखेन अद्वयेन अप्पमाणेन मत्तेन वचीकम्मेन हितेन सुखेन''[8]

अर्थात ''जो कुछ यह संसार में सुख देने वाला वस्तु दिखाई दे रहा है, वह एक दिन नष्ट होगा ही।''[9] आज भी बौद्ध धर्म में शांति के प्रतीक स्तूप खड़े–खड़े यह सुचना दे रहे हैं कि ''सभी प्रिय वस्तुओं से एक न एक दिन मनुष्य को वियोग होना ही है।''

निष्कर्ष– इस प्रकार यह हम कह सकते हैं कि स्तूप बौद्ध धर्म के धार्मिक पक्ष को दर्शाता है और यह बौद्ध का प्रमुख प्रतीक चिह्न है। यह मानव के मन में समान श्रद्धा और भय की भावना तथा सम्मान की प्रतिक्रिया को व्यक्त करता है। इसके अतिरिक्त स्तूप मनुष्य के पूजा करने के मनोवैज्ञानिक आग्रह को भी संतुष्ट करता है तथा यह ब्राह्मण धर्म में प्रचलित मूर्ति–पूजा और जटिल कर्मकाण्ड के विचार को भी खंडित करता है। स्तूप महात्मा बुद्ध के दार्शनिक विचारों को चित्रित करता है। इन बौद्ध स्तूपों का अधिकांशतः निर्माण व्यापारिक मार्ग के चौराहों पर किया गया था। जिससे सामान्य जन मानस बौद्ध धर्म के प्रमुख विचार ''जीयो और जीने दो'' तथा ''बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय'' को स्मरण करता रहे और इसे अपने वास्तविक जीवन में ग्रहण कर सके।

❒

सन्दर्भ –

1. *पाण्डेय, गोविन्द चन्द्र, 2018 : बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृ. 9*
2. *www.wikipedia.org*
3. *अग्रवाल, वासुदेव शरण, 2015 : भारतीय कला, पृथवी प्रकाशन वाराणसी, पृ.135*
4. *रोथ, गुस्तव, 1986 : द सिम्बोलिज्म ऑफ द बुद्धिष्ट स्तूप, इण्डो–बुद्धिष्ट हाउस, नई दिल्ली, पृ. 77*
5. *अग्रवाल, वासुदेव शरण, 1964 : मथुरा कला, गुजरात विद्यापीठ सभा, पृ. 34*
6. *लांगर्हष्ट, ए0 एच0, 2020 : द स्टोरी ऑफ स्तूप, साइलोन गवर्नमेंट प्रेस, कोलंबो, पृ. 13*
7. *उपाध्याय, वासुदेव : 2003, प्राचीन भारतीय स्तूप, गुहा एवं मंदिर, विहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना, पृ.19*
8. *शास्त्री स्वामी द्वारिकादास : 1996, दीघनिकायपालि, बौद्ध भारती प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 393*
9. *पूर्वोक्त, 408.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 83–91

UGC Care Listed Journal
ISSN 0974 -1100

Unearthing New Dimensions in Dalit Literature A Study of Mudnakudu Chinnaswamy's Selected Poems

Dr Anshu Gagal
Assistant. Professor, Vivekananda School of English Studies
Vivekananda Institute of Professional Studies, Delhi
Email- agagal@gmail.com Mob. 9555209102

Dr. Barnali Saha
Assistant Professor, Vivekananda School of English Studies
Vivekananda Institute of Professional Studies, Delhi
Email- Barnali.saha@vips.edu Mob. 9871543410

ABSTRACT

"Subaltern" is a term coined by Italian Marxist Antonio Gramsci which metaphorically means the social classes which are displaced to the margins of a society, marginalized lives, voicelessness and the inferior social classes in the society. Dalit writing is the voice of the dispossessed subaltern. This Gramscian metaphor is an important central point through which various academicians have explored the varied dimensions of Dalit literature. As an epicenter of all Dalit experience of trauma and violence, the poetics the Dalit body is deeply rooted in the peripheral space. However, to analyse Dalit literature from subaltern perspective will not do justice to Dalit literature. It is foremost to highlight that Dalit writings have played significant role in the creation of Dalit identity, therefore to view them only as objects of history will not do justice to the entire corpus of Dalit studies. The paper tries to shed light not only on the reflection of history of Indian thought on marginality but also an endeavour towards social inclusion and the idea that art has an inherent value independent of its subject matter. The present paper is an attempt to study the selected translated poems by Rowena Hill of Mudnakudu Chinnaswamy's "before it rains again" from the perspective of Dalits as subjects, history-makers and not merely people to whom history happens or objects. A rallying cry of aestheticism –art for art's sake is an important question which the present paper would also like to examine through the selected poems of Dalit poet.

Keywords : Dalit Literature, Subaltern, Mudnakudu Chinnaswamy, Social Inclusion

Charanjit Singh Channi, a Dalit Chief Minister of Punjab, and the Hon'ble President of India, Ram Nath Kovind are the best political masterstrokes by the political parties in contemporary times. India has a long history of casteism. Caste identity which was kept hidden in previous times is actively showcased nowadays and expressed. Caste discrimination undoubtedly is the paramount feature of the Indian system and it still seeped beneath is evident from the examples mentioned above. In India, the electoral victory twice of Narender Modi has given prominence to the ideology of Hindutva and this right-winged ideology has always given priority to Hinduism. This electoral victory of the Prime Minister and in a manner of Hindutva ideology has brought to the surface the issues related to caste discrimination and open attacks on minorities. Such issues related to caste identity are the foremost reasons for Dalit activism and culture. It is important to highlight that Dalit writings have played a significant role in the creation of Dalit identity, therefore to view them only as objects of history will not do justice to the entire corpus of Dalit studies. The present paper is an attempt to study the selected translated poems by Rowena Hill of Mudnakudu Chinnaswamy's "before it rains again" from the perspective of celebration and assertion of Dalit identity. The research paper is an attempt to emphasize the literary qualities of Dalit texts and would like to explore more than the gritty realism produced by victims. Dalit literature is not merely an inventory of social wrongs rather it is the self-pride, chronicles of personal and collective suffering, hope for an egalitarian society, and revolt against social injustices are the core concerns reflected through it. Such a reading helps understand how Dalits set themselves free from class ideology and Brahminical hegemony by opting for poetic resistance to achieve hypervisibility. The findings yielded by this study tries to provide support for the key argument that the Dalit literature and poetic resistance are the means of self-representation and liberation from dehumanizing class structures and exclusionary ideology to repossess one's erased self and not just that it tries to explore new dimensions of the Dalit literature.

Caste has posed various challenges and many scholars have analysed its existence from times immemorial. Dalithood characterizes the exploitation and marginalisation of Dalit people, socially, economically, culturally and politically by upper caste Brahminical ideology. Dr. Ambedkar had fought against it and tried to highlight the harmful impacts such hierarchies can have in the progress of the nation as a whole. The concepts of equality and human dignity are paramount for Ambedkar. Caste is the foundation of Hindu society and is manifested in almost every sphere of Hindu society. These marginalized classes according to eminent scholars have felt the need to form the constituency, therefore the first step they took in this direction is by forming an identity. Henceforth, the import of the term 'Dalit'.

Arun Prabha Mukherjee in "Introduction" to *Joothan: An Untouchable Life* (2003) etymologically defines the word "Dalit as having its root in the Sanskrit word *dal* which means to crack open, split, grind and so forth".[1] Whereas K.T. Achaya notes that the etymology of the word *dal* comes from how we prepare pulses and to make the preparation easier we crush them in a mill. The term Dalit has come from the same root, a coinage popularised by Namdeo Dhasal. Joshil K Abraham and Judith Misrahi-Barak observed that the word means many things in Marathi such as "oppressed", "broken", "downtrodden" and "crushed".[2] However, in its present usage, the word describes the historical abuse that the community has to bear based on the name of caste system. Therefore, accepting this identity and recognizing themselves as Dalits will surely add milestones to their journey. "Existence precedes essence" asserts Jean-Paul Sartre which implies that we first exist as humans (existence), which is an important consideration for individuals as an autonomous responsible and conscious beings rather than labels, roles, stereotypes, definitions, or other preconceived categories they fit (essence). Mukherjee also assets that, "By identifying themselves as Dalits, [they] are embracing an identity that was born in the historic struggle to dismantle the caste system, which was responsible for their untouchable status, and to rebuild society on the principles of human dignity, equality, and respect".[3] However, this social cohesion is a remarkable step required and suggested long back by Baba Sahib Ambedkar.

The pain of caste, discrimination, oppression and suffering remained invisible to the entire world until Dalits embraced active participation by voicing their concerns through literature in order to alter social environmental conditions. And this cohesive nature of participation brought new hopes for them. Ambedkar's project focussed on organising Dalits into a political force and Dalit movement is inspired by Western ideas of social justice. Dalits are therefore not the members of Hindu social groups rather they belong to separate social group. This distinct identity from Hindu cultural heritage leads to exclusivist and integrationist perspective of Dalits.

Dalits were recognized with the following names Chandals, Acchuts, Pariahs, Untouchables, Avarnas, Outcastes, etc. and this form of knowledge is created through Hindu scriptures. These texts which have religious, philosophical, and spiritual basis are responsible for the varna system and in contemporary times are the basis of the Caste system. Moreover, the categorization benefited Brahmins who were considered intellectuals, and this Brahminical knowledge is prioritized over and above any other knowledge system. The pain, humiliation, and suffering that Dalits are subjected to in the name of caste is utterly abhorrent. Hinduism according to Ambedkar is the root of the caste system and to eradicate untouchability one has to examine and re-examine this religion and its cultural practices.

Earlier Dalits were projected through the eyes of the upper caste only. Dalits were not literate enough to represent themselves. They were systematically ostracised from society, and their situation, therefore asserts Satyanarayana Kumar, "circumscribed by rigid caste rules…and treated worse than animals by Hindus… that they remained illiterate, poor and downtrodden through most of Indian history".[4] In a bid to not stand out in a crowd the upper caste systematically erased the personal identity of Dalits. However, through education they developed the confidence first to face the world and second to voice out the atrocities met at the hands of upper-class people. Dalit literature is the representation of Dalit reality. Through this representation the untouchables articulated loudly and clearly and brought in front of the world the awareness of the social situation in the society about themselves. Dalits have written literature in the regional languages though not much has been written in English which could connect the community with the entire world. Although, the transformation is evident in contemporary times with the newly emerging field, that is, translation studies. With the translations of Dalit works, the reach to the outside world is made accessible to all conscious readers. The development of Dalit literature in a manner has helped strengthen Dalit voice. With the new generation of writers appeared new forms of Dalit writings like novels, autobiography, graphic novels like *Bhimayana*, cartoons and short stories. As the writers have this broad range and scope of writing available to them, they can subvert the conventions popularised by the upper caste. With this emergence of new forms, Dalits can establish a dialogue with different people. They can participate in political realms.

Mudnakudu Chinnaswamy is one such writer who has become the voice of his community. He was born in a village of Karnataka and in one of his interviews, he has mentioned that Ambedkar described "Indian village as the cesspool of cruelty, caste prejudice, and communalism".[5] He is an acclaimed writer whose works are available in translations done by Rowena Hill. Mudnakudu has lived through all the experiences that he tries to bring in front of his readers through his works. He is the first generation in his family who has received education and succeeded in securing a government job. Rowena Hill is a translator who met Mudnakudu in one of her visits to India and is so drawn with his poetry and its imagery that she planned to translate his works. Both Chinnaswamy and Rowena worked together to shape his poems and Rowena has helped him reach a wider audience around the globe.

Dalit literature has emerged and established itself as a separate writing. Dalit literature and poetic resistance are the means of self-representation which is apparent from the poem *Untouchables* written by Mudnakudu (2018). Practitioners of class ideologies perpetuated the silencing of Dalits and excised them from mainstream literature. Silencing these uprooted voices is an effective way to prevent them from

building an identity. But this journey of absence to self-determined participation is a roller coaster ride and demands constant efforts. Dalit writers are critical of the silence of mainstream literature about surrounding realities. Though one cannot deny the mainstream literature did try to represent these communities but as the proverb says that only the wearer knows where the shoe pinches explain the inner most wounds and the pain these communities have suffered. Dalit poetry has voiced their pains and sufferings but it should not be "treated merely as social documents that map suffering, victims' lives and pain" (Pramod Nayar).[6] Rather it is essential to locate literariness and the new subjects it has brought to light for literary interventions.

Chinnaswamy (2018) in his poem *White ants* says:

> The Hindu religion is
> a big tree.
> Brahmins are the roots,
> Kshatriyas the trunk,
> Vaishyas, Shudras and the rest
> branches and twigs.
> Not related to the tree,
> but still obliged to stay here
> are the white ants,
> the untouchables.[7]

This powerful rendering not only depicts the horrible existence of the untouchables but also brings into light the knowledge that has been created about the marginalized sections of the society with the help of religion. It is important to understand the role of religion in creating an understanding of its surroundings and its inhabitants. The oppression, inequality, and subjugation of classes do bring religion into question. According to Daniel C. Maguire, "Religion is uniquely powerful and not to address it when it is at the core of a problem is analytically and sociologically naive . . . Religions that cannot admit and work to correct their lethal errors and flawed heroes do not deserve to survive."[8] The religion which is the foundation, and spiritual engine of our whole belief system has deformities in it. It is responsible for dividing humans from humans. The essential part of all this criticism is the way doctrines have been interpreted in relation to their social conditions. However, the factor which holds importance is not to question the truth or sacredness of any scripture but to identify the reasons that these doctrines have helped legitimize age-old discrimination and inflicted sufferings and harm.

The poems also throw light on the fact that reason and rationality are slaves to traditions and customs. There are various poems written on it yet, the poem *Service in the Nude* [9] throws light on the orthodox practices of religion. Here poet refers to

Yellamma Goddess and the customs associated with it since the past. Yellamma Goddess is the one whose cult is closely associated with the Devdasi system in India and which promotes exploitation and oppression of women. During the Yellamma festival, women bathe in a river and walk nude from wilderness to temple at the mountain top. The poem highlights the exploitation prevalent through such practices. Here the Goddess appears before male priest asking for male priest's 'heart's desire' and he asked that 'Once a year at your festival/the womenfolk should go naked . / The whole body/ should be revealed to us,' (8-11).

In another poem *If I Were a Tree*:

> The sacred cow would scrape her body on my bark,
> scratching wherever it itched
> and the three hundred thousand gods sheltering inside her
> would touch me.[10]

The desire for inclusivity is evident through the lines quoted above. The sense of being one with the entire world and the aspiration for equality is one of the major themes of *If I Were a Tree*. Unequal treatment can also not be ignored when the untouchables are not allowed to touch anything which is considered sacred by upper caste Hindu Brahmins. Cows are considered sacred and Dalits were lynched by Hindu mob for touching a cow. Can we ever overcome the mental intricacies of such experiences? The poet satirises Hindu society and the ideologies which promote such discrimination. However, he also tries to highlight through this poem that nature never discriminates and we should learn from nature the value of interdependence.

The sun and moon as slaves,[11] compares Dalits to the sun and the moon who tirelessly work each day and every night without complaining. It projects the untiring perseverance and relentless energy they have in them. The poem makes one contemplate from human rights and social justice perspective that despite such hard work the restrictions the community faced in choice of occupation, which ultimately led to the deprived and impoverished conditions of lower caste. This makes us feel do hard work actually pays off?

Who is defiled? [12] examines and questions the society for being unjust with them for centuries and calls them defile but who is defiled. This question reminds of the poem *And You Call Me Coloured* where Agra Gra asks:

> When I was born I was black
> When I was sad I was black
> When I was hot I was black
> When I was sick I was black
> When I was scared I was black

When you was born you was pink
When you was sad you was blue
When you was hot you was red
And you call me Colored.[13]

Chinnaswamy with the help of these poems tries to unravel various intricacies that are associated with the marginalised sections of the world. He wants to bring to light that these ideologies only promote hatred and inequality. They are detrimental in the progress of the nations. Such ideologies are anti-progressive by nature and we must do away with them.

For a scrap of food highlights the theme of hunger. The poem reflects the distress of impoverished people. The plight of a mother is evident and the poignancy of the situation is such that it imposes certain tragic compulsions – the poor mother kills her conscience and thinks of selling her child for the dire need of food.

She's carrying on her head to sell
her own child now.
Nowhere is a scrap of food
to be found.
The hungry child's keening
doesn't sound like a flute,
the intestine's rumbling
is the roar of ocean. [14]

The mother is ready to abandon her child because it is very difficult for her to see it dying every day. Many people in India are leading a life of extreme poverty where they are deprived of the basic needs of life. Children suffer the most under such conditions of poverty. Poverty is the major challenge in India and the poet depicts it realistically through his poem.

The theme of corruption in electoral system is also something that tells Mudnakudu Chinnaswamy (2018) concern for present-day politics and its agendas. The poem *In the ballot box of illusion* Chinnaswamy depicts the sad, pitiable and thoughtful critique of the Indian electoral system, and through it put forward a powerful argument to contemplate whether actually people have more choices and voices during elections. He made us ponder that how these elections revolve and create a myth around us that people and their lives matter. The poet wants to shake these powerful people and wants to make them see and hear the despicable and contemptible state they have created for the poor people. He says,

I have left in the ballot box
a few sighs from my starving children,

a few tears from my sick mother,
When he feels happy and exalted,
In the nooks and corners of his house
Let him hear all of this sobbing.[15]

Dalit literary study so far has been a hackneyed representation of available ideas wherein the Dalit is generally shown as a marker and a mark of subalternism. Literary theorists from Pramod K. Nayar to Arun prabha Mukherjee and others have underscored the Dalit subalternity but have elided any talk of Dalit upliftment. Now, more than ever, the voice of the Dalit writer is more vociferous than ever, its sonorous boom is currently crafting newer histories and paving the way to the accessibility of other alternative histories to make themselves conspicuous. We feel that Dalit literature needs to develop a balanced point of view wherein the pain and suffering that has been an essential part of Dalit existence is equipoised with the positivity of Dalit presence. For literature, we believe, is ultimately a history of our times and as a historical document it should consider a population not from one stereotypical angle but develop a broadened horizon. In our paper, we have sought to resurrect Dalit literature from its stereotypical hotbed of negativity and redirect its course toward a more positive, flourishing and potent course. Through our study of Chinnaswamy's poems, we have presented the idea that Dalit writers too seek a positive future and simply harping of pain and suffering undermines the efforts the community has performed. The poet tries to raise global concerns through his poetry. The inhumane treatment Dalits met at the hands of upper caste people also equate them with the marginalised of the entire world, so their voice resounds with them and for them. The hierarchies created for the personal gain of a few are anti progressive for nations. Such voices are powerful outcry of spontaneous passion which no one can ignore.

Such powerful renderings have made us ponder the various concerns the poet has tried to raise in his poems. To examine the poems in the light of Art for life's sake will undermine the efforts of Mudnakuddu Chinnaswamy. In a manner we believe that he tries to speak for all the marginal sections of the world and brought a new vision and perspective through his poems for a better and a new world of renewed hope.

❒

***References**:*

1. *Mukherjee, Arun Prabha. "Introduction." Joothan: An Untouchable Life. Columbia University Press. 2003, p. 18.*

2. *Abraham, Joshil K., and Misrahi-Barak, Judith. Dalit Literatures in India. 2018. Open WorldCat, https://nls.ldls.org.uk/welcome.html?ark:/81055/vdc_100057753029.0x000001.*
3. *Mukherjee, Arun Prabha. "Introduction." Joothan: An Untouchable Life, p.20.*
4. *Satyanarayana, K. "The Political and Aesthetic Significance of Contemporary Dalit Literature." The Journal of Commonwealth Literature, vol. 54, no. 1, Mar. 2019, pp. 9–24. SAGE Journals, https://doi.org/10.1177/0021989417718378.*
5. *Chinnaswamy, Mudnakudu, and Rowena Hill. "Poet and Translator: A Dialogue between Mudnakudu Chinnaswamy and Rowena Hill." The Journal of Commonwealth Literature, vol. 54, no. 1, Mar. 2019, pp. 105–15. SAGE Journals, https://doi.org/10.1177/0021989417717295.*
6. *Nayar, Pramod K. "Dalit Poetry and the Aesthetics of Traumatic Materialism." Indian Journal of Gender Studies, 22(1), 2015, pp 1-14. SAGE JOURNALS, http://doi.org/10.1177/0971521514556942.*
7. *Chinnaswamy, Mudnakudu. before it rains again, Yoda Press, New Delhi. 2018, p.12.*
8. *Maguire, Daniel C. Violence Against Women in Contemporary World Religions: Roots and Cures. Cleveland, Ohio: Pilgrim Press, 2007.*
9. *Chinnaswamy, Mudnakudu. before it rains again, p. 72.*
10. *Ibid., p.11.*
11. *Ibid., p.47.*
12. *Ibid., p.37.*
13. *https://www.poemhunter.com/poem/and-you-call-me-colored/*
14. *Chinnaswamy, Mudnakudu. before it rains again, p.89.*
15. *Ibid., p.78.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 92–100

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Education for Social Transformation A Study of Ambedkar's Perspective

Dr. Ujjwala Sadaphal
Associate Professor, Swavalambi College of Education, Wardha (M.S.)
E-mail: ujjwala.sadaphal@gmail.com Mob. 7875087903

Abstract

Society is a creation and a significant achievement of man. But when social stratification becomes rigid it degenerates into unjust practices as was experienced by Ambedkar in Indian society. Ambedkar shook the very roots of social structure by challenging the basic notion of the caste system in India. The paper studies Dr. B. R. Ambedkars' perspective on education for social transformation and its relevance in light of the National Education Policy 2020. The historical method is used for this qualitative research. Data is collected from primary and secondary sources. Data is organized into themes and further analyzed to conclude. The findings are discussed in terms of Ambedkar's Vision of Society, his Educational perspective, the interrelatedness of Philosophy, Society, and Education, Ambedkar's Perspective on education for Social Transformation, and finally its relevance in light of the National Educational Policy 2020.

Key Words : Ambedkar's perspective on Education, Social Transformation, and National Education Policy 2020

Introduction

Society is a creation and a significant achievement of man. His psychological and mental faculties helped him to form societies. Society is a dynamic body that consists of complex relationships, various forces, and factors with common ideals and beliefs, mutual understanding, and a common frame of reference. Another

important aspect of society is that societies have stratified structures. Categorization of people by social strata occurs in all societies. But when this stratification becomes rigid it degenerates into many unjust practices. Stratification leads to an unequal distribution of rights, privileges, duties, responsibilities, values, and social power among the members of society.

The word transformation means a complete change or permanent improvement in something (Cambridge Dictionary, 2022)[1]. Thus when used in the context of society, it refers to change in society. Social transformation is a comprehensive concept including ideas represented by terms like evolution, progress, and change, and terms like development, modernization, or revolution (eGyanKosh, 2017)[2]. Since the primitive stages, human societies are changing and evolving. These changes were in both, positive and negative ways. When change is positive, it becomes an evolution or transformation. It affects every aspect of human life including social, political, economic, and educational aspects. Transformation works at both, individual and social levels. At the social level, transformation is brought about mainly by the processes of modernization through economic, scientific, and technological development or by the process of revolution through social revolutions, wars, political changes, and revolts. At individual levels, social transformation is observed when social status, lifestyle, and economic conditions are altered. Here individual moves from ascribed status to an achieved status (World Atlas, 2018)[3]. This upward movement may be the result of education, skills, abilities, and enterprising. Social transformation tries to control social stratification, curb social inequalities and remove injustice.

Indian society was marked by rigid social stratification till the nineteenth century. Social reformation movements of the later nineteenth century brought a little change in the scenario. But this change was not so impactful till Dr. Babasaheb Ambedkar shook the very roots of social structure by challenging the basic notion of the caste system in India. His works, writings, and speeches kindle the fire of revolution among fellow Indians and brought about a surge in social transformation. This paper is an attempt to discuss the social transformation envisioned by Dr. B. R. Ambedkar from an educational perspective.

Objectives

The objectives of the study are as follows

1) To study Dr. B. R. Ambedkars' vision of society
2) To study Dr. B. R. Ambedkars' perspective on education for social transformation.
3) To examine the relevance of Dr. B. R. Ambedkars' views on social transformation through Education in light of National Education Policy 2020

Research Methodology

The historical method is used as the prime mode of this qualitative research for studying historical facts, works, and writings of Dr. B. R. Ambedkar regarding education and social transformation. These facts works and writings are analyzed and described with rational thinking. The present study is based on the educational and social philosophy of Dr. B. R. Ambedkar and its relevance in light of the National Educational Policy 2020. The method of study is mainly descriptive and reflective based on intensive library research of related literature presented in different forms. The Information is gathered from both primary and secondary sources of Data viz. from writings, records of speeches, the works of Dr. B. R. Ambedkar, and works of other writers on Ambedkar. The researcher collected data by extensively reading primary and secondary sources. The researcher conducted deep and reflective reading after the initial extensive reading. The reading was focused on the educational and social perspectives of Dr. B. R. Ambedkar. The collected information is organized under two heads educational conceptions and social philosophy. These two categories were further divided into subcategories to make the data more precise and purposeful. The data is interpreted in light of the objectives of the study.

Findings and Discussions

The major findings of the research are discussed in terms of Ambedkar's Vision of Society, his educational views, the interrelatedness of Philosophy, Society, and education in Ambedkar's Perspective, Education for social transformation, and finally its relevance in light of the National Education Policy 2020.

1) Ambedkar's Vision of Society

Ambedkar views an ideal society as a society where there is justice, equality, and dignity for the individual. Individual members of the society should have a feeling of belongingness towards their society. So he opined that society should make the individual share the associated activity and thus make a society of them. And such a society can be formed only if it is based on the three principles of Liberty, Equality, and Fraternity. He expects that society must protect the best and must protect the weak. It should safeguard the individuals and ensure their growth. In his vision of society, he expects every human being should have the liberty to associate with other members. Individuals should be free to marry among themselves, dine together, and work together in all spheres of life (Ambedkar, 1936)[4]. There should be a common social code to be followed by all. In this way, a united and egalitarian society will be formed. Thus we can see his vision of society is all-inclusive and free from discrimination and injustice. In a radio speech, (Ambedkar 1956)[5]**.** Ambedkar said that he preferred Buddhism for its three principles viz. '*Prajnya'* means Understanding, '*Karuna*' denotes Empathy and '*Samata*' implies equality. With

these three principles, human life becomes happy and worthy. His social views try to maintain a delicate balance between material advancement and spiritual enlightenment in creating an ideal society.

This vision springs from the desire to transform the harsh realities of those times in India. The rigid caste system had gripped society. Ambedkar had commented that every society in the world had lower and socially depressed classes. But the conditions of untouchables in India were entirely different and unique (Ambedkar 1943, P12)[6]. No parallel can be found elsewhere. They were despised and denied all the opportunities to rise.

According to Ambedkar (1987)[7], the caste system with its hierarchal structure has resulted in mass illiteracy and social exclusion, which had denied equality to people from oppressed groups. It's a historical denial of basic human rights for these castes. They were deprived of civil, cultural, religious, economic, and educational rights. This social system was very rigid and imposed severely. The social code was practiced rigorously and those who refused to follow were ostracized from social and economic activities. The practice of untouchability had prevented them from participating in social, cultural, religious, economic, and educational activities. He observed that the caste system is anti-democratic and results in isolation. Caste groups become anti-social and exhibit hatred towards each other. As the caste system is a great hindrance to economic and social development, he advocated the annihilation of caste and promoted social transformation.

2) **Ambedkar on Education**

Ambedkar viewed education as a powerful weapon to liberate people from ignorance and help them fight against injustice. So to him, education is the one that makes an individual fearless, it creates awareness for his rights and inspires him to struggle for his rights. The aim of education is to develop character and cultivate mind and humility. It should inculcate the values of liberty, equality, fraternity, and justice among learners. Education must develop logical thinking, reasoning, and a scientific attitude. He advocated the pursuance of knowledge for the betterment of the individual and the betterment of others. So to achieve the educational aim of modernization, character formation and self–realization; the curriculum should include subjects like science and technology, modern languages, history, geography, and civic education (Balu, 2020)[8].

Ambedkar emphasized a discrimination-free teaching-learning environment. Teaching-learning must be interactive where all students can actively participate in the education process. He was against the imposed discipline and advocated self-discipline. He preferred education in the mother tongue in the early stages. Ambedkar envisioned an important role of the teacher in the education process. He expects a

teacher to be knowledgeable, a good orator, and aware of social realities. A Teacher should treat all students equally and should provide equal opportunities to all the students. Students in turn should be ready and curious to learn and must be confident, self-helped, and cultured. To him, learning is the most sacred thing in the world and hence expects students to be lifelong learners. Education is not merely an acquisition of knowledge but proper utilization of it too (Prakash, 2019)[9].

In India, a large section of people was denied the right to education for a long time due to social inequality and the prevailing caste system. But Ambedkar views education as the birthright of every individual and nobody can be denied his right to get an education. So he opined that a democratic country like India should give the right to education to all its citizens (Mehandiratt, 2020)[10]. Everyone should get an education without discrimination. Education should cater to the needs of individuals and help in fulfilling the aspirations of society. Education is very important for the progress of any nation. A country remains backward and non-progressive when people become indifferent to the acquisition and creation of knowledge and get engrossed in material welfare. Thus education is of prime importance from individual, social, political, and economic perspectives. He envisioned an important role of education for social transformation in free India.

3) The interrelatedness of Philosophy, Society, and Education in Ambedkar's Perspective

In the twentieth century, Dr. B. R. Ambedkar emerged as a major social, political and educational philosopher. His philosophy is based on humanism and democratic ideals. It is a search for the theories of the social reconstruction of Indian society. His philosophy has provided a theoretical base. He views education as the application of these theories. His social philosophy and educational philosophy are two sides of the same coin. They are interdependent and influence one another. Many scholars have studied his philosophy and have drawn diverse interpretations. But most of them agree with the fact that Ambedkar's philosophy tries to answer issues related to social justice and equality.

Ambedkar had declined the claims of western influences on his philosophical views. He noted that his philosophy is derived from the teachings of the Buddha. It is rooted in religion and is not based on theories of political science (Ambedkar, 1956)[11]. It is based on Buddhism and Humanism, but at the same time, it delves into the social realm and advocates social justice and equality. His social philosophy has emerged from the intense social urge for reformation as a result of bitter life experiences. It indicates the relentless struggle for the emancipation of the deprived castes. Social amelioration, political enlightenment, and spiritual awakening are the core tenets of his philosophical views (Leeta, 2003)[12]. All these views are reflected

in his educational perspective too. He has emphasized the role of education in attaining social justice and equality in India.

Philosophy provides an ideology for life and education becomes the means to achieve these aims. The education process is guided by philosophy but at the same time, it is also affected by social forces. From Ambedkar's perspective philosophy of life essentially has social ideals which can be achieved through education. For him, thus Philosophy, society, and education are interrelated, exerting influence on each other.

4) Education for Social Transformation

According to Ambedkar democratic values of liberty, equality, and fraternity are the basis of an ideal society (Leeta, 2003)[13]. And when these values are inculcated as a way of life, it will result in social transformation. He has emphasized democracy in society. He opined that democracy and strengthening the roots of democracy in society can bring about social transformation. Social reconstructions based on democratic values of equality, justice, freedom, and fraternity can help in removing social problems.

Education can cultivate democratic values in society and thus can bring about social transformation. Education can be instrumental in liberating societies from rigid caste structures and bringing about a new social order. Ambedkar recognized the historical exclusion and isolation as the reason for the economic and educational backwardness of the deprived classes. Deprived castes and untouchables were denied the right to education. This was the cruelest part of the caste system. As a result of this denial, these people were not even aware of the injustice inflicted upon them. The group had accepted servitude as their fate and had no way out (Sabharwal, 2020)[14].

So ensuring access to equal rights and political and educational opportunities can bring social equality. 'Equality before law' is essential to eradicate the caste system and bring justice. He expects the state to take proactive measures like legal abolition of untouchability, protection against discrimination, violence, and caste-based atrocities. States should protect their interest by ensuring fair access to all social, economic, and educational spheres. For creating new social order based on justice, equality and fraternity there should be a change in attitude and feelings towards fellow people. Ambedkar opined that education is one such means to achieve this end and can be instrumental in building and reconstructing societal structures thereby facilitating social transformation. A society based on knowledge and reasoning can only amend the evils of the caste system. Hence he insisted on providing education to all for bringing in social transformation.

Ambedkar emphasized the value of fraternity. Fraternity is a sense of common brotherhood. The feeling of oneness among all Indians. It is the respect and reverence towards fellow citizens. He opined that fraternity can give unity and solidarity to social life and hence education should nurture this value among students. It is through education that fraternity among caste groups in India can be fostered.

Ambedkar in an assembly debate advocated for making our democracy a 'social democracy'. (Ambedkar, 1948 p. 64)[15]. Social democracy is based on principles of liberty, equality, and fraternity. And these three principles are a union of the trinity and should be considered collectively. He expects that individuals should treat each other as equals, provide the same liberty that they would like to have, and should develop fellow feelings for others. Then only the vision of social democracy will be realized. He expected education to play a role in bringing new social order based on the principles of the trinity. Democratic attitude can be developed through education. People will adopt the democratic way of life once they are trained for associated living, rational thinking, and respecting the dignity of others. Education can help people to carve their political and social destinies.

Ambedkar was of the view that the only remedy for the uplift of the downtrodden was to help them perceive religious, social, and political contradictions in society through education (Suman & Ratne, 2018)[16]. And hence educating them and uniting them in the struggle against oppression can lead to social transformation. Education can be a powerful weapon of social change. It can help people in pruning the useless and outdated social traditions and focus on preserving and developing healthy and useful social practices.

5) Relevance in light of National Education Policy 2020

National Education Policy 2020.[17] acknowledges that Education is fundamental for achieving full human potential. It can help in developing an equitable and just society. Universal high–quality education is needed for developing and taping the talents among individuals for social good. The policy focuses on ensuring inclusive and equitable quality education and lifelong learning opportunities for all. It accepts that access to quality education is a basic right of every child. Considering the status of historically marginalized, disadvantaged, and underrepresented groups, the policy wants to ensure access to education for such groups by providing quality educational facilities near their residence. It desires to provide targeted opportunities to enter and excel in the education system. It aims to reach a goal of the highest quality education for all regardless of social or economic background. These are on the lines of Ambedkar's vision of social democracy to be realized through education.

The policy is based on the principle that education should not only develop cognitive capacities but also social, ethical, and emotional capacities. The policy

identifies education as a great leveler and a tool for social mobility, inclusion, and equality. The purpose of education is to develop a good human being capable of rational thought and action. It should instill compassion, empathy, courage, resilience, and scientific temper along with value systems. Thus through education the aim of building an equitable, inclusive, and plural society as envisaged in the constitution by Dr. B. R. Ambedkar can be achieved.

The National Education Policy 2020[18] has a bearing on Ambedkar's vision of society and recognizes education as a means of social transformation. Ambedkar being the architect of the Indian constitution has translated his philosophy of social and political democratic ideals through our constitution. The fundamental principles, aims and means indicated in National Education Policy 2020[19] clearly show parallels' with Ambedkar's perspective on education. The policy upholds the democratic and socialistic principles laid down in the constitution.

Concluding Remarks

The study indicates that Ambedkar envisioned education as a powerful means for social transformation. He insisted that everyone should get education opportunities and that the government must take proactive steps in ensuring education for all. He expected an education system based on the socialist model to serve all. National Education Policy 202011 is aimed at translating these constitutional principles into practice by remodeling the education system in India. The policy springs up from the core of Ambedkar's perspective of education as a means of social transformation.

A society based on reason and not on traditions can ensure justice to its members. Education enlightens people, develops reasoning and critical thinking, and facilitates the foundation for an egalitarian society. The liberation of the oppressed class is possible only through education. Educated minds can assert their rights and can take decisions to stand for them. For Ambedkar, education can open up the vista of a just and equal society. Social transformation is possible only through the education of all.

❐

***References**:*

1. *Cambridge Dictionary (2022). Transformation. Retrieved from https://dictionary.cambridge.org/dictionary/english/transformation on 01/05/2022*
2. *Egyankosh (2017). Social Transformation and Problems Unit – 1. Retrieved from https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/18982/1/Unit-1.pdf on 02/05/2022*
3. *Worldatlas (2018). Social Transformation. Retrieved from https://www.worldatlas.com/articles/what-is-social-transformation.html on 01/05/2022*
4. *Ambedkar, B. R. (1936). Annihilation of Caste. In V. Moon (ed.) (1979), Dr. Babasaheb Ambedkar writings and speeches (Vol. 1, pp. 23-96). New Delhi: Dr. Ambedkar Foundation, Government of India.*

5. *Ambedkar B. R. (1956, May). 'Why do I like Buddhism? Record of Radio Talk, B.B.C. London broadcasted in May 1956. Cited by Leeta, F. A. (2003). An In-depth Educational Study of the Life and Work of Dr. Babasaheb Ambedkar with Special Reference to Philosophy and Sociology of Education. Shodhganga. Retrieved from https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/143110# on 02/05/2022*
6. *Ambedkar, B. R. (1943). Emancipation and the Untouchable. Pp. 12. Bombay; Thacker and Company*
7. *Ambedkar, B. R. (1987). The Hindu social order: Its essential features. In V. Moon & H. Narake (Eds.) (1987), Dr. Babasaheb Ambedkar writings and speeches (Vol. 3, pp. 95–115). New Delhi: Dr. Ambedkar Foundation, Government of India.*
8. *Balu, A. (2020, February). Educational Philosophy and Thoughts of Dr.Babasaheb Ambedkar. ResearchGate. February 2020. Retrieved from https://www.researchgate.net/publication/ 339457577_Educational_Philosophy_and_Thoughts_of_DrBabasaheb_Ambedkar on 02/05/2022*
9. *Prakash, Aditya (2019). B R Ambedkar's Philosophy and its relevance to Modern Indian Education System Shodhganga. Retrieved from https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/280281 on 02/05/2022*
10. *Mehandiratt, Kuldeep (2020). Educational Philosophy of Dr. Bhimrao Ramji Ambedkar. Rashtriyashiksha April 13, 2020. Retrieved from https://rashtriyashiksha.com/educational-philosophy-of-dr-bhimrao-ramji-ambedkar-14-april-birthday-special/ on 10/05/2022*
11. *Ambedkar B. R. (1956, May). 'Why do I like Buddhism? Record of Radio Talk, B.B.C. London broadcasted in May 1956. Cited by Leeta, F. A. (2003). An In-depth Educational Study of the Life and Work of Dr. Babasaheb Ambedkar with Special Reference to Philosophy and Sociology of Education. Shodhganga. Retrieved from https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/143110# on 02/05/2022*
12. *Leeta, F. A. (2003). An In-depth Educational Study of the Life and Work of Dr. Babasaheb Ambedkar with Special Reference to Philosophy and Sociology of Education. Shodhganga. Retrieved from https://shodhganga.inflibnet.ac.in/handle/10603/143110# on 02/05/2022*
13. *Ibid.*
14. *Sabharwal N. S. (2020). Caste relations in Student Diversity: Thinking through Dr. Ambedkar's perspective towards a Civic Learning Approach in Higher Education. The International Education Journal: Comparative Perspectives Vol. 19, No 1, 2020 Retrieved from http://iejcomparative.org on 01/05/2022*
15. *Ambedkar, B.R. (1948). Draft Constitution – Clause-wise Discussion: 15th November 1948 to 8th January 1949. In Vasant Moon (ed.) (1994), Dr. Babasaheb Ambedkar: Writings and Speeches, (Vol. 13, pp 49-1219). New Delhi: Dr. Ambedkar Foundation, Government of India.*
16. *Suman Kumar and Ratne, R. V. (2018, March 1). Dr. B.R. Ambedkar's Vision on the Education and Its Relevance. International Journal of Creative Research Thoughts (IJCRT) Volume 6, Issue 1 March 2018 Retrieved from*
17. *Ministry of Human Resource Development Government of India (n. d.). National Education Policy 2020 Retrieved from https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/ NEP_Final_English_0.pdf on 14/04/2022*
18. *Ibid*
19. *Ibid*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 101–105

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

A STUDY ON PERSONAL FINANCIAL PLANNING OF SALARIED EMPLOYEES AT NASHIK CITY

Dr. Nutan Nana Thoke
Assistant Professor, Navjeevan Institute of Management, Nashik (M.H.)
Email id: nutan.sai@gmail.com Mob. : +91 9823555580

Abstract

In today's world everyone wants to have a financially secure future, but life is full of competing priorities out of which some of them are planned like buying a house, children education, wedding, retirement etc. But when an unexpected event occurs, it can drain one's finances, especially if a person is salaried with a constant month-end financial crunch. In such a situation, a financial plan helps to stay on track and puts person back in control, ready to face whatever life throws at him. Financial Planning is the process of meeting life goals through the proper management of finances. Financial planning is a process that a person goes through to find out where they are now in terms of finance, determine where they want to be in the future, and what they are going to do to reach there. Step by step approach to meet one's life goals can be done by personal financial planning. Various aspects one keeps in mind while doing financial planning like time horizon to achieve his life goals, identifying risk tolerance, liquidity needed, and the inflation. Thus this paper is an effort to study personal financial planning of salaried individuals in Nashik city.

Keywords : Financial Planning, Saving, Salaried employee, Nashik city

INTRODUCTION

Personal financial planning is an important activity for almost everyone be it a businessman, student, self employed or professional. It provides with a systematic

roadmap for achieving goals without facing any monetary roadblocks. But financial planning is very critical for salaried employee because of limited resources for generating flow of income. There are various investment avenues in the form of financial product which provides the required financial security to the investors based on the risk-return profile of the financial products. Investment preference differs from person to person, as every individual behaves differently while investing. With an expectation of generating high returns over a period of your time and certain levels of risk, individuals invest in several financial products.

Salaried employee have different investment requirement as compared to other professions because they have fixed monthly cash inflow to meet their expenses and save for various life goals. Thus an attempt is made in this paper to study personal financial planning of salaried employee in Nashik city.

OBJECTIVES OF THE STUDY

1) To understand Personal Financial Planning done by salaried employee in Nashik city.
2) To study and understand the saving-investment behavior of the salaried employees in Nashik city
3) To examine how the pandemic like situation influence the investment decision of an individual.
4) To know the awareness about financial planning among the working-class people

RESEARCH METHODOLOGY

The research design has been adopted as a descriptive study based on primary data and for effective and reliable survey, a simple and well-constructed online questionnaire was prepared.

It was impracticable and impossible to study the whole population due to limitations of lockdown and other factors that are indispensable; hence the present study is confined only the area of Nashik city and the sample size is 110 salaried employee using Non Probability technique -convenience sampling method in Nashik city.

Sources of Data:

Primary Data: The primary data for this study has been collected by approaching the salaried employees working in Nashik city through Google form.

Secondary Data: The secondary data are collected from articles published on various websites, Research articles, and journals.

RESULTS AND DISCUSSION

1. Out of 110 respondents 46% of the respondents were from the age group 31- 40 years; this age group is considered stable and careful as they have bigger responsibilities due to increasing expenses in the family, loans etc. It was followed by age group 21-30 years which is 29 % . These were considered to be most active age groups. During this age the career is in growing stage and maximum risk can be taken while investing. Also 22 % of respondents were from the age group 41-50 years, at this age the risk taking capacity of individuals reduces due to family responsibilities. 3% were in the age group 51-60.
2. Out of 110 respondents 72 % were males and 38 % were females.
3. The majority of the respondents falls under the income slab of Rs.15,001-30,000 (43%) per month while 23 % of the respondents are in income slab of up to Rs. 15,000 followed by 22 % under slab of Rs. 30,001-45,000, 9 % into the income slab of Rs. 45,001-60,000 while only 3% respondents are having income above Rs. 60,000.
4. Most of the respondent's occupation was doctors/engineers i.e. 40%, whereas 35% of respondents were from the category of Teachers/Lecturers, while clerical/ others were 25%.
5. Motivators behind saving their income were asked to the respondents. Majority i.e. 60 % of respondents said that "to meet specific purpose in future" they save money. While 20% responded for "to save tax" followed by 10 % each for "to secure their old age" and to meet contingent expenses".
6. It was seen that 67 % the respondents have made investment in fixed deposit, while 69 % respondents have invested in Gold. It is also observed 53 % of the respondents have made investment in government securities like PF, PPF, SKY etc which are considered to be secured Investment Avenue. Only 35% of the people have life insurance, which is very less because most of the respondents prefer to have mediclaim only when it is provided by the company. Investment in equity is preferably made by the young investors. Very few respondents invest in Mutual funds and Post Office deposits.
7. Majority of the respondents i.e 52 %) are neither satisfied nor unsatisfied about their investment. The reason behind it may be unplanned investment or inadequate knowledge about investment instruments. 43 % respondents were satisfied with their investment. Only 5 % of respondents not satisfied with their investment decision.
8. It is observed that most of the respondent'si.e. 68 % are not aware of tax-saving options while doing financial planning.

9. 54 % respondents made withdrawals from their savings account while 46 % respondent chooses provident fund, FD, and pledging gold for withdrawals.
10. 52% of the respondents periodically prepared a household budget that lists expected income and expenditure while 48% respondents does not prepared household budget. This shows that people do not make proper distribution of their income/ salary, sometimes their expenditure become more than income, due to this people unable to save the money in proper proportion.
11. Out of 110 respondents, most of the investment decisions are influenced by self-made decisions i.e 43 %, followed by "taking the advise of spouse/family members" i.e 34% while 20% of respondents take friends/ Colleagues advise. 3 % of respondents take help of financial advisors.
12. Most of the salaried employee's i.e. 70% gets information from their family members and colleagues about the benefits of investment and financial product. While 20 % of information is received by other sources like TV/Newspaper/ Radio. 10 % of respondents' source of information is through agents and advisors.
13. In the situation like pandemic most of the people have faced financial crises. There was various reasons but one of the main reason is people do not have proper financial planning about current cash flows and estimation about future goals. After facing this situation over 90 % of the respondents give opinion that financial planning "is very important in a life". 8% of the respondents think that "it is important" and still "2 % think that financial planning "is averagely important".
14. Insurance policies like mostly life insurance and health insurance as well as PPF seems to be the most popular, as most of the respondents are fully aware about these investment instruments. Whereas, on the contrary, ULIPs, NPS, ELSS and NSC are the least popular tax-saving investment options as there seems to be lack of awareness about these options amongst the salaried employees.

CONCLUSION :

This study aimed at "A Study on Personal Financial Planning of Salaried employees at Nashik City". Based on the study of literature and quantitative findings of survey of salaried employee conclusion of the research are discussed in line with the objectives.

Various aspects of financial planning are identified through literature. Among those few aspects like different investment avenue, financial planning process, satisfaction level, returns on investments etc were studied. It was also observed that situation like pandemic has actually changed a great deal about the ways that people live and work. It was understood that Financial Planning is not a onetime activity infact it should be should be properly divided into short term, medium term

and long term achievement of goal. People need to be educated and informed about Financial Planning and this provides a greater opportunity to financial institutions, banks, insurance companies to educate people.Financial literacy can help to overcome the devastating effects the pandemic has had on the earnings and savings on the better part of the population. To conclude, these are very uncertain times and it is natural to be worried about managing personal finances. Stick with the basics — have an emergency fund in place, spend only on what is absolutely needed, ensure that one must have insurance to protect him and family from any unexpected event and finally, keep investing regularly to build long term savings.

❐

***References**:*

1. *Ming-Ming Lai and Wei-Khong Tan (2009), "An Empirical Analysis of Personal Financial Planning in an Emerging Economy", European Journal of Economics, Finance and Administrative Science, 16, 2009, pp. 99 -111.*
2. *Z. Yun and X. Li, "Investment Planning Factors and Risk Management in Personal Financial Planning," 2010 International Conference on Management and Service Science, Wuhan, 2010, pp. 1-4, doi: 10.1109/ICMSS.2010.5576131.*
3. *BooN, TH, Yee, HS & Ting, HW 2011, 'Financial literacy and personal financial planning in Klang Valley, Malaysia', International Journal of Economics and Management, vol. 5, no. 1, pp. 149-168.*
4. *Randy Billingsley, Lawrence J Gitman, Michel D Joehnk Cengage Learning, 2016, 'Personal Financial Planning'.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 106–115

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

The future of Caste System in India : An Introspection

Dr. Biswanath Sarkar
Assistant Professor,Department of Political Science,
Sree Chaitanya College, Habra,Dist.- North 24 Parganas, West Bengal.
E-Mail ID: biswanaths4@gmail.com Mob. 9830346250

Abstract

The caste system categorizes people into various hierarchical levels, which determine and define their social, religious, and hegemonic standings within the society. The caste system has also maintained a nexus and a sense of community for caste members for more than 2,000 years. A classic example of the caste system is the one found in India, which has existed there for hundreds of years.

The caste system in India was traditionally a graded hierarchy based on a purity-pollution scale; it has undergone many changes over the years. After India's independence, there has been a de-ritualization of caste, and it has moved toward being a community based on affinity or kinship rather than representing a fixed hierarchy. The association of each caste with a distinct occupation has weakened considerably, and inter-caste marriages across different ritual strata, even crossing the Varna boundaries, are not uncommon. In present day society because of industrialization, urbanization, modern education system, modern means of transport and communication, remarkable changes have been experienced in features of caste system, such as occupation, marriage, food, drink, social intercourse etc. But at the same time there are some factors like emergence of political parties, method of election, constitutional provision for S.C., S.T. and other backward classes have gradually encouraged the problem of casteism in India.

So, it is difficult to predict about the future of caste system in India. In this context, I am trying to find out the present position and future of Indian caste system. The aim of this paper is to understand the continuity and the changes in the caste system in India.

Keywords: Cast System, Varna, Jati, Indian Society, Change, Future.

Introduction:

The term 'caste' is not an Indian word. According to the *Concise Oxford English Dictionary* (2005), it is derived from the Portuguese 'casta', meaning 'race, lineage and breed'. The caste system categorizes people into various hierarchical levels, which determine and define their social, religious, and hegemonic standings within the society. The caste system has also maintained a nexus and a sense of community for caste members for more than 2,000 years. A classic example of the caste system is the one found in India, which has existed there for hundreds of years.[1]

Caste is a form of social stratification characterized by endogamy, hereditary transmission of a lifestyle which often includes an occupation, ritual status in a hierarchy, and customary social interaction and exclusion based on cultural notions of purity and pollution.[2] Each caste has its distinctive rituals, attributes and mores, a traditional occupation and a particular position in the local hierarchy of social status. Each caste in every constellation has its own customs, ritual functions and distinct feacher.[3] Its paradigmatic ethnographic example is the division of society into rigid social groups, with roots in ancient history and persisting until today.

Caste is undoubtedly an all-India phenomenon in the sense that there are everywhere hereditary, endogamous group which from a hierarchy, and that each of these groups has a traditional association with one or two occupations.[4] At present, everywhere there are innumerable castes (Hindu aspects of caste is 'varna'), sub-castes or 'jatis' around which the social system of India is organized.

The caste system was undemocratic and authoritarian in the extreme. "It (caste) has given an aristocracy of birth not of merit. It has rendered the free adaptation of individual talent and capacity to particular social work, for which it is best fitted, impossible. It has stifled initiative, self-confidence and the spirit of enterprise. It prevents the growth of a nationality and the development of a democratic state. It has created the untouchable problem."[5]

Research Methodology & Sources of Data:

In this chapter, I attempt to explain and try to find out the present position and future of the Indian caste system. The aim of this article is to understand the continuity and the changes in the caste system in India. For this article, I have used document study method. The nature of data is secondary and the secondary data have been collected from relevant books, articles and internet.

Indian Caste System:

India's caste system is among the world's oldest forms of surviving social stratification. The system which divides Hindus into rigid hierarchical groups based on their karma (work) and dharma (the Hindi word for religion, but here it means duty) is generally accepted to be more than 3,000 years old.[6]

The traditional view of caste system in India is largely associated with the rituals and practices of Hindus, wherein social stratification is explained and justified in terms of purity and pollution. The concepts of purity and pollution are complex, but in general are interpreted in terms of deeds, occupation, language, dress patterns, and food habits. The caste system is an ancient institution with its origin in religious ideology? the social, economic, and political organization of the village? and rituals and traditions that evolved over centuries.[7] Indians use two terms, 'varna' and 'jati', to describe the caste system. The religious perspectives explain that according to the Rig-Veda, which is ancient Hindu book, the primal man, Purush (Brahma), destroyed himself to create a human society and the different part of his body created the four different varnas. The Brahmins were from his head, the Kshatriyas from his hands, the Vaishyas from his thighs, and Shudras from his feet. The Varna hierarchy is determined by the descending order of the different organs from which the Varnas were created.[8]

Traditionally, the Brahmins being at the top of the varna system, were engaged in teaching and worship, the Kashatriyas played the pivotal role in warfare and state administration and the Vaishyas used to look after the commercial activities. The Shudras having the lowest rank in caste hierarchy were supposed to serve the members belonging to the three upper castes. The so-called outcastes or untouchables were associated with a variety of 'unclean' jobs.[9] In addition, there is large group consisting of outcasts, or untouchables, which is outside the boundaries of the varna system even though it is an integral part of the Hindu religious customs, traditions, and practices. The untouchables are also called Harijans, a term coined by Gandhi that means God's people. The preferred term of self-reference is 'Dalits', which means oppressed people.

On the other hand, the biological aspects claim that all existing things inherit one of three categories of qualities. Varna means different shades of texture or colour and represents mental temper. There are three gunas: Sattva, Rajas and Tamas. Sattva is white, Rajas is red, and Tamas is black. These in combination of various proportions constitute the group or class of people all over the world with temperamental differences. According to this theory, the Brahmans usually inherit the Sattva qualities. The Kshatriyas and Vaishyas inherit the Rajas qualities and the Shudras inherit the Tamas qualities.[10]

Historically, however, the Caste System began in India after the Aryans invaded and established their own rules for governing the society around 1500 B.C. The Aryans came from southern Europe and northern Asia with fair skin that contrasted with the indigenous natives in India. When they arrived, their main contact was with the Dravidians. The Aryans completely disregarded their local cultures

and began conquering regions all over north India. The Aryans did not permit marriages between their own people and people of the cultures they conquered.

The caste system is usually used to describe the whole varna-jati system where varna is a design to organize society, and jati refers to communities and sub-communities often identified with their respective job functions. Varna and Jati have both been described as caste. They are not unrelated to each other but they are not the same. The concept of Varnas has been elaborated in India among the Hindus for at least 2000 years. It is extremely associated with the Hindu religious communities. An Indian context, an individual and a group can both fall within Varna and Jati appellations. It seems that the terms 'caste' was employed to denote varna to begin with and its reference was carried over to jati as well. With the advancement of the reason and rationality, varna and jati appellations were employed differentially to denote varna with ritual connotations of class and jati with secular connotations of ethnicity.[11] Literally (in Sanskrit) varna means colour and jati means birth. There are four (or five) varnas but thousands of jatis. In practice, however, there have always been many subdivisions of these castes.

Challenges against Caste System in India:

The caste system resulted in lot of evils because of its rigid rules. Society was divided into strict compartments and those belonging to higher castes exploited the lower-caste people. Against the backdrop of caste hierarchy, there was virtually no scope for individuals to move from one caste to another. This rigidity affected all the sections of society. A Brahmin with the qualities of a warrior could not take up the profession of a Kshatriya and vice versa. Traditionally, lower-castes or untouchables were suffering from several disabilities or problems. These problems are covered by social concepts of purity and pollutions, economic opportunity, religious customs, public disabilities, deprived of getting education etc.

For this reason, Indian caste system has faced different types of challenges in pre-British period and post-British period. Many social reformers raised their voice against caste system in India due to several reasons. These are:

i. Formations of pro-equality religions such as Buddhism and Jainism: Quite early in the history of India, in the sixth century BC, both Buddhism and Jainism rejected Brahmanical claims to supremacy over the others. After the emergence of Buddhism and Jainism there have been attempts to abolish the caste system.

ii. Bhakti Movement: While Jainism and Buddhism both started out as protest sects non-theistic in character and rejecting brahminical claims to supremacy, the Bhakti movement grew from within the Hindu fold, and was characterised by a strong anti- hierarchical and anti-ritualistic stand, using local language as against

Sanskrit, and was mono- theistic in orientation. It surfaced first in the Tamil country during the seventh to tenth centuries AD encompassing both Shiva and Vishnu in their various manifestations. The Bhakti saints came from all the castes and both the sexes. The Bhakti movement of medieval India was really pan-Indian attracting a large number of men and women from the lower orders and it even crossed the religious divide between Hindus and Muslims as with Kabir and, much later, Shirdi Sai Baba. But the tragedy or the irony of the Bhakti Movement was that it not only failed to make a dent on caste hierarchy but actually ended up by becoming a caste, or worse, a series of castes, palely imitating the master system of jati.[12]

iii. British Rule: The economic foundations of the caste were shattered by the new economic forces and forms introduced into India as a result of the British conquest. These were some of the principal factors which undermined the vocational basis of the castes and exclusive habits of their members. These factors are, the destruction of the village autarchy, the creation of private property in land, the steady industrialization of the country which evolved new vocations and created modern cities which were the solvents of a number of caste taboos and restrictions, the spared of communication network, new legal system, new social formation, impact of modern education, class struggles, political movements and social reforms movements etc. In 1833 the British declared that no person on account of "his religion, place of birth, descent, and colour" would be disabled from holding any office or employment.

iv. Middle Classes: Linked to all this is the phenomenon of the middle classes of urban India. While the middle class is primarily urban, and it is dominated largely by the upper, and dominant castes, and elite sections of minorities and ethnic groups, all sections of Indian society are represented within it, thanks to the spread of education, and massive affirmative action policies by the state. There are different levels within the middle class, but once members of any caste group reach even the lower levels, they aspire to and work for the higher levels. Thanks to the fact that dominant landed castes are represented in politics, bureaucracy and other professions, the middle class has reached the rural hinterland. The urge to become part of the middle class is now widespread, cutting across religion, language, and caste.[13]

v. Bhim Rao Ambedkar devoted his entire life in fighting against caste tyranny. He organised the All India Depressed Classes Federation for the purpose. Dr. Ambedkar opened many schools and colleges for the benefit of backward and lower classes. Numerous Satyagraha movements were organised all over India by the depressed castes under the leadership of Dr. Ambedkar against the ban of their entry into temples and other such restrictions.

vi. Great movement against caste system was started by Mahatma Ghandi. Mahatma Gandhi kept the abolition of untouchability in the forefront of his public activities. He adopted a Harijan girl as his daughter. He lived among the untouchables and named them Harijans (children of God) and found 'All India Harijan Sangh' in 1932 for promoting their welfare on many occasions.

vii. The modern education proved to be useful for the backward classes. As education and awakening spread, the lower castes themselves began to stir. They became conscious of their basic human rights and began to rise in defence of their rights. They gradually built up a powerful movement against the traditional oppression by the higher castes.

vii. International movements led by organizations such as United Nations (for example, Human rights declarations, 1948).

viii. Laws issued by the Constitution of India: After India became an independent nation in 1947; its new Constitution of 1950 proclaimed the principle of equality to all citizens irrespective of caste differences and abolished the practice of untouchability. The constitution also established affirmative action programs to ensure that the scheduled castes would have access to higher education and better jobs. Because of these programs, there has been a marked improvement in the status of the scheduled castes.

Why does the caste system persist?

In the 21st century, changes in social, political and economic spheres would, it turns, be reflected in the caste and varna or jati status. Changes in the caste status of individuals or the movement of castes from one varna status to another, did not destroy the caste system, sometimes it is strengthened the system rather than weakened it. A system which was so rigid that it could not permit or take note of a changed and changing reality had to go sooner or later. It is a fallacy to think that the caste system in India has been totally rigid. It has survived so long because of its flexibility. Of course, crises of adjustment have risen at different times but cast system is there or "we live in times of caste".[14]

The sociologist Andre Beteille has argued that, while varna mainly played the role of caste in classical Hindu literature, it is jati that plays that role in present times.[15] So the caste system in India is too complex than it appears on the surface and caste was never immutable given in Indian society. It was always in the process of formation and change. In spite of many socio-political-economic changes caste still remain a very important factor in contemporary Indian society and politics.[16] For example, when the policy of reservation was first enunciated in India, its ultimate goal was to remove caste-based discrimination completely and indeed, the caste

system itself.

Different types of factors opposed the caste system, but the main question is that how did it survive for so long? Simply because, the caste system performed certain functions that were valued by the society. These functions are: (i) A System of Checks and Balances: The varna system was not just a division of labour. It was also a system of checks and balances such that there is no concentration of power in any varna or class. Members of a caste rely on each other for support. (ii) Division of Labour: Easy acquisition of skills and knowledge and each caste (varna) performs a specific service. It has provided every individual with a fixed social environment. Each caste has an occupation(s) and contributes to the good of the whole society. (iii) Decentralised Democracy – Lobby Group: When the varnas transformed themselves into ethnic endogamous groups based on birth, they developed their own caste/ jati panchayats to decide their own affairs, reducing their dependence on the king. The caste panchayats settled disputes within the caste in an inexpensive and prompt way. They also imparted tremendous social stability. (iv) Ecological Role: There is also an ecological dimension to the caste system. The caste system performed an important function of reducing competition for and avoiding overexploitation of natural resources (Gadgil 1938: 282). Only fishermen caste could go for fishing, and their caste panchayats evolved rules for sustainable exploitation of fisheries. On the other hand, the caste system also functioned in a way so as to control the growth of population by creating barriers for marriage. It is indirectly related to environmental protection. (v) Security of Livelihood and Employment: An important feature of caste system was its localised system of production based on jatiwise division of labour for meeting local needs, rather than the needs of the larger market.[17] (vi) It develops class consciousness breeding class struggle. It has created an efficient organisation of Hindu society without giving change to class frictions and factions. It has the best device to organise within one society, people of different castes with different cultural level.[18]

Indian caste system has faced with many challenges, changes and so many merits are there but demerits of caste far outweigh the merits. Nevertheless, the caste is seen in everyday life in the present-day India.

Future of Caste System:

It is presently true that the improvement of communication, the spread of education, a host of governmental policies favouring the weaker sections, political mobilisation of the people, the many technological changes, inter-caste marriages, food habits, occupational distinctions, law of the Karma, untouchability etc., based on the caste system are becoming weaker. In addition to the technological and institutional changes, new ideas of democracy, equality and individual self-respect

are contributing to altering the nature of social relationships. This is evident in the behaviour of members of the so-called 'lower' castes and Dalits towards the higher. But, at same time, mainly, caste system in India is being encouraged by the method of election and the government protection of backward classes. Actually, it seems more or less definite that there is no possibility of the caste system being eliminated from the Indian society in the near future.

The root of the caste system goes deep in Hindu society and at its base are the important and beneficial principles of division of labour, specialisation in occupation etc. Foreign invaders made their best efforts to wipe out the Hindu religion. In spite of all the efforts of the Muslims and the Christians no appreciable change could be brought in the caste system. It has been definitely affected somewhat by the influence of Western education and culture and its form has undergone a vast change. There is no room for doubt that this form of caste system will change further in future, it may even change beyond recognition. It will also be influenced by the development of the sense of democracy and nationalism, industrial progress and by new political and economic movements.[19]

It is difficult to predict the future of the caste system because, despite recent opposition, it has demonstrated an ability to survive for a very long period of time. In the short term, at least in India, the caste system will continue to exercise its weakened hold on the life of most Indians in one form or another. In the long run, however, with the emphasis on a secular state, economic and educational improvement of the lower castes, the process of urbanization and globalization, increased opportunities for economic mobility, and commitment to a democratic form of government, the caste system will lose many of the virulent characteristics currently associated with it.[20] A.R. Desai has argued that, "the tendency, however, had been towards the progressive dissolution of caste. With the further economic development, spread of education, and growth of national and class movements for political freedom and progress, the process of the dissolution of caste was bound to be accelerated even at a geometrical rate. In society as in nature, advance or decline does not occur at a uniform rate. Accumulating anti-caste consciousness of the people was sure to burst into large-scale practical anti-caste actions even in the matter of marriage. With the disappearance of endogamy, its last formidable pillar, the edifice of caste would collapse.''[21]

But we agree with G.S. Ghurye (*Cast and Class in India,* 1950), as he observes that, "there is no fear of the extinction of the caste system in the near future."[22] In other words, we can say 'Caste is dead, long live Caste'.

The recent past few incidences of caste atrocities in India gives us a clear picture that it is very difficult to root out cast system from a society like us. Such as,

Rohith Vemula suicide (17 January, 2016) case. This suicide sparked protests and outrage from across India and gained widespread media attention as an alleged case of discrimination against Dalits and low status caste in India, in which elite educational institutions have been purportedly seen as hotbeds of caste-based discrimination against students belonging to lower caste. Another most recent remarkable, shocking case of the casteist mentality prevalent in our society, some government officials in Uttar Pradesh allegedly asked members of a Dalit community to take a bath with soaps and shampoos and use scents before meeting chief minister Yogi Adityanath (Indiatimes, May 26, 2017). In these incidents reflective of the prevailing mindset of the people in the society today.

Conclusion:

Caste system will not be easily eradicated from India. The caste system is still a vital force in Indian life. It is still the recognized social organization for orthodox Hinduism. In the period since the mid to late 1980s there has been a gradual re-emergence of 'caste politics' in public discourse. Factors responsible for the 're-emergence' are- erosion of the Nehruvian secular-nationalist state, implementation of the famous Mandal Commission Report (1990), the Dalit upsurge (Dalit Capitalism), backward castes reservation bill (1996), 'Mandal II' and the electoral calculus, etc. In this context, it is important to note that recent upsurge of lower-caste struggle and their changing position is an extremely complex affair that has a dynamic that is specific to the lived experience of the different caste groups.[23]

On this note, we can genuinely hope that the national forces at work in India would integrate her people with all diversity and different identities. At the same time, dominant and deterministic views on caste system help us very little to grasp the ground reality of how social interaction between different communities takes place. Caste system in India cannot be regarded simply as a 'structure' to understand the social reality. How disjunction and intermingling happen in the same process that is something we need to understand when we discuss about caste system in India.

❒

***References**:*

1. *Sonnad, Subhash R. (2003). "Caste", In Karen Christensen & David Levinson (Eds.), Encyclopedia of Community: From the Village to the Virtual World, Thousand Oaks: SAGE Publications, Inc., p.116.*
2. *"Caste", Wikipedia, the free encyclopedia, Retrieved from https://en.wikipedia.org/wiki/Caste. (Dated: 20.10.2016).*
3. *Basu Ray Chaudhury, Sabyasachi. (2001). "Caste and Indian Politics", In Rakhahari Chatterji (Ed.), Politics India: The State-Society Interface, New Delhi: South Asian Publishers, p. 303.*

4. *Srinivas, M.N. (2005). Social Change in Modern India, New Delhi: Orient Longman Private Limited, Reprinted, p. 3.*
5. *Ghurye, G.S. (2008). Caste and Race in India, Bombay: Popular prakashan Private Limited, Reprinted, p.142.*
6. *"What is the India's caste system?", BBC News: India, 25 February, 2016, Retrieved from http://www.bbc.com/news/world-asia-india-35650616 (Dated: 21.10.2016).*
7. *Diwakar, Rekha. (2011). "Caste System (India)", In Keith Dowding (Ed.), Encyclopaedia of Power, Thousand Oaks: SAGE Publications, Inc., p.91.*
8. *Swapnil, Singh. (2013). "The Caste System: Continuities and Changes", DOI: 10.7763/IPEDR. 2013. V64. 15, p. 70, Retrieved from http://www.ipedr.com/vol64/015-ICHHS2013-W10045.pdf (Dated: 20.10.2016).*
9. *Basu Ray Chaudhury, Sabyasachi. (2001). op. cit., p. 303.*
10. *Swapnil, Singh. (2013)., op. cit., p. 71.*
11. *Trivedi, Harshad R. (1997). "Discussion: Varna and Jati—Some New Thoughts", Sociological Bulletin, New Delhi: Indian Sociological Society, Vol. 46, No. 1, March, p. 139.*
12. *Srinivas, M.N. (2003). "An Obituary on Caste as a System", Economic and Political Weekly, India: Sameeksha Trust, Vol. 38, No. 5, Feb. 1-7, pp. 458-459.*
13. *Ibid., p. 459.*
14. *G.P.D. (2008). "Caste Is Dead, Long Live Caste", Economic and Political Weekly, India: Sameeksha Trust, Vol. 43, No. 4, Jan. 26 - Feb. 1, p. 16.*
15. *Béteille, André. (1996). "Varna and Jati", Sociological Bulletin, New Delhi: Indian Sociological Society, Vol. 45, No. 1, March, p. 15.*
16. *Chattopadhyay, Panchanan. (1998). "Casteism in contemporary Indian Politics and the Gandhian Paradigm", In Sobhanlal Datta Gupta (Ed.), India: Politics and Society Today and Tomorrow, Calcutta: K.P. Bagchi & Company, p.178.*
17. *Nadkarni, M.V. (2003). "Is Caste System Intrinsic to Hinduism? Demolishing a Myth", Economic and Political Weekly, India: Sameeksha Trust, Vol. 38, Issue No. 45, November 8, pp. 4789-4791.*
18. *Jayapalan, N. (2001). Indian Society and Social Institutions, Volume-I, New Delhi: Atlantic Publishers & Distributors, p.50.*
19. *Sharma, Rajendra K., (2004). Indian Society, Institutions and Change, New Delhi: Atlantic Publishers & Distributors, p.70.*
20. *Sonnad, Subhash R. (2003). op. cit., p. 121.*
21. *Desai, A. R. (2000). Social Background of Indian Nationalism, Mumbai: Popular Prakashan Pvt. Ltd, Sixth Edition, p. 244.*
22. *Quoted in Sharma, Rajendra K. (2004). op. cit., p.69.*
23. *Menon, Nivedita., & Nigam, Aditya. (2007). Power and Contestation: India since 1989, Zed Books, London & New York, pp.15-35.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 116–121

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

ANALYTICAL STUDY OF FACTORS IMPACTING TRADITIONAL PURCHASING IN PUNE CITY

Dr. Rita Chaudhari
Asst. Professor at Navjeevan Institute of Management, Nashik
Email ID: rita.gujar@gmail.com Mob.+91 9870626404

Dr. Jayshree.V.Bhalerao
Asst. Professor at Mahatma Gandhi Vidyamandir-Nashik
Email ID: jvb0209@gmail.com

Yateen Nandanwar
Asst. Professor at Navjeevan Institute of Management, Nashik
Email ID: yateen.nanadanwar1988@gmail.com

Abstract

This research paper attempts to study the factors responsible for buying through traditional shops. The growth of retail sector has given birth to a new range of customers who are inclined towards purchasing of different varieties of products through traditional as well as online shopping format. Due to the significant raise in income, spending capacity has increased over the years, and particularly the youth in the age of 21-30 like to shop more. Customer's pleasure has become a crucial point of differentiation in online and traditional shopping where consumers shop for no reason. Nowadays online shopping has emerged as new trend but still consumers prefer traditional shopping irrespective of demographic, product category etc. The working-class people segment has grown since the economic growth and it has benefited middle class and upper middle-class people. The most popular form of shopping includes those that are click- and- mortar which means stores that have both physical entity and on-line presence. The present paper tries to study and analyze profile of traditional respondents and factors impacting decision of buying.

Keywords: Traditional shopping, online shopping, factors impacting, consumer behavior

Introduction

The retail sector has become one of the largest sectors in Indian economy. Indian

retailing business is divided into organized 18%, unorganized 75% and e-tail 7%.[1] With allowance of 100 % FDI in single brand investment in retail sector will further grow. Online retail business is the next generation format which has high potential for growth in the near future. After successful physical stores, retailers are now foraying into the domain of e- retailing; According to Kearney Research, India's retail industry will grow at a slower rate of 9% between 2019 and 2030, from US$ 779 billion in 2019 to US$ 1,407 billion by 2026 and more than US$ 1.8 trillion by 2030.Offline retailers in India, also known as brick and mortar (B&M) retailers, are expected to increase their revenue by Rs. 10,000-12,000 crore (US$ 1.39-2.77 billion) in FY20.[2] With the growth in the retail sector the shoppers enjoy shopping online as well as through traditional method.

Traditional Shopping

It is also called as real time or offline shopping. Traditional shopping involves examination of the products, interpersonal communication and instant satisfaction, but involves high travel costs and search costs, and often has restrictions on shopping hours. A traditional retailer gives the personalized human contact. Shopping with many people is a source of entertainment and enjoyment. Traditional shopping is the process of purchasing and selling products or services physically Person's personal interaction with sales person is required for the product under consideration intention to shop.

It is possible to feel, touch, smell or try the product. If we want a product just now we can buy it from retail store immediately and try and replace immediately if it doesn't fit to our requirements. People like to handle things, especially clothes to feel the texture, its looks after wearing. This paper is an attempt to identify and analyze factors which may have impact for traditional shopping.

Literature review

India is a secular country; there are many people with different religions. The retailers give special discount on different festival occasions and attract consumer accordingly. The Indian consumers are regarded more value-conscious compared to western customers. In recent years there is large shift in consumer behavior among Indian consumers due to increased awareness, improved technology; Lifestyle has also changed due to influenced cultural environment, social environment and also increased in education level.

"Consumer behavior or buyer behavior is defined as the behavior that consumer displays in searching for, purchasing, using, evaluating and disposing of products and services that they expect will satisfy their needs"[3] (Leon Schiffman)

Retailing includes all the activities in selling goods or services directly to final consumers for personal, non-business use. Any organisation selling to final consumers whether it is manufacturer, wholesaler or retailer is doing retailing given by Philip Kotler.[4]

Retailing includes every sale of goods and services to the final consumer, ranging from automobiles to apparel to means at restaurant to movie theatre tickets. Retailing is the final stage in distribution process by Dr.K.Karunakaran[5].

Aron M. Levin, Irwin P. Levin and Joshua A. Weller (2003)[6], explained that traditional shopping rated higher for enjoying the shopping experience, being able to see-touch-handle the product, personal service, no-hassle exchange, and receiving speedy delivery. This emphasizes the importance of the physical aspects of the shopping experience and the strengths of offline retailers in providing these services, enjoyment of the shopping experience shows that online shopping falls short of traditional shopping in creating an enjoyable experience.

Arnold and Reynolds (2003)[7] studied hedonic motives of shopping in malls and stores and found out six attributes: shopping for motivation (Adventure shopping), shopping for socialization, shopping for relaxation, shopping to know latest trend, shopping for pleasure, shopping for getting discounts and low prices. Based on these six attributes five types of shoppers were pointed out as the minimalists, the gatherers, the providers, the enthusiasts and the traditionalist. Females have higher hedonic motivation than males.

Lepkowska-white (2004)[8] explained that, majority of consumers who value the social components of the traditional shopping experience, such as interaction with sales person, window shopping, meeting up with peers and friends or the benefit of obtaining the product right away likes to spend less time engaging in online shopping.

Howard (2007)[9] explains; shopping is a form of pleasure activity and it is a part of entertainment. The changing retail format from unorganized to organized, is influencing retailers to make shopping as fun or pleasure activity for shoppers A study by Ganesh et al.(2007)[10] observed five types of shoppers using store interviews as apathetic shoppers who are not motivated for shopping, enthusiasts shoppers who are highly motivated for shopping, destination shoppers who are having primary motive to obtain new and fashionable products, basic shoppers who come to shop only to buy basic products, bargain seeker who likes to bargain for products. These five types of shoppers were same across all formats of retail-traditional, malls, discount store and specialty stores.

Objectives

1. To know the concept of traditional shopping.
2. To understand profile of traditional shopper
3. To analyze factor preferences for purchases through traditional shopping

Research Methodology

Population and sample size: The population of this study includes 200 traditional buyers in Pune who had experience of traditional shopping.

Data Collection: The current study tries to understand the preferences of factors on shopping intention through traditional way. Relying on existing literature; variables

were considered and offered to respondents in form of a close ended questionnaire to mark their responses ona five point likert scale. Primary data was collected by using a questionnaire from traditional buyers in Pune. Secondary data was collected from articles in journals and books related to traditional shopping. The convenience sampling technique was used to identify people having prior experience of traditional shopping. Analysis is based on the responses obtained and the observation of the researcher.

Survey Instrument: A structured questionnaire was developed by using a five point rating scale ranging from *Not at all important to Extremely important* with regards to factors influencing consumers buying decision.

Statistical Tools: Weighted average method, this method is used to know the preferences for the factors where the weights affected are 1 to 5 from Not at all important to extremely important respectively.

Scope of the study: This research is important to traditional shoppers or retailers as it highlights the factors important in purchasing through traditional shops in context of a city – in this case, Pune city.

Limitation: This study was limited to Pune city. The analysis is based on the response given by respondents.

Data analysis and discussion

a) The Demographic Profile of the Respondents:

The table 1 exhibit the demographic traits of the respondents considered for the purpose of this study. It can be observed from table that majority of respondents were male (55%) while female were 45%; majority of respondents (5%) were unmarried with monthly income less than 5 lack (35%). It is observed that 25 % of respondents having no income belong to student (25%) and housewife category (25%). A majority respondent belongs to age group of 21-30 (40%), who are more energetic and likes to shop.

Table 1 : Demographic profile of respondents

		Number	%
Total		200	100
Age	15-20	30	15
	21-30	80	40
	31-40	60	30
	41 and above	30	15
Gender	Male	110	55
	Female	90	45
Occupation	Student	50	25
	Housewife	50	25
	Working-businessman	40	20
	Self employed		
	Working professional	40	20
	Salaried		
	Retired	20	10

Marital	Married	90	45
	Unmarried	110	55
Annual	Less than 5 lakh	70	35
	Rs 5-10 lakhs	60	30
	Rs 10 lakhs and avove	20	10
	None of the above	50	25

Source : compilation of primary data

The table 1 exhibit the demographic traits of the respondents considered for the purpose of this study. It can be observed from table that majority of respondents were male(55%) while female were 45%; majority of respondents (5%) were unmarried with monthly income less than 5 lakh (35%). It is observed that 25 % of respondents having no income belong to student (25%) and housewife category (25%). A majority respondentbelongs to age group of 21-30 (40%), who are more energetic and likes to shop.

(C) Factor influencing in decision to purchase goods through traditional shops

Table 2

No.		Not at all Important	Less Imp.	Neutral	Important	Extremely Important	Weighted Average	Rank
1.	Secure Payment Process	1	3	11	35	42	4.24	3
2.	Time Saving	2	8	13	30	39	4.04	7
3.	Convenience	2	2	14	46	28	4.04	7
4.	Enjoyment	3	13	24	29	23	3.61	14
5.	Company Reputation (Brand d)	2	4	20	34	32	4	11
6.	Previous experience with shop/ sales person	3	9	20	39	21	3.72	13
7.	Touch and feel before purches	0	5	2	37	48	4.39	1
8.	Save money	2	6	13	29	42	4.12	6
9.	Product variety	3	1	10	47	31	3.84	12
10.	Promotions (Discount/sale)	2	5	19	40	26	3.9	10
11.	Delivery time and charges	1	5	14	43	29	4.02	9
12.	Replecement	0	3	5	41	43	4.35	2
13.	Customer Service	1	2	14	39	36	4.16	4
14.	Clear product Features (product imforma.)	1	1	19	33	37	4.1	5

From the table : 2 it is clear that touch and feel before purchase have the most influencing factor on the purchase of products through traditional shopping with weighted average of 4.39having first rank among all. The second most influencing factor is replacement with weighted average of 4.35. The third influencing factor on traditional shopping is secure payment process with the weighted average of 4.24. Followed by customer service with weighted average of 4.16.The last column shows the ranks for all the factors according to the preferences where it can be observed that money saving, product features, time saving are given less importance than above said factors; Traditional shoppers are not attracted by factors like promotions, delivery time, enjoyment, previous experience with shops or salesperson

Findings and conclusion

This research work was an attempt to explore the factors that may affect the buying through traditional shops in Pune. The results revealed that the people are sticking to traditional shopping with some important factors viz-touch and feel before purchases, replacement, secure payment process, customer service and clear product features. It has been observed that unmarried respondents those who are working professional having less than 5 lakh annual income shop more through traditional shops. Thus it can be conclude that young consumers (21-30 age group) are more contributing in shopping through traditional shops. Therefore traditional shopper must work on factors such as enjoyment, previous experience with shops/salesperson and product variety to boost the sale through traditional shop.

❒

***References**:*

1. *Statista. Distribution of retail industry across India in 2019, with a forecast for 2021, by structure.https://www.statista.com/statistics/719359/india-retail-industry-distribution-by-structure/*
2. *Retail Industry in India by IBEF. https://www.ibef.org/industry/retail-india*
3. *Leon Schiffman(2004) .Consumer behaviour. Prentice Hall of India*
4. *Kotler ,P(2014).Principles of Marketing. New Delhi: Prentice Hall of India*
5. *Dr. K. Kanrunakaran(2008) .Marketing Management, New Delhi: Himalaya publishing house*
6. *Aron M,Kevin,Irwin P.Levin,Joshua A.Weller,(2005).”A Multi-Attribute Analysis of Preferences for Online and Offline shopping: Differences across Products,Consumers and Shopping stages” Journal of Electronic Commerce Research Vol6,No 4,281-290*
7. *Arnold, M.J. and Reynolds, K.E. (2003). Hedonic shopping motivations, Journal of Retailing, 79(2), 77-96*
8. *Lepkowska-White, E., 2004, “Online Store Perceptions: How to Turn Browsers into Buyers”, Journal of Marketing Theory and Practice, 12 (3), 36-48.*
9. *Howard Elizabeth (2007). New shopping centres: Is leisure the answer?. International Journal of Retail and Distribution Management,35(8),661-672.*
10. *Ganesh, J., Kristy, E.R. and Luckett, M.G. (2007). Retail patronage behavior and shopper typologies: a replication and extension using a multi-format, multi-method study. Journal of the Academy of Marketing Science, 35(3) ,369-381*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 122–127

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Evolution towards JUST Money
A tool for inclusive Development

Dr. Devangi Rohan Deore
Associate Professor, Financial Management,
Affiliated to Savitribai Phule Pune University,Nashik
E-mail : dr.devangideore@gmail.com Mob.9763670501

Abstract :

Those who create and issue money direct the policies of government and hold in the hollow of their hands the destiny of the people. Depositors are unaware of where their money which is deposited in large commercial banks gets invested finally. This money remains inaccessible to the lower strata, projects addressing social, local and ecological challenges. This research papers focuses on a model based solution to provide finance to the unbanked or under banked with the use of Just Money : Banking for social justice and development. Just money is concerned with banking focused on the well-being of the clients they serve. The concept is based on Community banking which is quite common in the United States but In India, looks very different in the form of co-operative banks and SHG Finance, both of which suffer from various problems. This paper also discusses the need of Just Banking, developing a model and understanding the issues and challenges to the implementation of this concept in India.

Introduction

Do the depositors in large banks know where exactly their money is being invested ? It may have been invested in a company that makes products which are harmful for the health of its consumers. It may have been invested in companies that pollute the environment or employ child labour. Profit objective of banks surpass the objective of social justice and social development.

The recent crisis of the Financial world have brought forth the evils of lending and investments. The global finance sector today exercises extraordinary power over society. The sector dominates economic policy making, undermines democratic

decision-making, has financialised all sectors of the economy, and has made vast profits, often at the expense of both governments and the productive sector.Yet even as finance capital eludes and defies governments, and as legislators bow to the sector's demands to cut public services in the name of 'austerity', finance has become more, not less, dependent on the state and on taxpayer support. Despite its detachment from the real economy and from state regulation, the global finance sector has succeeded in capturing, effectively looting, and then subordinating governments and their taxpayers to the interests of financiers.[1]

Current banker money is based on what we owe; it is debt-credit money. In our return to Constitutional money, our money belongs to the public and is created by our government as something we own together – an asset. Our money supply becomes a powerful tool that we use for the general welfare as well as for private gain.[2] Sharing ownership of a tool does not mean that we will all be equal in the use we make of it. It means that no individual or private institution has the special privilege and profits of creating our money supply and the considerable power over the rest of us that the power of money creation bestows. It would mean that the people would have power over the end use of that money.

The legal structure of money – its design – matters deeply. In the words attributed to an early banker, "those who create and issue money . . . direct the policies of government and hold in the hollow of their hands the destiny of the people." Money, governance, and the public welfare are intimately connected in modern society.[3] Most obviously, the way political communities make money and allocate credit is an essential vector of material life. It critically shapes economic processes – channeling liquidity, fueling productivity, and influencing distribution. At the same time, those decisions about money and credit define key political structures, locating in particular hands the authority to mobilize public resources, determining opportunities for individuals and industries, and delegating power and privileges to create credit and accumulate profit. This money remains inaccessible to the lower strata, projects addressing social, local and ecological challenges.

Concept of Just Money

Just money is concerned with banking focused on the well-being of the clients they serve. It is the use of finance as a tool to address social and ecological challenges. Though Just Banks may seem unique within the banking sector, the ideas that underpin Just Banking are part of a growing movement to change how businesses - not only banks - operate. These are banks which make **mission-aligned lending** decision.

These Banks will operate as Community Banks which cater to the financial needs of a limited area or community and yet have a motive for profit.

A community bank is a depository or lending institution that primarily serves businesses and individuals in a small geographic area. Community banks tend to

emphasize personal relationships with their customers.[4] These smaller banks typically don't have the product range or branch networks available at larger institutions, and often provide loans to local businesses and individuals who may not qualify based on the more standardized criteria used by big banks.

Although there are many different models of community banking, the goal is always located in the socio-economic growth of communities through the sharing of resources.

Just Banks aim to provide finance to the unbanked and the under-banked. They would aim to achieve comprehensive development, work with a unique strategy to support borrowers through training, education, and supply chain interventions. Some of these interventions could become social businesses in their own right and help support the operation of the Just Banks.

The core principles of Just Banking:

1. Addressing social and ecological challenges
2. Transparency
3. Moving beyond standardization
4. Developing long-lasting relationships with communities
5. Operating primarily in the real economy and avoiding speculative activities
6. All these practices at the core of the business model

Need for Just Money : Banking for social justice and development

In the United States, community banks are a common institution. The US tends to follow a more traditional money-lending model in this way, but still incorporates collective ideals in that the community banks are locally owned. They remain specific to individual neighbourhoods, and are thus more able to respond to community needs.[5]

In India, community banking looks very different. India has seen concepts similar to Just Banking through Co-operative Banks and SHG Finance. However as the size of Co-operative banks grew, it faced problems of financial irregularities, failure of internal control and system, and underreporting of exposures. Cooperatives were considered to have immense potential to deliver goods and services in areas where both the state and the private sector have failed Other issues faced by Co-operative Banks are Poor infrastructure, lack of quality management, overdependence on government, dormant membership, non-conduct of elections and lack of strong human resources.[6]

With reference to Self Help Groups Finance ,it is observed that financial institutions are not providing adequate finance to the SHGs which relates to supply

side and SHG beneficiaries are interested to get more finance which is a demand related problem. The stake holders argue that they are facing financial problems due to inadequate financial assistance and non-co-operative attitude of the bankers. It is found that in most of the SHGs, the financial assistance provided to them by the agencies concerned is not adequate to meet their requirements.[7] The financial authorities also do not disburse subsidy in due time to the SHGs. Thereby the SHGs are not able to be self-sufficient. Further, most of the bank managers in the rural branches are outsiders who don't understand the local dialect. Thus, there is a communication gap between the stakeholders and bankers. On the other hand, financial institutions are very much concerned about their profit motive. They are of the view that due to weak financial management, low return and lack of proper documentation they are restricting the provision of credit.

Other problems faced by SHG micro finance model for poverty alleviation are:

1. Rigid structure of group, no flexibility to accommodate differential saving habits, only one account so interest equally shared, loans also equally divided resulting sub optimal utilization.[8]

2. Lack of forward and backward linkages like access to intermediates and capital goods, markets, and training required for making the most optimal use of the financing available for self-employment generation opportunities.

3. Problem faced by women SHG: Patriarchy, little financial independence, low literacy level, lack of cooperation from family members in joint family.[9]

Just Banks : Model Development

The Just Banks would be developed on the model of Community Banking. Local residents and business owners from a limited geographical area would become the members of the bank with a stipulation that none of them would have more than 5% ownership. This would ensure that decisions are not in the hands of few. The deposits put in by members would be eligible for interest at rates par with the Nationalized banks. The lending would be towards proposals that address local, social and ecological challenges. The interest rates may be slightly lesser than the commercial banks or maybe kept at par. Profit motive cannot be denied to Just Banks or else it will become a financial aid which does not make the borrowers accountable. The intent is to have inclusive development of the geographical area. The idea is to differentiate between a "Good Debt" and a "Bad debt". The investors would exactly know how their money is being used and for what purpose. The success of Local business and social projects funded by these banks would be clearly visible to the investors

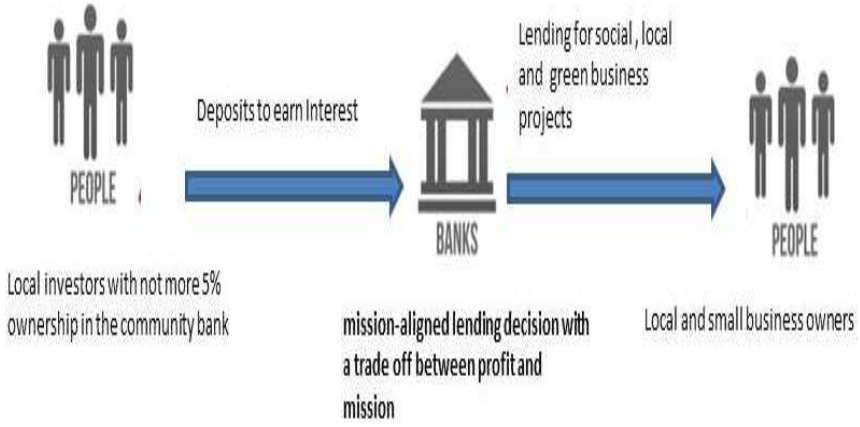

The six anchors of an intention/mission in a Just Bank

- Culture
- Ownership
- People
- Governance & Leadership
- Policies & Processes
- Accountability

Impact of Just Banks on the Society and Economy

Community banks have a critical role in keeping their local economies vibrant and growing by lending to creditworthy borrowers in their regions. They often respond with greater agility to lending requests than their national competitors because of their detailed knowledge of the needs of their customers and their close ties to the communities they serve.[10] Such lending helps foster the economy by allowing businesses to buy new equipment, add workers, or sign contracts for increased trade or services. Those effects are felt at a local level and may appear at first glance to be fairly modest, but when you multiply these effects across the thousands of community banks in the country, you really see how the lending decisions they make help the broader national economy.

The Four Levels of Impact of Just Banking can be classified as :

Level 1 - Isolated social & green business projects or practices

Level 2 - Just banking in the core of the business model

Level 3 - Strategic eco-system innovation - financing lead innovators or leverage points

Level 4 - Intentional eco-system innovation - shifting the whole system

Challenges to Just Banks

A big concern for community banks is the narrowing of the range of profitable lending opportunities — because larger banks have used their scale to gain a pricing advantage in volume-driven businesses such as consumer lending. There can be an apparent tension between community banks' desire to lend and their need to make prudent risk management decisions. Weak risk management may, over time, lead to less lending — and vice versa — because banks must maintain safe and sound operations in order to provide for the financial needs of their communities. For example, during this past crisis, many banks that were struggling to overcome operational deficiencies as a result of risk management weaknesses typically were not in a position to make a lot of new loans. Banks with stronger risk management, on the other hand, were more likely to have the financial wherewithal to continue lending through the crisis. A two-way communication between regulators and community banks is critical.

❒

***References**:*

1. *https://www.opendemocracy.net/en/opendemocracyuk/just-money-introduction/*
2. *https://howwepay.us/what-is-just-money/*
3. *https://justmoney.org/about-just-money-page/*
4. *https://www.investopedia.com/what-is-a-community-bank-5069678*
5. *Hoenig, Thomas M. (2003). "Community banks and the federal reserve". Economic Review. 88 (2)*
6. *Singh, Saroj Kumar (2016) "Problems and Prospects of the Cooperative Movement in India under the Globalization Regime" The International Journal of Indian Psychology , Volume 3, Issue 4, No. 59*
7. *https://www.rbi.org.in/Scripts/PublicationReportDetails.aspx?UrlPage=&ID=822#S3*
8. *Morgan, Jamie; Wendy Olsen (June 2011). "Aspiration problems for the Indian rural poor: Research on self-help groups and micro-finance". Capital & Class. 35 (2): 189–212.*
9. *https://niti.gov.in/planningcommission.gov.in/docs/reports/sereport/ser/ser_shg3006.pdf*
10. *Barat, Somjit (2017) , "The Future of Community Banks: A Comparative Study of India and the US" Proceedings of the Sixth Middle East Conference on Global Business, Economics, Finance and Banking (ME17Dubai Conference) ISBN: 978-1-943579-18-1 Dubai - UAE. 6-8, October 2017.Paper ID: D701*

- *Mishra, Kailash Chandra (2016) , "Problems Of Self Help Groups: A Micro Study" International Journal of Advanced Research and Review IJARR, 1(3), 2016 Pg 22-33*
- *Minsky, Hyman P. (March–April 1993). "Community development banks: An idea in search of substance". Challenge. 36 (2): 33–41.*
- *Singh, Saroj Kumar (2016) "Problems and Prospects of the Cooperative Movement in India under the Globalization Regime" The International Journal of Indian Psychology , Volume 3, Issue 4, No. 59*
- *Pitt, Mark M.; Shahidur R. Khandker; Jennifer Cartwright (July 2006). "Empowering women with micro finance: Evidence from Bangladesh". Economic Development and Cultural Change. 54 (4): 791–831. doi:10.1086/503580. JSTOR 503580.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 128–137

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Caste Humiliation and Identity in Academic institutions A Qualitative Study of Scheduled Caste Men

Kailash
Research Scholar, Dr. B.R. Ambedkar University, Delhi-06
E-mail ID : kailash15aug@gmail.com Mob. 9560736657

Abstract

In India caste is a very sensitive and all-encompassing backdrop that influences the lives of scheduled castes at every stage of their life. This qualitative study is about the lived experiences of caste humiliation at educational institutions and its influence on the identity of Scheduled Caste males living in and around Delhi are presented in this paper. Although the participants in this study demonstrated resilience and fought against their experiences, the argument of this paper is that for India to develop socioeconomically To establish a sense of accomplishment and potential, we must ensure an environment free of humiliation and inferiority complex in those early stages of life when the individual's early development takes place in social contexts.

Key words: Academic institution, Dalit, identiy, caste, humiliation, lived experiences.

Introduction

Modern India aspires to be a world where all inhabitants have access to literacy and work opportunities. India is dedicated to achieving the United Nations' proposed Sustainable Development Goals (UN-2015).[1] Furthermore, the achievement of these objectives is required for the nation's complete economic and social growth.

As a scheduled caste person, I see that in India, social inequality is obviously constituted by the caste system, which persists in every single moment of the life of every individual. Caste appears to have a strong influence on power resources such as religion, economic condition, politics, and education in this case.

The Human Development Index, or HDI, is a metric compiled by the United Nations. It was first launched in 1990 and has been released annually ever since, except in 2012. Making a connection between the HDI and the question of caste, it may be said that it would be difficult to improve the HDI ranking when people are being humiliated in the education system itself. With respect to the overall socio-economic growth of the nation, the Scheduled Castes aggregate almost one-fourth of the total Indian population. After the implementation of the constitution in independent India, everyone has got the right to education.Policies and regulations also exist on an international level. However, SC students face caste humiliation not only in schools but also at the college and university levels.. The tragic examples of Rohit Vemula (The Hindu, 2016)[2] and PayalTadvi (The Wire,2019).[3] Immediately come to mind.

Caste in contemporary India

Although times have changed but even now the experience of violation is observed. We can see the discrimination and violence on certain levels. In some places in schools, the students of SCs are still treated badly (Kumar, 2021).[4] In some places, people are tortured due to their lower castes (The Hindu, May 27, 2019).[5] Discrimination is in every field of Indian society whether it is social, political, or business. People face problems buying and selling their goods due to caste discrimination. *"Caste still remains an important indicator of deprivation and marginality, both at the macro level, is reflected in the national level data"* (Adel and ShailenNandy, 2019).[6]

Although the practice of untouchability has been constitutionally banned since the passage of the Untouchability (Offences) Act of 1955, it still continues in some form not only in private social interactions but also in the public sphere, (Amit Thorat, & Omkar Joshi, 2020).[7] It is almost as if an unspoken rule exists in many Indian universities: we will accept you but leave behind your Scheduled Caste identity and experiences (Kathryn Lum-2019).[8] The problem of graded caste inequality still persists in a modified form (as codified in Hindu legal and philosophy texts) despite countervailing forces operating against it for a very long time. The most stubborn ancient feature of the caste system, which retains some of its worst features even today, is graded caste inequality.

In 2009, a group of researchers (Thorat and Katherine 2009, pp.02)[9] wrote 'Blocked by Caste: Economic Discrimination in Fashionable Asian Countries, came up with proof of economic discrimination of former untouchables in markets and nonmarket establishments, wherever products and services are accessible by individuals. The studies argued that the low financial gain and high impoverishment of scheduled castes, among alternative reasons, is because of exclusion and discrimination.

Personal Note:

My purpose in this paper is to understand the experiences of caste and humiliation of men belonging to the Scheduled Castes category. My involvement in

understanding the experience of humiliation amongst Scheduled Caste men come from my own lived experiences. I was born and brought up in Haryana and belonged to a very poor family. I am the second child of my parents. My first school experience dates back to when my grandfather enrolled me in a government school in the market.During my childhood, I remember having no knowledge about the caste system. But the slow poison of caste soon reached my consciousness. I came to know the importance of my caste when my class teacher asked me to bring my mother with me to give me a stipend. Then I understand that there is a close relationship between my caste and wealth.

Although my father had received higher education in his life, but even after there was no permanent employment, he never felt inferior to doing any work. My parents had the same to say that no work is small or big but our thinking in relation to work is small or big. We did not have the resources to buy enough milk. Black tea would be made for everyone, and I would warm up the roti (bread) from the previous night and eat it with tea before going to school. Due to the unavailability of adequate money to live, the whole family had to live due to lack of primary basic items of daily life. For example, sometimes it would have to use ash if there is no poder to clean the teeth.

Once, I went with my mother to harvest wheat on the farm of an upper caste zamindar, and we were accompanied by some other women. It was the first week of the month of May; it was very hot on that day. It was 1:30 in the afternoon. When everyone was hungry, we came under the shade of a tree to eat food. It was hot and we were intensely thirsty, so after a while, we went to another person's field to get water. As soon as we reached the tube well, a person came to us and started abusing us. He said, "Chamaria, run away from here; how dare you enter my field." He did not let us drink water.After a long time, I came to know that the person was humiliating the ladies with me by using abusive casteistwords.This kind of behavior of people also creates a feeling of caste humiliation in me and hurts my self-esteem.

Humiliation:

Schafer (1997)[10] defined humiliation as an extreme version of shame in which one is not only disgraced but ostracized, and noted that "the fantasy of being ostracized implies being sentenced to a kind of emotional or spiritual death" (p. 96). Emerging from the Latin root humiliare, humiliation suggests the experience of being "insulted by a more powerful other" (Dianne W. Trumbull, 2008, p. 643).[11] King and Bond (1985),[12] described humiliation as the deprivation of self identity, according to them *"A man needs a face like a tree needs a bark*" (p. 37). Erikson (1987)[13] suggested that a child may be curious or happy during a wild drive. He is socially and abnormally underdeveloped. They have to endure a severe humiliation during continuous development and strong aggression. The youth does not hold the change, whether he has to deny his personality. This adjustment becomes self-degradation. The juvenile thinks that he has left his all self without find a new one reform to the disputed

claims of his atmosphere. The inner voice about this adjustment leads him to a mental disorder of crime.Gopal (2001)[14] argues that humiliation is not a corporal injury; more than this it is a mental or psychological injury that leaves a permanent scar on the heart (pp 40-50). Nelson Mandela (2008)[15] defines, humiliation to make another person suffer a unnecessarily cruel fate. V. Geetha (2009)[16] defines humiliation as a lived experience as it is felt and experienced by the victim. The understanding of insult in Indian context depends on the understanding of the experience of untouchability.

Although academicians sometimes use the terms humiliation and shame interchangeably, psychological research shows that the two experiences are distinct. Humiliation leads to a strong sense that one has been wronged, while shame involves a sense that one has done wrong and diminished oneself in one's own eyes or in the eyes of others. Additionally, as Hartling and Luchetta (1999)[17] suggest, "shame can serve an appropriate adaptive function by inhibiting aggression or protecting an individual from unnecessary personal exposure." In contrast, humiliation has not been identified as serving an adaptive function.

Humiliations is directly or indirectly related to many emotional and socital disorders, which are supported by the many scholars. Many psychologists consider various forms of humiliation responsible for many mental disorders. Based on the work done by various scholars on humiliation, we can learn about humiliation into different aspects, for example-

According to Jacobs (1983),[18] humiliation is associated with repeated failures over many years contributed in his judgment, to emotions, feelings of exposure and low self-esteem. Helen Lewis (1976)[19] signifies that humiliation leads to depression in the children. She said that although they are in a state of humiliation -a state, unexpectedly, generally attend by quick anger. In this state they are not aware about their surroundings.

Identity:

The identity of a person is a major concept in the present world. Today, the identity of a person remains the center of debate in social science. When we talk about identity, our attention naturally goes to the important work done by Erikson. Adolescence is the stage of life that Erikson was most fascinated by. Erikson's work focuses on people's personal lives and their development through life in which the sense of identity indicates a relationship with society. His work on Identity was first introduced in 'Childhood and Society, in which he signifies that identity confusion is the most important issue today. He says that Identity is the integration of many aspects. Contemporary to Erikson, William James (1920, p.199)[20] says, "Man's identity is evident from that mental or moral point of view in which moments when he is most deeply and intensely active and alive, there is a voice that speaks." and says, 'This is the real me'." E.H. Erikson (1959a)[21] has characterized identity as psychosocial. The event of identity involves an individual's relationship along with

his or her cultural context. A strong identity depends upon the perception and reactions of others.

Weeks (1990:88),[22] defines identity as one's acceptance and relationship with others, he says, "Identity is regarding happiness, regarding what you have got in common with some individuals and what differentiates you from others. At its most elementary it provides you with a way of non-public location, the stable core to your individuality. But it is also about your relationships, your complex, and your confusion. Each of us lives with a variety of potentially contradictory identities. In its centre, there are the values we share or wish to share with others".

Lynne Layton (2007)[23] concluded that our identities are always created concerning other identities existing in our specific culture those we consider "other". She concluded that many of the psychological problems that clinicians treat are a result of social inequalities. Social inequalities such as sexism, racisms, and classism cause wounds that damage the psyche, creating shameful vulnerabilities that we restrain by using identity as a weapon against others, (pp.146-157).

Caste, Identity and educational processes:

Education and identity are inextricably linked. When it comes to scheduled castes, prior to the establishment of the Indian Constitution, no member of the scheduled caste had the privilege to read or write for many thousand years. Due to religious reasons, a great number of individuals were denied education and forced into darkness for a long period. It is worth mentioning that in Erikson's concept of identity, the stage before identity development is referred to as the stage of Inferiority vs. Industry. This study will look into the experiences of young males as they recount their humiliations. An attempt will be made to draw on these experiences and their influence on identity development in order to hypothesize on the consequences of these losses on both the psychological and economic dimensions, both individual and society.

The school-going children in Delhi NCR are more privileged in many ways. Nevertheless, we see the social atmosphere around us that was present at the time of independence. There are many inequalities among different caste groups in India. Despite many government provisions, the youth still face caste humiliation in India. A person's caste will determine the type of school he has access to, the way he is treated by his teachers, and his interactions with his classmates. In young adulthood, the experience of SC having different caste identities doesn't get education and access to government jobs easily.

Methodology:

The purpose of this qualitative study is to investigate the impact of caste humiliation and identity formation on Scheduled Caste males in the Delhi/NCR region. I was deliberately interested in studying the masculine perspective. I have taken open-ended interviews with Scheduled Caste participants. My aim is to produce contextually emancipatory knowledge. So the knowledge we are trying to produce

is culturally sensitive, textual, but also located within standpoint epistemology, emerging from their location as scheduled caste people. Thus, I used methodological pluralism, which is a combination of two approaches to knowledge, phenomenological and social constructionist approaches, as well as some psychoanalysis. human experience is complex, multi-layered, and multi-faceted and that, therefore, a methodology that is equally complex, multi-layered, and multi-faceted is perhaps the most suitable way to find out more about it (Carla Willig, 2013).[24] Thus, I am using here a pluralistic approach in this qualitative research.

Sample:

Initially, I met 41 individuals, and 20 of them agreed that they had been "yes" humiliatied with caste experiences. So I had a detailed conversation with a total of 20 people, which is equivalent to half of the participants I met. As stated above I was interested in studying the intentionally masculine perspective. Although humiliation can happen to everyone, participants between the ages of 25 and 50 participated in this study, regardless of gender, with the minimum educational requirement of a bachelor's degree in any stream.

Analysis and Discussion:

As the article will demonstrate, educational institutions are unable to deliver a humiliation-free experience. My participants describe their thoughts regarding their experiences with caste humiliation in their stories. One notable result from the data is that majority of the individuals were aware of their humiliating experience between the ages of 7-9 years. Erik Erikson (1958, 1963)[25] identifies the fourth stage of psychological development as "industry vs. inferiority." At this level, the capacity for competence grows. This period occurs between the ages of 5 and 12 years old. Teachers and the peer group, according to Erikson, begin to play an essential part in the child's development at this period by teaching child-specific abilities. At this stageyoungsters feels the need to gain acceptance by performing assertive abilities that society values and begins to obtain a sense of gratification in their achievemetn. Children who are encouraged and rewarded for their initiatives, they develop to feel industrious (competent) and confident in their capaities to aquire aim. According to McLeod Saul (2018),[26] 'If this initiative is not appreciated or it is controlled by parents or teachers, then the child begins to feel inferior, and doubt his or own abilities and therefore may not reach his or her potential. If the child cannot develop the specific skill, they feel society is demanding (e.g., being athletic) then they may develop a sense of Inferiority which become an obstacle in their life. Success in this stage will lead to the virtue of competence."

Nine out of the twenty participants in this study said that their first experience with caste humiliation occurred within their schools by their teachers and classmates. rest of the caste humiliation experiences occurred outside the school. Findings show that most of the caste humiliation occurred within the academic instituitons in which the head teacher was of upper caste. For this paper, the experiences and effects of humiliation inside and outside of the school are discussed.

Table: Analytical profile and caste experience of participants

Sr.	Current age and status of participant	Age 1st Exp	Experiences	Responses to Humilation
1.	Name : B Age : 38 Yr. Work: Asstt. prof.	8.5 years	Neighbor children insulted me in	I was afraid hearbeats rates about the caste insult.
2.	Name: D Age: 36 Yr. Status: Dehli based NGO	10 Years	Caste humilitation by Neighbor upper Caste Friends in Plaground	Neglect Unwanted Anxiety dishonored shamed, strange.
3.	Name: E Age: 35 Yr. Status: just competed his	6 Years	Whenever the teacher wanted to talk to me, he always referred to me by my cate like. "hey Ganda what are you doing ?"	Stress, Tension, Helpless Miserable Depressed Wanted to die.
4.	Name: O AgeL 47 Yr. Status: Coaching Center	7 Years	My class teacher Said, 'You will always be chamar you will never improve	I felt very bad and sad.
5.	Name: R Age: 39 Yr.	9 Years	Classmated fought and insult me outside the school on the way to my home.	Confused unaware about the reason, frightend
6.	Name: Q Age:36 Status: Assit. Professor	6 Years	When I tuched the Teacher's water bottle, He said, "O Chamar like, how dare you touch my water bottle"	"I felt very bad, cried and numb, disrespect and discrimination."

He Remembers the first caste related experience and says, *"Our school was constructed by local board. I was studying in 3rd class. Sometimes our class was established in Hanuman Temple. The Mahar students always had to sit*

separately, on stairs of the temple. In the early days of 3rd class, we were not allowed to sit in the same line with the Maratha boys of the village. If we were thirsty, we could not get water in school. We have to come directly to Maharwada at home. One day a week Dalit boys have to be worn to dung the whole school. The boys turn was fixed."

Participant 'C' is living since his birth in an urban society. His school education takes place in a private school. He was unaware of his caste. 'C' says, *"My parents never taught me the differentiation among the people on the basis of their caste. They told me that every person is equal to any other person."* He experiences first time the caste experience when he was in class 11th. His classmate asks him about his caste. 'C' says, *"I was confused about the question my friend asked to me; I did not reply anything to him. Later I came to know that I belong to a scheduled caste and my friend who ask my caste was related to an upper caste."*

Mr 'N' was a representative of his school but did not get the respect he deserved. He says that in the annual function, I was not allowed to light the lamp before Saraswati Vandana, and this work was done by the hands of an upper caste student. 'Na' would say with a very sad heart that on that day I was not even given a seat to sit and participate in the ceremony. 'N' says, *"I felt very bad seeing all this like I was humiliated even after doing a lot for the school to be done. Today I came to know the real place of my caste. After that, I myself stopped participating in any school program and started concentrating on my studies"*. On perusal of the presented data, it is found that the economic condition of most of the participants was not good in the early days of life. Along with this, he had to go through a deep experience of caste inferiority at the school from where he received his elementary education. Some of the participants had to take a sip of humiliation outside the school sometimes by their friends and sometimes by other people of the society for being a Scheduled Caste. Some experience racial humiliation very early in life and some later. We see that even if a scheduled family has lived in an urban community since its inception, that family is also not untouched by the experiences of caste humiliation. Through this letter, I want to inform you about the painful school routine of scheduled caste students in Indian society. The Indian society needs to have a soft heart to understand the atrocities committed against the Scheduled Caste people. Various research suggests that such experiences can lead a person to mental diseases as well as spread chaos in society. The contribution of the entire society is needed to end such bitter experiences. If we fail to eliminate such evils, then the progress of science will prove to be a joke.

The experiences of the participants presented in this data show that these participants felt shame, fear, headache, tension, helplessness, misery, depression, sadness, upset, disturbed, and disrespected. More feelings of fear, confusion, and stress. Apart from these, the most experienced feeling by these participants was that they felt insulted due to caste humiliation.

Education is the key to success in every person's life, and it is very important for the upliftment of any society. But if there is a problem in the process of getting an education, then almost a quarter of the population of India, even if they reach school, has to bear such complicated and painful experiences.

Most participants, despite their negative ethnic experiences, have received higher education and become successful citizens. Even after all these bitter experiences, these people get higher education and become a source of motivation for others. However, many citizens of India do not recover from these experiences of humiliation. How far our country would have gone, if everyone would have gone along and how much brotherhood would have been among our countrymen.

❐

References:

1. *UNITED NATIONS (2015), https://sdgs.un.org/goals*
2. *The Hindu (2016), https://www.thehindu.com/news/national/andhra-pradesh/It%E2%80%99s-official-Rohith-Vemula-was-Dalit/article60580157.ece.*
3. *The wire (2019), https://thewire.in/caste/payal-tadvi-harassment-caste-discrimination.*
4. *Kumar Rahul (2021) SC, ST, OBC representation in Indian education is dismal, upper-caste nexus persists. https://theprint.in/campus-voice/sc-st-obc-representation-in-indian-education-is-dismal-upper-caste-nexus-persists/627217/.*
5. *The Hindu, (2019), https://www.thehindu.com/news/cities/mumbai/payal-was-the-first-doctor-in-our-family/article27257250.ece.*
6. *Daoud, A. and Nandy S. (2019), Implications of Caste and Class Politics for Child Poverty in India, Sociology of Development 5 (4): (p. 428-451).*
7. *Thorat A. and Joshi O. (2020), The Continuing Practice of Untouchability in India, Patterns and Mitigating Influences (pp.37).*
8. *Lum, Kathryn (2019), The Dalit Closet: Managing Dalit Identity at an Elite University in India. Nottingham Trent University, Nottingham, UK (p. 130).*
9. *Thorat S. et al. (2009), Graded Caste Inequality and Poverty: Evidence on the Role of Economic Discrimination. (p. 02).*
10. *Schafer, R. (1997). Humiliation and mortification in unconscious fantasy. In R. Schafer (Ed.), Tradition and change in psychoanalysis, International Universities Press. New York. (p. 89–114).*
11. *Trumbull, Dianne, (2008) Humiliation, the Trauma of Disrespect, Journal of the American Academy of Psychoanalysis and Dynamic Psychiatry; Vol. 36, Iss. 4, New York, (p. 643-660).*
12. *King, A. and Bond, M. (1985) The Confucian paradigm of man: A sociological view, in W. Tseng and D. Wu (Eds) Chinese Culture and Mental Health. Orlando, FL: Academic Press. (p. 37).*
13. *Erikson, E. (1987), A Way of Looking at Things: Selected Papers from 1930 to 1980 (S. Schlein, Ed), W.W. Norton & Co. New York.*
14. *Guru G. (2001), 'Ambedkar's Idea of Social Justice,' in Ghanshyam Shah (ed.), Dalit and the State, Concept, New Delhi, (p. 40-50).*
15. *Mandela N (2008): Eight celebrities share what they've learned. Readers' Digest, New York, 108.*
16. *Geetha V. (2009), Humiliation, claims and contexts, Oxford University Press, YMCA library building, Jai Singh Road, New Delhi-11001.*
17. *Hartling L. M., Luchetta T. (1999), Humiliation: Assessing the impact of derision, degradation, and debasement. Journal of Primary Prevention. ; 19: (p. 263). [Google Scholar] [Ref list].*
18. *Jacobs, D. (1983), Learning problems, self-esteem, and delinquency, in J. Masck and S. Ablon (Eds) The Development and Sustaining of Self-Esteem in Childhood. International Universities Press: New York.*
19. *Lewis, H. (1976), Psychic War in Men and Women. New York University Press: New York.*
20. *James, W. (1920), The Letters of William James (ed. H. James), vol. I, Boston, The Atlantic Monthly Press, (p.199).*

21. *Erikson, E.H. (1959a), Identity and the Life Cycle, New York, International University Press, (p.109).*
22. *Weeks, J. (1990), The Value of Difference, in J. Rutherford (ed.) Identity, Community, Culture, Difference, Lawrence and Wishart. London, (p. 88–100).*
23. *Layton, L. (2007), What psychoanalysis, culture and society mean to me. In: The Academia-Industry Symposium MSM 2007: Medical Practice and the Pharmaceutical Industry. (p. 146- 157).*
24. *Willig, C. (2013), Introducing Qualitative Research in Psychology, 3rd Edition. Open University Press, McGraw-Hill Education, England.*
25. *Erickson, E. H. (1958). A Young Man Luther: A Study in Psychoanalysis and History Norton, New York.*
26. *McLeod Saul (2018), Erik Erikson's Stages of Psychosocial Development. Education, University of Manchester.*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 138–142

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Interface between Gandhi and Ambedkar In Understanding Caste

Dr. Rajesh Kota
Department of Political Science, Osmania University, Hyderabad.
Email: rajeshkotaou@gmail.com

Dr. Ravi Sabavath
Department of Political Science,Osmania University,Hyderabad.
Email: naikraviou@gmail.com

Abstract

*The Gandhi Ambedkar conflict was **over how to understand caste**. Ambedkar insisted, for the first time in India's modern history, that caste was a political question, and couldn't be addressed by social reforms only," he said. Ambedkar was in favour of annihilation of the caste system as it was beyond reforms. Gandhi did not support the abolition of the caste system or Varnashrama order. He was in favour of bringing behavioural change in the society regarding the ills of the caste system. Nevertheless, both of them had realized the issues of lower castes and worked for the emancipation of the same. Both tried to challenge the existing systems, Gandhi did it on social and moral front whereas Ambedkar did it on political front. This paper aims to grab an ideological tension between Gandhi and Ambedkar.*

Keywords: Gandhi, Ambedkar, Caste, Varna, conflict, annihilation, and social change

Introduction

The political, social and philosophical conflict between generation's profound intellectualist, Mr. M.K Gandhi and Dr Ambedkar has a long tradition and still by no means ended. Ambedkar, the untouchable was heir to an anti-caste tradition dated back to Buddhism and Gandhi, a vaishya born into Gujarati Bania family was latest to the privileged caste Hindu reformism dated back to the works of Raja Ram Mohan Roy. Both Gandhi and Ambedkar represented separate interest groups and to quote Arundhati Roy, "their battle unfolded in the heart of India's national movement (Roy, 2014).[1]

Ambedkar was Gandhi's most stiff opponent politically, intellectually and morally. Ambedkar was also criticized by the Gandhian intellectuals. They called him an "opportunist" because he served as labour member of British viceroy's executive council between 1942 and 1946. He was called a "British stooge" because he accepted British invitation to the first round table conference, in 1930, when many congressmen were imprisoned for breaking salt laws. He was further called a "separatist", because he wanted separate electorate for untouchables. He was characterized as "anti-national" because he suggested that Jammu and Kashmir can be trifurcated (divided into three) and he supported Muslim league's case for Pakistan (ibid. P.2).

In the interview given by Dr Ambedkar to BBC on 1995, he says "a comparative study of Gujarati and English writings will reveal how Mr Gandhi was deceiving people" (Ambedkar 1995). Gandhi's endorsement of caste system in Gujarati paper was translated from Gujarati to English by Ambedkar. "Caste is another name for control. Caste puts a limit on enjoyment. Caste does not allow a person to transgress caste limits in pursuit of his enjoyment. That is the meaning of such caste restrictions as inter-dining and inter marriage, these being my views I am opposed to all those who are out to destroy the caste system" (Roy, 2014 p. 2).[2]

Gandhi was holding Arya samaj's position on Varna. He believed in Varna system and to the position that a person's Varna was to be decided by their worth and not by birth. Ambedkar considered this position by Gandhi as nonsense (ibid., p. 3). He further challenges Gandhi by asking: How are you going to compel people who have acquired a higher status based on birth without reference to their worth to vacate that status? (Ambedkar, 1944, p. 32).[3] How are you going to compel people to recognize the status due to a man in accordance with his worth, who is occupying a lower status based on his birth?(ibid.).

What is to happen to women in their system? Are they also to be divided into four classes, Brahmin, Kshatriya, Vaishya and Shudra? Or are they to be allowed to take the status of their husbands (ibid.). Ambedkar further argues that this position was taken by Gandhi due to the double role he played- Gandhi as a "mahatma" and Gandhi as a "politician". Gandhi as a politician acknowledged caste and varna because "he is afraid that he will lose his place in politics" (ibid. p.64)

Gandhi emphasized 'monotheism'. He was a sanatan Hindu and on this basis he supported the movement of untouchables to enter temples. According to Irfan Habib, "he tended to make Hinduism more monotheistic than did even the Arya Samajist, with whom, of course he did not agree" (Habib, 2013, p. 26).[4] Irfan Habib conceives that the greatest achievement of Gandhi was in relation to the theological tenets of Hinduism. He was able to emphasise that caste system was not essentially a part of Hinduism, by the year of Gandhi's death. Gandhi was able to produce reformist zeal inside Hinduism.

When communal award in September 1932 recognized the right to separate electorate for untouchables, Gandhi embarked on his epic fast unto death to get it revoked. The moral pressure to save Gandhi's life forced Ambedkar to accept a compromise, known as 'Poona Pact', which provided 151 reserved seats for the scheduled castes in joint electorate. (Bandyopadhya, 2013, p. 355).[5]

Ambedkar argued that, the fears expressed by Gandhi about the consequences of the arrangement for the representation of depressed classes as 'purely imaginary'. He argued that "if nation is not going to be split by separate electorates to Mohamedans and Sikhs, the Hindu society cannot be said to split up if the depressed classes are given separate electorate" (Ambedkar, n.d., p. 1).[6] Even Dr Moonje, a strong protagonist of Hindu case and a militant advocate of its interest did not oppose the communal award. Ambedkar argued that, Gandhi offered Muslims all the fourteen claims during minorities' pact and in return asked them to join with him in resisting the claims of social representation made by Ambedkar, on behalf of depressed classes (ibid.). Ambedkar further thank Muslim delegates for refusing to be a part of black act and saving depressed classes from a calamity……..

Gandhi professed the view that "shastras should be interpreted, not by the learned but the saints and that, as the saints have understood them, the shastras do not support caste and untouchability" (Ambedkar, 1944, p. 58). Ambedkar replied to this in his most radical text Annihilation of caste, that "masses do not know the contents of shastras. They have believed, what they have been told and what they have told is that shastras do enjoin as a religious duty, the observance of caste and untouchability" (Ambedkar, 1944, p. 58).[7]

When Ambedkar became a member of constituent assembly his main concern was to privilege and legalise 'constitutional morality over traditional social morality of the caste system'. As a law minister in post-independence India, he worked on drafting a Hindu code bill. The bill proposed sanctioned divorce and expanded the property rights of widows and daughters. His attempt was to make Hindu personal law more equitable for women. He soon identified the futility of his association with congress and resigned from the cabinet in 1951, when congress refused to support him on 'Hindu code bill' (Bandyopadhya, 2013, p. 357).[8]

The annihilation of caste is the text of speech which Ambedkar was supposed to deliver to an audience of caste Hindu's. Jat-pat Todak Mandal of Lahore for distributing his speech earlier asked him to provide the text of speech earlier. When they came to know that he was going to launch an intellectual assault on Veda's and shastras, they asked him to make alter the speech. But Ambedkar refused, so the event was cancelled.

Gandhi argued that 'religion has to be judged not by its worst specimens but by the best it might have produced' (Ambedkar, 1944, p. 59). Ambedkar challenged

this too. Gandhi's argument that "Hinduism would be tolerable of only many were to follow the examples of saints"[9] proved fallacious to Ambedkar. Gandhi, while suggesting that Hindu society can be made tolerable and even happy without any fundamental structural change in its structure, if all Hindu's are persuaded to follow a high standard of morality in their dealings with the low caste Hindu's, was something illusionary. For Ambedkar the attempt of improving the personal character of high caste Hindu's was a waste of energy.

To a lower caste man, it cannot be good that, there is a higher caste man above him. Such consciousness or rationality is unjust. So a society based on Varna or caste can only prove a wrong relationship. To the end of Gandhi's life, he was more tolerant to inter-caste marriage and inter-dining. Ambedkar accuses Gandhi for the dogma between what is preaches. Gandhi's youngest son (born a vaishya) has married a Brahmin's daughter. Ambedkar find this as the reason for his tolerance for inter-caste marriage in his later life. The Hindu society itself is a myth for Ambedkar. The name 'Hindu' itself is a foreign name (Roy, 2014, p. 5).[10] It was given by Mohammedan's to the natives who lived east of the river indus.it does not constitute in any Sanskrit work prior to the Mohammedan invasion and they did not feel the necessity of a common name, because they had no sense of being constituted as community. Hindu society does not exist; it was just a collection of castes.

Gandhi was called 'mahatma' in 1915, soon after his return from South Africa, at a meeting in Gondal, Gujrat. The entitled patronage 'mahatma' has to be strictly scrutinized. Gandhi was only a prominent spokesperson for passenger Indians*. He was always careful to distinguish and distance from passenger Indian's from indentured workers, while he was at South Africa. Gandhi rejected western civilization. Gandhi's critique of western modernity came from a nostalgic evocation of a uniquely Indian pastoral bliss. But to Ambedkar and to most Dalit's, Gandhi's ideal village was 'a sink of localism, a den of ignorance, narrow mindedness and communalism' (Roy, 2014, p. 11). It should be remembered that Ambedkar's critique of nostalgia came from western liberalism.

Ambedkar was dreaming of 'the city of justice, an enlightened India. While Gandhi considered city as an "excrescence" that served at present movement the evil purpose of draining the life blood of villages. This conceptualization also points us to the degree of difference, these prominent leaders had. Arundhati Roy has exposed the 'duality' of Gandhi's conception. She argues that while Gandhi, promoted his village republic, his pragmatism allowed him to support and be supported by big industry and big dogmas as well. His chief sponsor from the year he came back from South Africa to the end of his days was G.D Birla. Irfan Habib has also accused Gandhi for remaining within bourgeoisie framework of thought (Habib, 2013, p. 27).[11] Gandhi in the Champaran Satyagraha was leading rich peasant's (1917) and in Kheda Satyagraha and Ahmedabad working-class strike, he was entering

into compromises. In long term Gandhi was talking about Zamindar's as trustees, as custodians of peasant's, who should be paid rent so that they will open schools and hospitals. This 'impractical idealism' as Irfan Habib as called it, makes Gandhi accused of being an agent of big bourgeoisie.

Ambedkar called the domino effect of caste system as "infection of Imitation". Arundhati Roy beautifully summarizes this process. 'Like a half-life of radioactive atom, decays exponentially as it moves down the caste ladder, but never quite or disappears'. She further explains the exponential decay of the radioactive atom of caste as, Brahmanism is practiced not just by *Brahmin* against *Kshatriya* or the *vaishya* against the *Shudra*, or the Shudra against the untouchable, but also by untouchable against un seeable (Roy, 2014, p. 11).[12]

Conclusion:

If you want to bring a breach in caste system, Ambedkar tells us to apply the dynamite to all the *Veda's and Shastras*. He summarizes Hindu religion as a multitude of Commands and Prohibition. Ambedkar was not applying dynamite to Veda's and shastras, thus to the core beliefs of Gandhi. The two different positions taken by these two legends have marked a long intellectual debate. This debate leads to problematizes the 'mahatma' tag attached to Gandhi and reinvigorate the centrality of caste in Indian national movement.

❒

References:

1. ***Ambedkar, D. B. R***., *(1944). Annihlation of caste with a reply to Mahatma Gandhi www.mulnivasibamcef.org. (Online)*
2. ***Dr.B.R.Ambedkar*** *interview with interview to BBC, 1955.*
3. ***Bandyopadhya, S***., *(2013). From plassey to partition. Delhi: Orient Blackswan private ltd.*
4. ***Chandra, B***., *(1989). Indias struggle for independence. Delhi: Penguin books.*
5. ***Habib, I***., *(2013). The national movement; studies in ideology and history. Delhi: Tulika Books.*
6. ***Kumar, A***., *(2013). Nationalism in india. Delhi: Boook age publication.*
7. ***Omvedt, Dr. G***., *(2014). 'Ambedkarism' : The Theory of Dalit Liberation - I. D-Mag (Dalit E-Forum).*
8. ***Roy, A.***, *2014. The doctor and the saint. The Caravan(A Journal of Politics and Culture), New Delhi.*

पूर्वदेवा– *सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका*
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 143–151

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

Study of late Harappan Craft Industry and Skill Development in the Saraswati Basin

Dilip Kumar Kushwaha
Associate professor, Ancient Indian History,Culture & Archaeology,
Gurukul Kangri, Haridwar

Prachi Ranga
Research Scholar, Ancient Indian History, Culture and Archaeology
Gurukul Kangri (Deemed to be University), Haridwar
E-mail : prachisinghnehra@gmail.com

Abstract

As a result of congenial climatic condition, fertile arable land and assured supply of water, the saraswati region witnessed the beginning of settled life from early 4th millennium BC. The saraswati basin was one of the most important agriculture bases for important culture including Harappans, the early Iron age painted grey ware. Extensive and intensive surveys carried out in most of district of Haryana have brought to light numerous site of the Harappan. Amongst the district of state Haryana karnal, jind, hissar, rohtak and sonipat has highest numbers of archaeological sites. Towards the end of mature Harappan phase a shift in the settlement pattern of the harappan culture in the sarswati basin is observed.

The late harappan phase in saraswati basin continuation of Harappan tradition that flourished in various aspects of culture. The deurbanized period revealed degradation in all aspects of life which were prominent features of previous phase such as the town planning, architectural features, material culture, technology, trade and commerce. The classical elements of the urbanized civilization which broke down in the deurbanized period include typical Harappan ceramic forms, triangular cakes, inscribed seal, burnt brick house, big granaries, communal hearths and grid settlement pattern. The beginning of the second millennium BC witnessed a break down in the urban civilization integration, unity and development. All the sub systems that were a prominent feature of the prosperous urbanized period (Mature Harappan period) seem to have weakened. Consequently the urbanized civilization seems to have transformed into various regional cultures. Most of the urban centres such as Rakhigarhi, Farmana, Kalibangan, Bhirrana, Baror and Karanpura disappeared during this period. The population of

urban centres moved towards the village settlements. Hence, rural settlements increased in large numbers during the deurbanized period. The towns such as Mitathal, Bara, Banawali, Ropar, Sanghol, Balu, Hulas and Alamgirpur played an important role as regional centres in this period. Excavations of these sites have thrown light on town planning, architectural features, ceramic assemblage, animal husbandry, trade and technique of this period.

Key Words - Technology, Saraswati River Valley, Post-Harappa, PGW, Reorganization

---

Introduction -

A few years ago, the last period of the Harappan culture was known as the Post Harappan culture, in which the ochre coloured pottery culture, the Cemetery H, etc., were studied mainly. But due to continuous research by scholars, this fact has been confirmed that there were Harappan signs even in the later period at the places named Jhukar and Harappa. Due to the presence of Harappan features in the later period, scholars started to relate the post Harappan culture to the later Harappan culture. This culture is related to the last phase of the mature Harappan culture and the early phase of the new culture and shows the succession of the pre-Harappan culture to the later period. The city plan of the mature Harappan period, construction of huge buildings, different forms of measurement, use of script, etc. are not visible in this period, but similarities are also seen in some areas, such as the character types. But there is degradation in their construction too. In this period some new evidence also starts becoming available. Signs of the later Harappan culture were first seen in Saurashtra.

Therefore, Wheeler addressed it as the Saurashtrian Indus.[1] Later such relics were also found from Haryana, Punjab and western Uttar Pradesh, Gujarat and Maharashtra. According to Ghosh, the decline in centralized government is displayed due to the decline in Harappan urbanization, habitat area, population, food production, building art, abolition of script, decline in remote trade. Poshel has named this later city Harappan culture due to the receipt of remnants of less organized, less developed society in this culture.[2] The change in the internal situation as a result of the decline in the economic situation and the cultural decline is displayed by the relics of this period. Due to economic, social and political decline, migration from the cities of the Indus Valley Civilization started. Most of the other areas that the citizens went to for their livelihood were located in the east and south-east of the Indus river valley. In which the area of ??Ganga valley in the east and the area of ??Saraswati river valley in the south-east which includes Haryana, Punjab, Rajasthan. The culture that flourished in this region after the Indus Civilization is referred to as P.G.W. known as culture. Coming to these areas, the citizens again started all the dimensions of life.

The late Harappan cultures represent a declined or transformed stage. The main features of mature Harappan phase appears to be absent. Late Harappan metalsmiths used copperbronze continually, although the quantity of tools limited. The difference of main features reveals in metallurgy. A large number of Late Harappan sites have been excavated by archaeologists. In these excavations, there are found a few types and number of weapons and implements made up of copper, stone and bone. The metallic weapons and implements namely arrow head, spearhead, parasu, slingball, dagger, macehead, axes, celt, bar celt, chisel, anvil, borer, razor, knife, needle, fish hook, blade, point etc. were found in a very few numbers. Late Harappans mostly used metal of mature Harappan for making tools and weapons. They knew some technique of Mature Harrapan, smelt, resmelt, casting, annealing, wiring, cold and hot working. But there is no evidence of smelting process in late Harappan villages. Daimabadian coppersmiths were advanced compared to other Late Harappan copper smiths. The Harappan evidence indicates the presence of a number of craft production activities. These range from faience objects, beads of various materials, metal objects, steatite seals, shell artifacts and a number of other objects. It should, however, be remembered that these artifacts are the durable relics of craft activities and that there were other crafts which have not left any visible products behind. Thus, it would be relevant to begin with a survey of such crafts. The basic problem of dealing with such crafts, using non-durable materials, is that the artifacts themselves very seldom remain and we are forced to look for indirect indicators. Such indirect means could take the form of tools or illustrations of such crafts/objects through art. Crafts being studied in this context are weaving and its associated activities of spinning and dyeing, wood working and stone tool making.

Stones, Weapons and Implements

Late Harappan people used a few types of weapons and implements compared to Mature Harappan phase. They used sling balls, hammer, blades etc. (Farmana, Kheri Meham). Hammer reported from Mithathal. Mostly Late Harappans used chert blade, but chalcedony blade were also traced from a number of late Harappan sites. The people of Late Harappan used chert blades found from Ropar, Kotala Nihang Khan (Punjab), Banawali, Mitathal, Kheri Meham, (Haryana) Bargaon (UP) Lothal, Rangpur (Gujarat). The raw material included chalcedony, chert blade, jasper and fine grained green basalt. The use of chalcedony was the highest covering 90.3% and interestingly enough the chert blades remain second, covering 6.0% these are some type of blade e.g. balked blade, pen knife blade, and simple blade. Artisans used raw material from Rohiri Hill. They used different technique for making stone tools. During making blade, craftsmen used flaking techniques. After flaking, they were grinded on stone for making them sharp. They used polished stone technique for making stone tools. Craftsman selected round stones for making stone ball easily and after selecting the round stone. Craftsman retouched the stone to

transform completely in shape. Besides, their techniques was adopted by Late Harappans. Some weapons and Implements in Late Harappan Phase The late Harappan people used bone weapons and implements like arrowhead, spearhead, dagger, awl, knife, needles, points etc. Bone arrowheads were found in excavation from Bhagwanpura & Daulatpur, a unique bone spearhead and Dagger reported from Daimabad, pointed bone awl and knife were found from Bhagwanpura, a few bone needles reported by excavator in Bhagwanpura and Chandigarh excavations. Among bone tools, a large number of bone points were found from almost all Late Harappan sites. These were used in hunting and various crafting purposes. Craftman of this phase used skrinning technique for selecting bones of animals and after they were cleaned of bone marrow and sawn or cut chiseled, roughed out, finished, drilled and finally polished. In this phase, bone tools were not enough to be comparing to Mature Harappan phase.

Pottery :

The history of Indian pottery begins with the Harappan Civilization. Harappan people used different types of pottery such as glazed, polychrome, incised, perforated and knobbed. For the decoration of pottery the Harappan people used several methods. There is proof of pottery being constructed in two ways, handmade and wheel-made. It consists both plain and painted chiefly of wheel made wares. Harrappan and Mohanjodaro cultures heralded the age of wheel-made pottery. The Harappan pottery is uniformly sturdy, well-baked and bright or dark in colour. The plain pottery usually of red clay with or without a fine red slip is more common than the painted ware. The painted pottery is mostly of red and black colours. The painted Harappan pottery of the Harappan civilization is distinguished by its unique style of painting motifs and compositions and is an important component of the Harappan ceramics. This is distributed over a wide area from Sutkagen Dor in the west to Alamgirpur in the east, and from Shortughai in the north to Nageshwar in the south. Its distribution pattern also plays an important role in demarcating the spread of the interregional relationships during the Harappan period or the urban phase but unfortunately this aspect along with the study of percentage of painted pottery have not drawn the attention of the scholars. In this study only the Ghaggar plain is taken up for the study.[3] In the Ghaggar plain, there are a number of archaeological sites of the Harappan period that have been excavated, but the publication of their results are very limited resulting in a difficulty to understand the spatial and temporal distributions of the Harappan painted pottery in the region. In these circumstances, the material from the explorations can contribute to our understanding of the Harappan painted pottery in this region, although they lack information like their stratigraphic on text due to its nature as surface collections.[4]

The village Banawali is located about 15 km west of Fatehabad, in Haryana state. The famous archaeological site is situated about 500 m south of the village. R.S. Bisht excavated it and the site yielded the remains of Early Harappan, Mature

Harappan and Late Harappan periods (Bisht 1982). It spreads over an area of about 7 hectares and rises about 7 m high above the surrounding plain. During the present explorations, Early Harappan, Mature Harappan and Late Harappan pottery was collected.[5] The Mature Harappan pottery includes some painted sherds of storage jar.

The village Balu is situated about 20 km south of Kaithal in the Haryana state and the archaeological site is futher located about 1.5 km northwest of the village[6]. This site was excavated by Kurukshetra University and yielded threefold cultural sequence, viz. Early Harappan, Mature Harappan and Late Harappan periods. In the course of the explorations, the artefacts of the Early Harappan, Mature Harappan and Late Harappan periods including some painted Harappan pottery were found. Apart from pottery, some beads of agate, carnelian and terracotta, chert blades, terracotta cakes of various shapes, copper objects and terracotta and faience bangles fragments were collected. Two specimens were collected from this site.

The village Kheri Meham is located about 1 km north of Meham (Rohtak district of Haryana). This site is located about 200 m north of the village. It occupies an area of about 2.7 hectares and it is now 1 m high and is under cultivation. It yielded remains of the pre Harappan (Hakra culture), Early Harappan, Mature Harappan, Late Harappan, Historical and Medieval periods.[7] Faience bangles, beads and faience slag were found in a large quantity. This gives an idea that this site may have been a faience production centre. Other antiquities include terracotta cakes of different shapes, i.e. triangular, circular, idli shape, and mustikas, bangle pieces, bi-conical beads and hub bed wheel, etc. Apart of these, agate, carnelian and steatite beads were also found.

The village Farmana is located about 12 km north of Meham in the Rohtak district of Haryana state. The archaeological site is about 4 km west of the village on the left side of the Farmana-Seman road. This site is locally known as Daksha Khera. This site falls in the revenue jurisdiction of three villages, viz. Farmana, Seman and Bhaini Chanderpal. The major portion of this site falls in the village of Farmana The present author. during his survey, collected bi-chrome pottery and chocolate slip ware, some sherds with graffiti marks of Early Harappan period, Harappan pottery. Late Harappan pottery, PGW and Early Historical pottery. The Mature Harappan pottery includes some painted sherds. Besides pottery, the antiquities from this site are a complete spearhead of copper. beads of agate. lapis lazuli. carnelian. faience. steatite and terracotta.[8]

The village Mitathal is located in the Bhiwani district of the Haryana state. The archaeological site is further located about 1.5 km north of the village on the left bank of a canal. The site was discovered and taken up for the vertical excavations.[9] The site spreads over an area of about 18 hectares and has yielded the remains of Early Harappan, Mature Harappan, Late Harappan and Historical periods. During the explorations, some fragments of painted Harappan pottery were collected.

Bead Making-

Bead making in the Harappan culture incorporates the use of a very varied range of raw materials, such as semi-precious stones, steatite, faience, and metals, such as copper or bronze, gold and silver. In view of the ubiquity of beads at Harappan sites, it would appear that beads were a necessary concomitant of the aesthetic life of the Harappan people. When attempting to study the technological aspects of bead making, it becomes necessary to separate the discussion largely according to raw materials, as each raw material envisaged a different means of procurement, processing and working to achieve the final form. Hence, we may use the arbitrary division, as mentioned earlier, that of stone beads, of steatite, of faience and of metals. It would probably be more relevant to consider faience and metal beads as subsumed within the crafts of faience production and metal working, respectively. Here, we will only deal with stone and steatite beads. For semi-precious stones, mining of minerals may have been undertaken. In procuring stones for the present-day Cambay bead working industry, mineshafts are dug into the ground, to locate the good quality stones, which are quarried. Modern mines are roughly 4-4.5 m deep. It, however, appears that in the area, in Gujarat, agate could be picked up from the Processing of the raw material could be done at the source area itself or at the production area of objects, or at both loci.

The two loci could be one and the same. Observing present-day parallels for stone bead production, it appears that blocks of stones were chipped to expose some of the colour of the mineral, and if satisfactory, the material was sent for further working. Stones are first exposed to the sun for six to eight weeks and then given heat treatment through two possible techniques. In one, stones are placed on a layer of ash and these are covered with another ash layer over which fuel is placed. Heating is done for two days. In the second method, the stones are put in old earthenware pots, in whose bottoms holes are broken, placed with necks facing downwards. Fuel is piled all around and the whole fired for one day. The heat treatment does not end at this stage. Repeated baking brings out the colour of agate and is undertaken at various stages of the production process. The temperature necessary for the colour transformation is around 300 to 4500 C. The production of beads is divided into different stages or processes. For disc-shaped beads, the initial stage involved the removal of roughly flaked blanks, which were then further finely flaked to shape them. These then had holes bored in them with the help of drills of stone or perhaps pointed metal instruments. The final stage envisaged grinding of the perforated blanks to finally shape and smooth then. The basic tools required for bead making could have been of stone or metal. It is quite possible that a large number of tools could have been of stone, despite the existence of metal in this period. Moreover, wood could also have been used for some tools and accessories, as attested by the Cambay drillers' craft A heating facility was also essential. Among stone beads, carnelian needed to be heated to bring out the colour of the stone. Often this was done at various stages of the

manufacturing process. Steatite, too, needed to be heated to harden the beads. probably after the beads were cut from the parent material. It is unlikely that high temperatures were required for the heat treatment of stone and steatite. Very elaborate heating facilities would not have been required

Metallurgy·

Metallurgy is a significant craft considering the period we are concerned with, when metal craftsmen were gaining experience and the craft was evolving into sophistication Some information may be included about the use of gold and silver which were largely utilized for making ornaments, but also as in the case of silver some rare vessels. A list of objects made out of silver and gold is given below. Manufacturing objects out of these metals probably involved the hammering of these metals first into sheets, and molding these sheets onto cores to form objects. Thus, we have beads, conical head ornaments, bead caps and fillets. Silver was also hammered and shaped into jewelry. Gold and silver were also sometimes cast, as seen by the globular gold beads and rough silver pieces found in Hoard I at Mohenjodaro.9

Seal Making

Steatite was used as raw material for the production of seals. Steatite was used as found or in the form of steatite powder, compressed into blocks. Some seals, probably made from compressed powdered steatite have not survived burial well. Steatite is a soft stone well-suited for seal carving, but it tends to split along cleavage lines, thus requiring immense care in its cutting and shaping. It would appear, that considerable skill would be required for the initial shaping 'Of the seal itself apart from the expertise required for the carving of the symbols (the pictorial representations) on the seals, a high degree of literacy would be necessary for the delineation of the signs. The seal maker would have to be an artist to deal with the numerous representations that are found on Harappan seals: representations of the 'unicorn', short horned bull, rhinoceros, tiger, elephant, hare, composite animals and depictions of scenes that are rarer than the animal symbols. Differences in delineation of animal symbols suggest stylistic trends or variations in skill. Inexperience in carving the symbol is seen in seal No. 3817, and problems with the signs are seen in two examples from Chanhudaro. As for the signs, it appears that roughly 417 signs belong to the Harappan script though this number could vary, if signs are classified into basic signs and their variants. The above discussion does give some indication of the tools required for the craft of seal making. A saw or knife, preferably of metal would have required to carve out the seal shapes from the parent material. A similar tool would have helped to form the boss on the reverse of seals. For carving out the signs and symbols on the seal, a burin could have been used or awls or drills. From some unfinished examples, it appears that pointed instruments were used to first outline the figures and then · work further. For putting in the final details pointed or hollow drills were perhaps used.

The late Harappan period too reveals vast differences in craft products as contrasted with the Mature Harappan period. At Jhukar in Sind, steatite beads, a lapis lazuli bead, a green felspar bead, a jasper bead, an ivory pin, a copper spearhead and' chert cores and flakes were found. The Jhukar occupation at Chanhudaro reveals seal amulets which with only a few exceptions are coarsely and roughly made. They reveal no characters or pictographs and are mostly of terracotta. Very few metal objects were found at Chanhudaro in the late occupation (Mackay 1943: 188-89) while beads were mostly of terracotta and faience. At Harappa the post-Harappan culture termed as Cemetery H. revealed primarily pottery. Cemetery H culture sites were also noted in the Bahawalpur regions where disappearance of the characteristic Mature Harappan artifacts is evident. Further to the east, the late Harappan period is known at Mitathal as the Mitathal II B period. In the surrounding area. this period is associated at a number of sites with the Degenerate Siswal Ware.[10] At Mitathal, in the II B period, inferior pottery, household objects and ornaments are noted, Cubical stone weights are replaced by discoid weights. A celt, a "parasu" and a ring comprise the metal objects.[11] 34 beads were found in this phase, including 3 of agate, 2 of carnelian, none of faience, 3 of paste and 17 of terracotta.[12] A large number of faience bangles were found.[13] This reliance on faience was noted by[14] who stated this to be the main material used in the late phase of the Harappan culture. Most other materials such as semi-precious stones, shell, metal and especially steatite became rare.[15]

However it must be remembered that metal is a material highly amenable to recycling and it is likely that some Harappan artifacts were reused by the late Harappans. It is clear that there is a significant change in the form and quantity of manufactured products in. the Mature Harappan period as contrasted with the earlier and later periods. This increase in the variety and technological attainments of the Mature Harappan craftsmen in a reflection of·the expansion of consumption. The production of seals and weights reflects the growth of specialized functionaries using these objects while a number of other craft products appear to have used by a restricted proportion of the population. According to Mature Harappan craft products,reflect the desire of the consumers for crafted objects produced with much expenditure of labour.

❐

***References**:*

1. *pandey, dr. rakesh kumar, bhartiya puratattv, Madhya Pradesh hindi granth akadami, Bhopal, 1996, pg. 113*
2. *ibid, pg 113*
3. *Dangi, Vivek and Akinori Uesugi, A study on the Harappan Painted Pottery from the Ghaggar Plains, Puratattva, Number 43, Indian archaeological society, New Delhi, 2013, Pg. n. 195*
4. *ibid, Pg. n. 196*

5. *ibid, Pg. n. 203*
6. *Suraj Bhan and Shaffer, Excavation at Mitathal (1968) and Other Explorations in the Sutlej-Yamuna Divide, Kurukshetra University, Kurukshetra, 1978, pg. n. 59-68*
7. *Dangi 2006: ettlement Pattern of Meham Block (Rohtak), Unpublished M.Phil Dissertation. Kurukshetra University. Pg. n. 21-22*
8. *ibid, pg.n. 17*
9. *Suraj Bhan 1975*
10. *Marshall, S.J., Mohenjodaro and Indus Civilization, London, 1931, Pg. n. 519*
11. *Suraj Bhan 1975: 117*
12. *Ibid, 17*
13. *Ibid, 70*
14. *Ibid, 76*
15. *Dikshit, K.N., The Late Harappan in North India, Frontiers of the Indus Civilization, New Delhi, 1984, pp. 265*

पूर्वदेवा– सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
वर्ष 28, अंक 111, अक्टूबर–दिसम्बर, 2022 पृ. 152–160

UGC Care Listed Sl.No.266
ISSN 0974 -1100

XINJIANG CONFLICT
CHINA'S REPRESSIVE POLICY AGAINST UYGHURS

Ashutosh kumar Singh
Research Scholar, Political Science Deptt., Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
E-mail : ashutoshks@bhu.ac.in Mob - 8853656471

China in the 21st century is competing with the global powers in economic growth, military power, technological innovations, and strength in manufacturing. Indeed, the country's economic growth over the past four decades—often described as a "miracle"—has lifted significant proportions of the population out of poverty. At the same time, the Chinese government is facing criticisms, specifically from the western world and other democracies, for its authoritarian policies. These include its repressive policy on the Uyghurs of Turkic heritage living in the Xinjiang Autonomous Region in northwest China.

XINJIANG CONFLICT

The name "Xinjiang", which literally means "New Frontier" or "New Border", was given during the Qing Dynasty. It is home to a number of different ethnic groups including the Uyghur, Han, Kazakh, Hui, Kyrgyz, and Mongol. The Xinjiang conflict known as the Uyghur–Chinese conflict is an ongoing ethnic conflict in China's far-northwest autonomous region of Xinjiang. It is centered around the Uyghurs, a Turkic minority ethnic group that constitutes a plurality of the region's population. The Uyghurs are an ethnic minority group of over 12 million in Xinjiang, which shares borders with the central and south Asian countries of Mongolia, Russia, Kazakhstan, Kyrgyzstan, Tajikistan, Afghanistan, Pakistan, and India. The Uyghurs are Turkic speaking and share civilizational roots with Central Asia. The community is listed among the 55 ethnic minorities officially recognized by China to be in its territory, who do not belong to the majority Han-Chinese and comprise about 8 percent of the country's total population.

Among these ethnic groups, the Hans and the Uyghurs (Turkish and Muslim populations) are the two major ethnic groups. Xinjiang is home to more than 8 million

people and much of the tension in the region is sourced in the claims of some Uyghur separatist groups for greater political and religious autonomy and also in resentment at the growing presence of Han Chinese domination— China's largest ethnic group —that they claim limits their economic opportunities.

Xinjiang's large Muslim and Turkic population has viewed itself as religiously and ethnically distinct from the Han Chinese society. The Uyghurs themselves comprise just under half of Xinjiang's population, but with the addition of Kazaks and Kyrgyz, the number of Turkic Muslims rises to over half of the total. The Uyghurs have not, until the past few generations, shared a strong sense of common destiny. Increasingly, however, they have come to adopt a consolidated identity as "Uyghurs." These Uyghurs today feel that Chinese policy has ignored them or, worse, consciously worked against them and feel deeply threatened. Xinjiang has long had a rebellious and autonomous streak, with the indigenous ethnic Uyghurs clashing with the authorities. There was a spike in demonstrations and demands for independence in the early 1990s as the collapse of the Soviet Union gave birth to new nations, but these were rapidly crushed. Besides ethnicity and cultural dissonance, tensions are seen as rooted also in economic factors — as China's development has lifted cities like Kashgar and Urumqi, young, qualified Han Chinese from Eastern regions have come to Xinjiang, taking the most lucrative jobs and triggering resentment among the indigenous population. Uyghurs allege the Chinese state has been repressive, clamping down on mosques and religious schools in 2014, some government departments prohibited fasting during the month of Ramzan.

Uyghurs think that this unequal division of wealth favors Han Chinese at their expense. Those involved with the development of the province's wealth are mainly Han Chinese, rather than Uyghurs, and the profits go mainly to Beijing. That part of the province's wealth that does come back to Urumchi goes to support many projects that further threaten the homelands and environments where Xinjiang's indigenous peoples have lived through the centuries. The growing discontent amongst this section of the province regarding the economic growth as viewed by them, and also the harmful implications this can potentially have on their existence as a distinct ethnic group.

CHINA'S REPRESSIVE POLICY AGAINST UYGHURS

Uyghurs are the majority in Xinjiang. Over the years, the systematic demographic alteration carried out by the Chinese government has caused a decline in their numbers in proportion to other ethnic groups living in the region. The census carried out in 2010 showed Uyghurs as comprising 45.85 percent of the total population in Xinjiang. The other groups such as Han account for 40.48 percent, Kazakhs 6.5 percent, Hui 4.5 percent, and other ethnicities account for 2.67 percent.[1] In 2017, Beijing had put an estimated 2 million Uyghurs in detention centers, often referred to as "concentration camps" by western media. A vast majority of the

detainees are Turkic-speaking Uyghurs. Most of them are detained without charges and often kept inaccessible to their families. Many were detained for traveling to or contacting people from any of the 26 countries that China considers "sensitive".

Lindsay Maitland, a researcher at the Council on Foreign Relations has noted, that every Islamic practice has been deemed extremist in Xinjiang. He argues that Outside the camps, Xinjiang is a living example of how a police state utilizes sophisticated technologies such as artificial intelligence (AI), including its application in facial recognition. Although surveillance is widespread across the country, it has acquired a lethal dimension in Xinjiang.[2] Spyware is installed on the mobile phones of the Uyghurs to keep a tab on their online activities. Individuals can be arrested and detained for charges such as sharing Quranic verses on WeChat or installing WhatsApp on their devices.

The security establishment in Xinjiang has divided the cities, towns, and villages into small grids, with each 300 square meter-area containing not more than 500 people. Each grid has a police station where individuals are stopped for an identity check, biometric collection, and iris scan, and authorities download content from their mobile phones for technical intelligence analysis.[3] The DNA, fingerprints, blood types, as well as voice samples of millions of Uyghurs between 12 and 65 years old, have been collected. Apart from the electronic surveillance, the CCP has deployed some one million civilians from the majority-Han population in Xinjiang to keep a close watch on the activities of the Muslim families and report possible suspicious behavior. This includes fasting in the holy month of Ramzan, offering prayers, and keeping copies of the Quran in their home.[4] The Chinese government is carrying out the mass detention of Uyghurs in an attempt to homogenize their cultural, religious, and political beliefs in accordance with those of the Han majority. According to human rights groups, it has been undertaking widespread and all-pervasive surveillance; forced sterilization of women; torture and execution inside the detention centers; targeted harassment; and forced labor in Xinjiang.[5] Chinese authorities conducted raids in the areas populated by the Uyghur Muslims in Xinjiang to find hidden religious texts, DVDs, audio cassettes, and other objects containing religious material. The campaign has since evolved into one of the worst forms of repression the world has witnessed in the 21st century.

VIOLATION OF INTERNATIONAL NORM

China is a signatory to the International Covenant on Civil and Political Rights (ICCPR) and International Covenant on Economic, Social, and Cultural Rights (ICESCR)— both UN conventions meant to protect an individual's essential rights. Article 7 of ICCPR, which was adopted by the UN General Assembly on 16 December 1966, bans torture or cruel treatment of citizens. It also prohibits the conduct of medical and scientific experiments involving human beings without permission. The Chinese authorities in Xinjiang are doing in clear violation of religious

rights, freedom of the press, and civil and political rights of Uighur communities. China signed ICESCR in 1997 and ratified it in 2001. How China is carrying out the cultural cleansing of Uyghurs and imposing the Han culture on the population violates the conventions of ICESCR. Brainwashing and enforcing allegiance to the communist doctrines on the population is a process violative of Articles 2, 3, and 26 of the convention. Preventing the Uyghurs from observing their religious rituals violates Article 27 of the ICESCR.

CHINA RESPONSE

China justifies its Repressive policy in Xinjiang by saying it is meant to curb separatism, extremism, and terrorism. To be sure, there is extremism and terrorism in Xinjiang, and the region has witnessed violence in the past.[6] However, state response targeted at the entire population has been vastly disproportionate. In the past, China would blame a section of Uyghur extremists for the incidence of violence. Since 9/11, China has used the US war on terror as an excuse for its Secretion and ethnic cleansing of the Uyghur population. When reports of China's mass detention of Uyghurs first came out in the Western media in 2017, the government propaganda machinery's strategy was to deny the existence of the detention camps.[7] On 18 May 2018, the Associated Press reported that the Chinese foreign ministry denied the existence of the camps and stated that the ministry "had not heard of this situation

Eventually, amidst a relentless media coverage of the existence of the camps and the ill-treatment of the detainees, China shifted its strategy. Satellite images accessed by Western media exposed the scale and size of these detention camps and monitored the vast expansion of these facilities over the years. After earlier denials of the very existence of the camps, Chinese officials eventually had to admit to it but referred to the facilities as 're-education camps' or schools meant to curb radicalization and terrorism. Shohrat Zakir, the party chairman of Xinjiang claims these "schools" were meant to eliminate the "seeds of terrorism" and that they were "vocational school-style training centers for eliminating the soil for the survival of terrorism".[8] Xinjiang authorities have repeatedly asserted that the detainees are provided free meals and accommodation, and are being given skills development training. The Global Times published an editorial lashing out at the western countries for their criticism of governance in the Xinjiang region. The editorial asserted that China's aim is to prevent Xinjiang from becoming "China's Syria or China's Libya."[9] The editorial stated: "Xinjiang is operating under the rule of law and ethnic unity. As business recovers, the region's future is promising." The mouthpiece called out the western media outlets, suggesting that the criticisms only meant to provoke trouble in Xinjiang and "destroy the hard-earned stability in the region." Lauding the strong leadership of the Chinese government, the newspaper claimed that the actions of the government were justified under Chinese law and were instrumental in bringing about stability in the region

Chinese media have often labeled Western criticism of its government's policy in Xinjiang as a "conspiracy" and "misinformation."[10] An editorial in 2021 in China Daily stated: "This was a necessary and justified response by China to the troublemaking of some anti-China forces in the US and other Western countries who have fabricated rumors and lied to distort what China is doing to combat extremism and terrorism in Xinjiang. Thanks to the effectiveness of these efforts to raise community resistance to extremist ideology, people of all ethnic groups and religions in Xinjiang enjoy peace and prosperity. But these efforts to safeguard people's lives and livelihoods and maintain peace and stability in the region are being deliberately misportrayed by those hoping to foment unrest in the region to turn it into a pressure cooker creating internal pressure within China. Similarly, Chinese officials have used the issue of religious extremism and terrorism to justify the mass detention and suppression of its Muslim population. They suggest that the re-education camps have succeeded in weaning the youth from the extremist path and "provided them with employment training for a better life."

A report published by Human Rights Watch in 2001 made observations that the crackdown on religious activity dated back to 1998 as government orders ensured that only government-sanctioned mosques, imams, and schools can operate. The regulations made it mandatory for the local government to ensure that the imams stood on the side of the government and that records were maintained on their ideological position. In some cases, underground mosques which were not certified by the government were razed to the ground. These events point to the fact that from the very beginning, Beijing's real target was not the separatist or terrorist element of the population, but the practice of Islam itself. The abhorrence for Islam is made more evident in a white paper issued by the Chinese government in July 2019 which claims that the Uyghurs were merely forced to accept the religion. The paper gives important insights into the CCP's historical interpretation and thinking on Islam and those who practice the religion. The publication was an attempt to spin the global narrative in favor of Beijing ahead of the UNHCR session in Geneva the same year. Recently released China's white paper titled "Vocational Education and Training in Xinjiang" is also an attempt to justify its ongoing treatment of China's Uyghur Muslim minority. It is said that terrorism and extremism are the common enemies of humanity and the fight against terrorism and extremism is the shared responsibility of the international community.

GLOBAL RESPONSES

China's repressive policy in Xinjiang has triggered strong criticism predominantly from the western countries. Leaders of the US, UK, Australia, New Zealand, and countries of the European Union (EU) have called out China on its campaign against the Uyghurs.[11] The US has called it "one of the worst human rights crises of our time" and a "stain of the century."[58] In July 2020, it imposed sanctions on

two CCP officials and a Chinese company for its involvement in human rights abuses against the Uyghurs. Months later, the Trump administration blocked imports of commodities being produced by five companies in Xinjiang that are linked to coercive labor. The EU has adopted two resolutions, in 2019 and 2020, condemning the mass detention and calling upon European companies to end ties with entities in Xinjiang linked with forced labor.

In July 2019, the UK, on behalf of 22 nations, at the United Nations urged China to end its "mass arbitrary detentions and related violations." Signed by western democracies and other countries like Japan, the collective letter stated: Credible reports of mass detention, efforts to restrict cultural and religious practices, mass surveillance disproportionately targeting ethnic Uyghurs, and other human rights violations and abuses in the region.[12] On 29 October 2019, these countries reiterated their stand at the Third Committee Dialogue of the Committee for the Elimination of Racial Discrimination. They demanded access to accurate information and pressed Beijing to allow UNHCR and UN Special Procedures "immediate unfettered, meaningful access to Xinjiang." A similar statement was issued by Germany in 2020, co-signed by 38 countries. Notably, 16 more countries joined the club of 22 democratic countries which had condemned China the previous year.

ISLAMIC COUNTRIES

In the July 2019 statement of western countries condemning China's actions in Xinjiang, 37 countries—half of which were Muslim-majority—came to China's defense. In a joint statement, they lauded Beijing's efforts in counterterrorism: Faced with the grave challenge of terrorism and extremism, China has undertaken a series of counter-terrorism and deradicalization measures in Xinjiang, including setting up vocational education and training centers. Turkey was once the only Islamic nation country that had openly called out China on its Xinjiang policy. In February 2019, Turkish Foreign Minister, Mevlut Cavusoglu, urged China to make a distinction between terrorists and innocent people and to respect human rights and freedom of religion. He demanded "full protection of the cultural identities of the Uighurs and other Muslims." The government of Malaysia's stance on the Uyghurs issue has decided "not to interfere" in the internal affairs of China and has not publicly condemned Beijing for its policy. Saudi Arabia is supporting China's policy on Xinjiang and stated that the country has the right to "carry out anti-terrorism and de-extremization work for its national security."[13]

INDIA'S REACTIONS

India is most notable among those who have maintained a conspicuous silence. Home to the world's second-largest Muslim population and priding itself as the world's largest democracy, India has hardly uttered a word of significance on the plight of the Uyghurs. This, despite the fact that China has repeatedly sought to needle India on its internal affairs or support elements inimical to India's interests.

In the aftermath of the abrogation of Article 370 in August 2019, for example, China was the only country that backed Pakistan's efforts to internationalize the Kashmir issue at the UN Security Council.[14] For a decade, China ensured a stalemate at the UN on the designation of Masood Azhar as a global terrorist. Even after the Pulwama suicide attack in February 2019, China continued to veto the decision on Azhar. More importantly, China is among the three nations that have come to Pakistan's rescue at the Financial Action Task Force (FATF), blocking efforts to blacklist the county for its state support of terrorist outfits in its territory.

China's double standards on terrorism are being exposed globally. Internally, it is carrying out a "cultural genocide'' in the name of counterterrorism; at the same time, it has no qualms in being an accomplice to terror activities carried out on Indian territory. This is reason enough for India to take an unequivocal stand on the issue. Chinese state media and officials, for instance, do not shy away from commenting on the Citizenship Amendment Act passed by the Indian parliament – suggesting the Indian law could bolster separatism in Xinjiang. In 2016, India decided to grant a visa to Uyghur dissident Doklun Isa in retaliation for Beijing's technical hold-up on the designation of Masood Azhar as an international terrorist. However, within days, New Delhi canceled Isa's visa without explanation, inviting criticism domestically and from the Uyghur dissident who claimed that India has capitulated under Chinese pressure. Allowing Doklun Isa to address a seminar of anti-China dissidents would have sent a much-needed signal to China – that New Delhi will not tolerate backing Masood Azhar and will give an appropriate response for every transgression. By canceling the visa, India lost an opportunity to take a principled stand on the Uyghur issue in consonance with its democratic values and also signaled that China had the upper hand in bilateral relations.[15]

Uyghur dissidents have repeatedly requested India to take a proactive stance. In 2020, Doklun Isa warned India to be wary of Beijing's conduct in the bilateral relationship, pressing New Delhi to find its voice to speak up for human rights and demand that China ceases its crime against humanity that the Uyghurs are being subject to. The chorus for having a clear stand on the issue has grown louder after Chinese incursions in eastern Ladakh and the Galwan clashes which led to causalities on both sides. After the border clashes, Isa hoped the friction will make India realize that silence is no longer an option and called on India to speak up on the massive violation of the Uyghurs' rights'

Analysts note that India's hesitation to raise the issue stems from China's sensitivity to what Beijing considers an "internal matter." China has repeatedly sought to play both active and passive roles on issues that India considers to be an "internal matter". From raising the Kashmir issue at the UNSC to supporting terrorist actions in the country, Beijing's meddling has gone too far. If China had shown a modicum of consideration for India's internal issues or displayed some reciprocity on issues sensitive to India, maintaining neutrality on Uyghurs would make sense.

CONCLUSION

India should join other democratic nations on the issue of China's Xinjiang policy. Such an endeavor will certainly have repercussions, but it is in India's interest to test China's resolve on this issue and perhaps use it as leverage to ensure reciprocity from Beijing. There are many ways in which India could engage with the matter. Taking it before the UN may not be the best way to go forward, as it risks increased activism from China on Kashmir. Joining the global alliance of democratic countries will not be a prudent option. But a first step can be for India's political leaders to issue statements condemning Beijing. New Delhi can also provide an avenue for Uyghur activists to raise their voices. Such an effort should begin with granting these activists visas and permission to call the attention of the Indian public to their plight.

New Delhi can utilize its diplomatic prowess in its neighborhood to nudge countries such as the Maldives, Bangladesh, and Afghanistan to take a stand. Like India, these countries have officially remained silent. Given the anti-China attitude in the new government of the Maldives, which is also a Muslim-majority country, India's support might help its leaders to be more vocal on the issue. If New Delhi manages to turn around Dhaka and Male, there will be tremendous pressure on Islamabad to assuage domestic concerns.

There is a lesson to be learned on how India played the Tibet card during the border confrontation in Ladakh. The deployment of the Special Frontier Force (SFF), which draws its cadre from the Tibetan diaspora, served a dual purpose of playing into the psychology of China's military and raising stakes for internal security in Tibet. By exploiting the internal weakness of China, India delivered a strong message. Given the fraught relations between the two countries and China's increased belligerence, India would greatly benefit from adding the Uyghur card to its diplomatic arsenal

❐

References:

1. *Toops, Stanley (2016), "Spatial Results of the 2010 Census in Xinjiang", Asian Dialogue,7 March 2016.*
2. *Maizland, Lindsay (2021) "China's Repression of Uyghurs in Xinjiang", Council on Foreign Relations, 1 March 2020*
3. *Dwyer, Arienne M (2005) "The Xinjiang Conflict: Uyghur Identity, Language Policy, and Political Discourse", East-West Centre Washington.*
4. *Kang, Dake& Wang, Yanan (2018) "China's Uighurs Told to Share Beds, Meals with Party" Associated Press, 1 December 2018.*
5. *Zand, Bernhard (2019) "Chinese Oppression of the Uighurs Like 'Cultural Genocide'," DER SPIEGEL, 28 November 2019*
6. *Millward, J.A (2017) "Eurasian crossroad: a history of Xinjiang", New York, Columbia University Press.*

7. *Shih, Gerry (2018) "China's Mass Indoctrination Camps Evoke Cultural Revolution," Associated Press, 18 May 2018.*
8. *Sharp, Andrew (2019) "Xinjiang Denies Existence of Uighur Detention Camps in China" Nikkei Asian Review,12 March 2019.*
9. *Hou, Shi-Ren (2018) "Protecting Peace, Stability Is Top of Human Rights Agenda for Xinjiang," Global Times, 24 March 2018.*
10. *Xinhua (2021) "Fact Check: Lies on Xinjiang-related issues versus the truth" Global Times,7 February 2021.*
11. *Pompeo, Michael R. (2018) "Secretary of State Mike Pompeo: Religious Persecution in Iran, China Must End Now," USA Today, 24 July 2018.*
12. *Westcott, Ben "22 Countries Sign Letter Calling on China to Close Xinjiang Uyghur Camps," CNN,11 July 2019.*
13. *Maza, Cristina (2019) "Saudi Arabia's Mohammed Bin Salman Defends China's Use of Concentration Camps for Muslims," Newsweek, 23 February 2019.*
14. *Chinoy, Sujan R. (2019) "Why China Changed Its Stand on Masood Azhar," The Hindu, 22 May 2019.*
15. *Pant, Harsh V. (2016) "The Dolkun Isa Visa Affair: India Mishandles China, Once Again," The Diplomat, 28 April 2016.*

पूर्वदेवा

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी की सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

'पूर्वदेवा' के प्रकाशन का उद्देश्य मुख्यतः भारतीय समाज व्यवस्था में व्याप्त मानवीय विषमताओं के उन्मूलन, दलितों में मानवीय–अस्मिताबोध एवं अधिकार–चेतना उत्पन्न करने और तद्जनित सामाजिक परिवर्तन की भूमिका तैयार कर मानवीय मूल्यों की स्थापना के निमित्त ऐतिहासिक एवं सामाजिक आधार पर विविधपक्षीय, तथ्यपूर्ण एवं शोधपरक अध्ययन एवं चिंतन को प्रवर्त्त करना है। जिससे कि दलित, सर्वहारा वर्ग का सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षणिक आदि क्षेत्रों में समुचित विकास एवं मानवीय सम्मान का मार्ग प्रशस्त किया जा सके।

अतएव, इस हेतु विद्वान लेखकों, अनुसंधानकर्ताओं से मौलिक लेख, शोध आलेख एवं अनुभवजन्य, तथ्यपरक लेख, पुस्तक समीक्षाएँ प्रकाशनार्थ सादर आमंत्रित हैं।

- लेखको से आग्रह है कि अपने लेख सुवाच्य अक्षरों में टंकित **Word** एवं **Pdf** फार्मेट में ई–मेल द्वारा **E-mail: mpdsaujn@gmail.com** पर भेजें।
- लेख सामान्यतः हिन्दी में लिखे हों। विशेष स्थिति में अंग्रेजी भाषा में लिखे गये लेख भी स्वीकार किये जा सकेंगे। लेख अन्यत्र प्रकाशित नहीं होना चाहिये।
- सम्पादक मंडल कोकिसी भी लेख को प्रकाशन हेतु स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करने का पूर्ण अधिकार है।

पूर्वदेवा का सतत् प्रकाशन सुधी पाठकों एवं लेखकों के उदार सहयोग पर निर्भर है।
अतएव विशेष अनुरोध है कि पूर्वदेवा के ग्राहक बनकर, अपना आत्मीय सहयोग प्रदान करें।

ग्राहक शुल्क की दरें (**Rates of Subscription**) इस प्रकार हैं-

आजीवन शुल्क	संस्थागत रू.7500/-	वैयक्तिक रू.6500/-
वार्षिक शुल्क	संस्थागत रू.350/-	वैयक्तिक रू.300/-

Book Post

प्रति,

____

____

____

क्रयादेश एवं शुल्क सहित सभी प्रकार के पत्र व्यवहार का पता :

मध्यप्रदेश दलित साहित्य अकादमी

बाणभट्ट मार्ग, सेंट्रल स्कूल के सामने, उज्जैन(म.प्र.) 456010

म.प्र.दलित साहित्य अकादमी के लिये पी.सी बैरवा द्वारा
न्यू गुलाब प्रिन्टर्स, उज्जैन–से मुद्रित एवं बाणभट्ट मार्ग, उज्जैन(म.प्र) से प्रकाशित
सम्पादन– डॉ.हरिमोहन धवन

आर.एन.आई.रजिस्टेशन नं. 61954/95 ISSN 0974-1100